RNI Number : MPHIN/2016/70609

ISSN NUMBER : 2455-9814

वर्ष : 4, अंक : 16

जनवरी-मार्च 2020

मूल्य 50 रुपये

Dhingra Family Foundation USA

विभोम स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

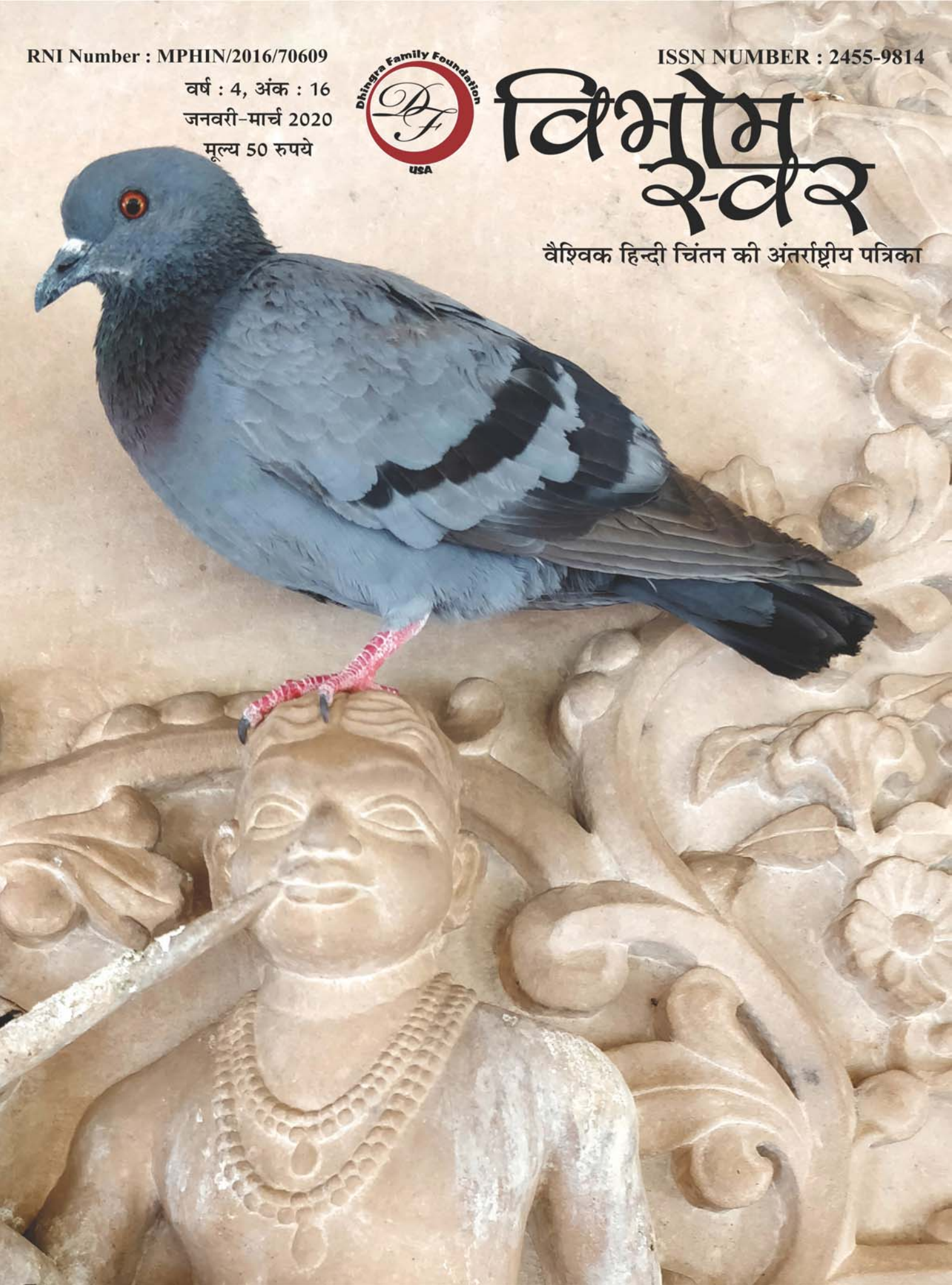

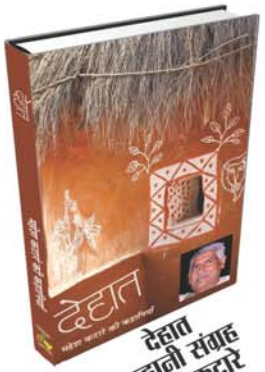

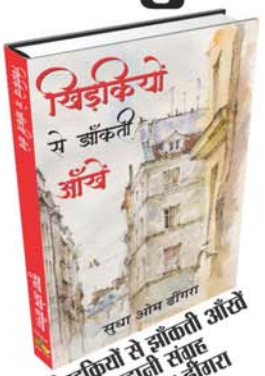

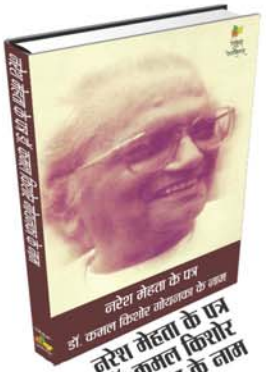

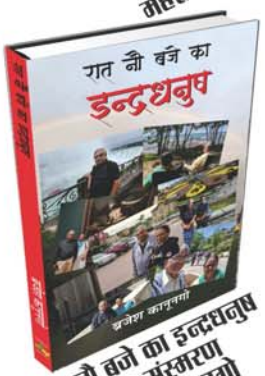

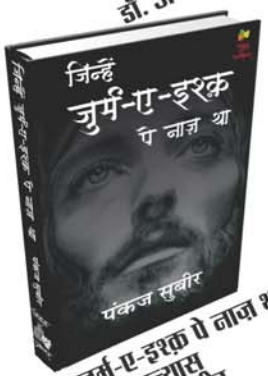

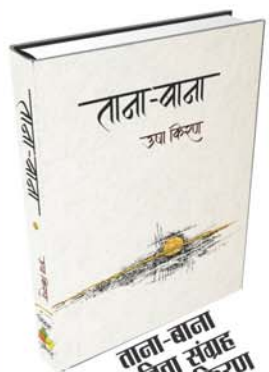

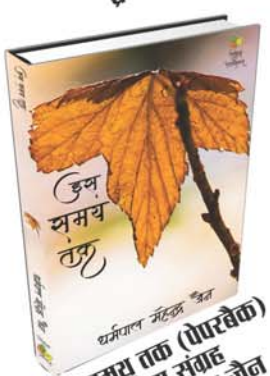

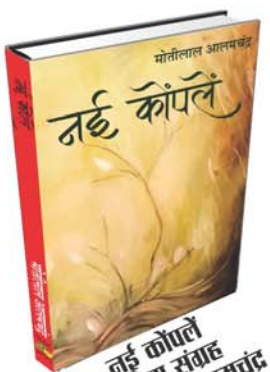

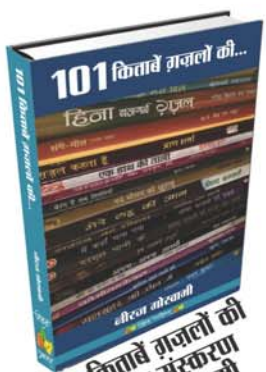

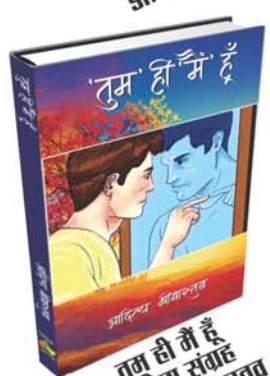

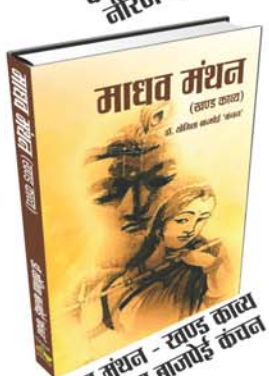

शिवना प्रकाशन - नई पुस्तकें
देह
उपन्यास
अचला नागर
देहात
कहानी संग्रह
महेश कटारे
नाच-गान
कहानी संग्रह
डॉ. उर्मिला शिरीष
खिड़कियों से झाँकती आँखें
कहानी संग्रह
सुधा ओम ढींगरा
नरेश मेहता के पत्र
डॉ. कमल किशोर
गोयनका के नाम
प्रेम की उम्र के चार पड़ाव
कविता संग्रह
मनीषा कुलश्रेष्ठ
रात नौ बजे का इन्द्रधनुष
यात्रा-संस्मरण
ब्रजेश कानूनगो
जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था
उपन्यास
पंकज सुबीर
प्रवास में आसपास
कहानी संग्रह
डॉ. हंसा दीप
पुकारती हैं स्मृतियाँ
कविता संग्रह
आनंद पचौरी
ताना-बाना
कविता संग्रह
डॉ. उषा किरण
इस समय तक (पेपरबैक)
कविता संग्रह
धर्मपाल महेन्द्र जैन
नई कोंपलें
कविता संग्रह
मोतीलाल आलमचंद
101 किताबें ग़ज़लों की
पेपरबैक संस्करण
नीरज गोस्वामी
हैश टैग ज़िंदगी
कविता संग्रह
श्याम चंदेले
तुम ही मैं हूँ
कविता संग्रह
आदित्य श्रीवास्तव
दिलफ़रेब
ग़ज़ल संग्रह
राजकुमार कोरी राज
मैं नास्तिक हूँ
उपन्यास
राजेश सोनवार
माधव मंथन - खण्ड काव्य
डॉ. योगिता बाजपेई कंचन
भूत भाई साहब
कहानी संग्रह
प्रियंका कौशल
शिवना प्रकाशन
शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट
कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने
सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan
शिवना प्रकाशन
की पुस्तकें सभी प्रमुख
ऑनलाइन शॉपिंग
स्टोर्स पर
amazon
flipkart.com
http://www.amazon.in
http://www.flipkart.com
Paytm
ebay
https://www.paytm.com
http://www.ebay.in
दिल्ली में पुस्तकें प्राप्त करें : हिन्दी बुक सेंटर, 4/5 आसफ अली रोड
फोन : 011-23286757 http://www.hindibook.com

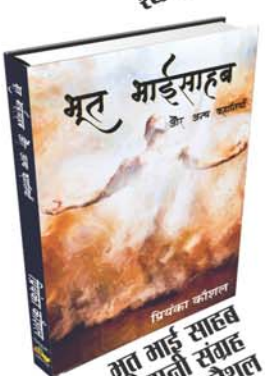

संरक्षक एवं प्रमुख संपादक
सुधा ओम ढींगरा

संपादक
पंकज सुबीर

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय
पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001
दूरभाष : 07562405545
मोबाइल : 09806162184
ईमेल : vibhomswar@gmail.com

ऑनलाइन 'विभोम-स्वर' :
http://www.vibhom.com/vibhomswar.html
http://vibhomswar.blogspot.in
फेसबुक पर 'विभोम स्वर'
https://www.facebook.com/vibhomswar
एक प्रति : 50 रुपये (विदेशों हेतु ५ डॉलर $5)
सदस्यता शुल्क
1500 रुपये (पाँच वर्ष)
3000 रुपये (आजीवन)
विदेश प्रतिनिधि
अनिता शर्मा (शंघाई, चीन)
रेखा राजवंशी (सिडनी, आस्ट्रेलिया)
शिखा वार्ष्णेय (लंदन, यू के)
नीरा त्यागी (लीड्स, यू के)
अनिल शर्मा (बैंकॉक)
क़ानूनी सलाहकार
शहरयार अमजद ख़ान (एडवोकेट)
डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी, सुनील सूर्यवंशी
तकनीकी सहयोग
पारुल सिंह

संपादन, प्रकाशन, संचालन एवं सभी सदस्य पूर्णत: अवैतनिक, अव्यवसायिक।
पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी।
समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर मध्यप्रदेश रहेगा।

विभोम-स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 4, अंक : 16, त्रैमासिक : जनवरी-मार्च 2020
RNI NUMBER : MPHIN/2016/70609
ISSN NUMBER : 2455-9814

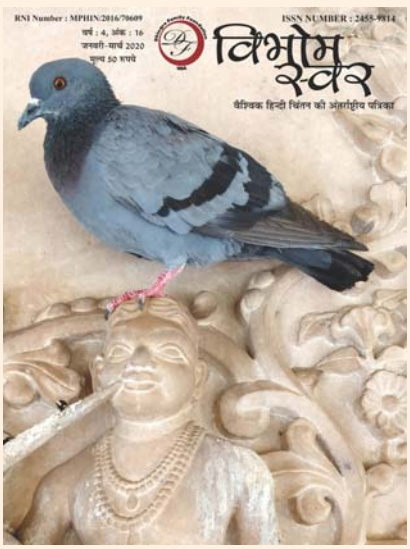

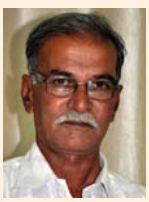

आवरण चित्र
राजेंद्र शर्मा बब्बल गुरु

रेखाचित्र
अनुभूति गुप्ता

Dhingra Family Foundation
101 Guymon Court, Morrisville
NC-27560, USA
Ph. +1-919-801-0672
Email: sudhadrishti@gmail.com

इस अंक में

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 4, अंक : 16,
त्रैमासिक : जनवरी-मार्च 2020

संपादकीय 5
मित्रनामा 7
साक्षात्कार
रचना श्रीवास्तव से सुधा ओम ढींगरा की बातचीत 10
कथा कहानी
डेरा उखड़ने से पहले...!
वन्दना अवस्थी दुबे 13
स्मृतियों के प्रश्नचिह्न
अंशु जौहरी 17
घास का मैदान
शेर सिंह 20
जॉन की गिफ़्ट
पुष्पा सक्सेना 24
सीप में समुद्र
कविता विकास 28
सीख
डॉ. पुष्पलता 33
तुम नहीं समझोगे!
राजगोपाल सिंह वर्मा 36
लघुकथाएँ
अधूरा लेख
ज्योत्सना सिंह 38
भीड़
जनगणना
पुखराज सोलंकी 42
बस अपने लिए
डॉ. संगीता गांधी 46
गिनीपिग्स
ड्रॉबैक
संतोष सुपेकर 49
भाषांतर
एंटीक फिनिश
मूल तेलुगु कहानी : अरुणा पप्पु
अनुवाद : आर.शांता सुंदरी 39
यह दूध तुम्हारा
मूल पंजाबी कहानी- कुलवंत सिंह विर्क
अनुवाद- डॉ. अमरजीत कौंके 43
व्यंग्य
एक्स इंस्पैक्टर मातादीन टेंशन में
अशोक गौतम 45
पांडेय जी मौसम और मौसिकी
लालित्य ललित 47
शहरों की रूह
मनभावन शहर सिडनी की कुछ गलियाँ
रेखा राजवंशी 50
यात्रा वृत्तांत
दर्रों की घाटी लद्दाख
संतोष श्रीवास्तव 53
हमारी धरोहर
शादी.....मेरी गुड्डी की
शशि पाधा 58
नाटक
राम की शक्ति पूजा
महाकवि निराला
डॉ. कुमार संजय 60
ग़ज़ल
नज़्म सुभाष 64
कविताएँ
प्रमोद त्रिवेदी 65
शिफाली पांडेय 66
रेखा भाटिया 67
सुमित चौधरी 68
सुमित दहिया 69
अमृत वाधवा 69
नव पल्लव
सुप्रीता झा 70
गर्भनाल
शुभ्रा ओझा 71
अनूठे जज़्बात
दर्शना जैन 74
दोहे
यूथिका चौहान 75
समाचार सार
शांति गया स्मृति सम्मान 76
हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी 76
ज्ञान चतुर्वेदी व्यंग्य सम्मान 77
खंडवा में पुस्तक चर्चा 77
शमशेर सम्मान 78
राष्ट्रभाषा भूषण सम्मान 78
हाउस ऑफ लॉर्ड्स 78
लघुकथा सम्मेलन 79
धर्मपाल महेंद्र जैन सम्मानित 79
कथाक्रम सम्मान 80
पुस्तकों का लोकार्पण 80
राष्ट्रीय व्यंग्योत्सव 81
सृजन संवाद 81
विमोचन समारोह 81
आख़िरी पन्ना 82

विभोम-स्वर सदस्यता प्रपत्र

यदि आप विभोम-स्वर की सदस्यता लेना चाहते हैं, तो सदस्यता शुल्क इस प्रकार है :
1500 रुपये (पाँच वर्ष), 3000 रुपये (आजीवन)। सदस्यता शुल्क आप चैक / ड्राफ़्ट द्वारा विभोम स्वर (VIBHOM SWAR) के नाम से भेज सकते हैं। आप सदस्यता शुल्क को विभोम-स्वर के बैंक खाते में भी जमा कर सकते हैं, बैंक खाते का विवरण इस प्रकार है :
Name of Account : **Vibhom Swar**, Account Number : **30010200000312**, Type : **Current Account**, Bank : **Bank Of Baroda**, Branch : **Sehore (M.P.)**, IFSC Code : **BARB0SEHORE** (Fifth Character is "Zero")
(विशेष रूप से ध्यान दें कि आई. एफ. एस. सी. कोड में पाँचवा कैरेक्टर अंग्रेज़ी का अक्षर 'ओ' नहीं है बल्कि अंक 'ज़ीरो' है।)
सदस्यता शुल्क के साथ नीचे दिये गए विवरण अनुसार जानकारी ईमेल अथवा डाक से हमें भेजें जिससे आपको पत्रिका भेजी जा सके:

नाम :— — — — — — — — — — — — — — — — — **डाक का पता :**— **सदस्यता शुल्क :**— — — — — — — **चैक / ड्राफ़्ट नंबर :**— — — — — — — — —
ट्रांज़ेक्शन कोड (यदि ऑनलाइन ट्रांस्फ़र किया है) :— — — — — — **दिनांक :** — — — — — — — — — — — — —

(यदि सदस्यता शुल्क बैंक खाते में नकद जमा किया है तो बैंक की जमा रसीद डाक से अथवा स्कैन करके ईमेल द्वारा प्रेषित करें।)

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय : पी. सी. लैब, शॉप नंबर. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001, दूरभाष : 07562405545, मोबाइल : 09806162184, ईमेल : vibhomswar@gmail.com

अगली पीढ़ी के लिए पर्यावरण और सोशल मीडिया के प्रति सचेत रहें

सुधा ओम ढींगरा
101, गाईमन कोर्ट, मोरिंस्विल
नॉर्थ कैरोलाइना-27560, यू.एस. ए.
मोबाइल : +1-919-801-0672
ईमेल : sudhadrishti@gmail.com

सत्य-असत्य, सही-ग़लत देश, काल में समय के परिवर्तन के साथ बदलते रहते हैं और हर युग में इन्सान अपनी सुविधानुसार इनकी परिभाषा गड़ता है। आधुनिक युग में जीवन मूल्य, नैतिकता, सामाजिक माप-दण्डों में परिवर्तन बड़ी तेज़ी से आ रहे हैं। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता, कि आज का सत्य है सोशल मिडिया। उस पर परोसी जा रही सामग्री सही या ग़लत है, कोई जानना नहीं चाहता। वह सामग्री आज का सत्य और भविष्य का इतिहास बनती जा रही है। सोशल मिडिया पर झूठ बड़े ढंग से परोसा जाता है और उसे बार-बार दोहराया जाता है। दोहराव मस्तिष्क की ग्रंथियों पर उसी तरह असर करता है जिस तरह सुनार सोने पर टिक-टिक करते हुए उस पर प्रहार करता है और सोने को अपने मन मुताबिक गहनों में परिवर्तित कर लेता है। सोशल मिडिया पर झूठ को इसी नीति के तहत सच की तरह मनवाया जा रहा है। आजकल पूरे विश्व में इसी नीति का बोलबाला है। आतंकवादी हों और राजनीतिज्ञ सभी इस दौड़ में दौड़ रहे हैं। इससे कई बार सच झूठ लगने लगता है।

अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रम्प के कई झूठ पकड़े गए हैं पर फिर भी वे सोशल मिडिया पर डट कर झूठ बोलते हैं क्योंकि वे जानते हैं, उनके बार-बार एक ही बात कहने से लोग उसे सही मानते हैं। अमेरिका का फॉक्स टीवी चैनल भी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रम्प की बातों का समर्थन कर उन बातों को लोगों के दिमागों में भरता है और उन्हें कुछ और सोचने के काबिल ही नहीं छोड़ रहा। सच्चाई से दूर रख उनका ब्रेन वॉश किया जाता है। स्वदेश के भी बहुत से चैनल अपनी-अपनी विचारधारा का समर्थन करते हैं। सही तथ्य देने की बजाय बस विचारधारा का ही समर्थन किया जाता है, जिस विचारधारा के वे समर्थक होते हैं या जिस विचारधारा के वे चैनल होते हैं। पूरे विश्व में सोशल मिडिया का दुरुपयोग हो रहा है और सभी इस बात से परिचित भी हैं, फिर भी पता नहीं क्यों आमजन इस पर लिखी या कही गई हर बात पर विश्वास कर लेते है, कभी समय निकाल कर तथ्यों की पुष्टि करके सच जानना की कोशिश नहीं करते।

मनोविज्ञान भी मानता है कि अगर किसी बात को बार-बार मस्तिष्क में डाला जाए तो वह सच लगने लगती है। स्वार्थी तत्व तो हर समय अपनी हरकतें करते रहते हैं, पर पढ़ा-लिखा वर्ग तो इसके प्रति सचेत रह सकता है। पर जब बुद्धिजीवी ही इस दुरुपयोग के प्रति उदासीन हो जाएँ तो अज्ञानी व्यक्ति या कम पढ़ा-लिखा तो इसके दुष्चक्र में आएगा ही।

अमेरिका के नेटिव इंडियन जिन्हें रेड इंडियन भी कहा जाता है, उनके जीवन दर्शन में यह माना जाता कि अगली पीढ़ी की धरोहर के हम रखवाले हैं। हमारे पुरा ग्रंथों का दर्शन भी कुछ इसी तरह का है। विचारणीय प्रश्न है कि क्या हम आगामी पीढ़ी की धरोहर के रखवाले बन रहे हैं। साहित्यकारों की रचनाओं से छेड़छाड़ हो रही है। महादेवी, निराला, पंत इत्यादि साहित्यकारों की रचनाओं से खेला जा रहा है। उनके नाम पर घटिया रचनाएँ चेप कर उनकी रचनाएँ बना कर पेश की जा रही हैं और उनकी रचनाएँ किसी और के नाम पर। इसी तरह इतिहास और पूरा ग्रंथों तक को तोड़-मरोड़ कर पेश किया जा रहा है। ऐसा क्यों

वर्षा भी भरपूर हुई हो और कोई पेड़ ठीक जलाशय के पास ही लगा हो, फिर भी वह सूख जाता है। जीवन भी ऐसा ही होता है, यहाँ सारे सुखों के बाद भी कभी-कभी मन अंदर से सूखने लगता है। जीवन की हरियाली दरअसल सुखों में नहीं जीवन के रसों में छिपी है। छोटे-छोटे आनंदों में छिपे जीवन रस।

हो रहा है? क्या कभी सोचा है?

मानव सामाजिक प्राणी है और भीड़ के साथ चलने की उसकी मानसिकता है। मूलत: प्रवृत्ति से कमज़ोर है। तभी तो पत्थर,लाठी, तलवार और बन्दूक की आड़ में अपनी शक्ति का प्रदर्शन करता है। जो भी कोई भीड़ से अलग कुछ सोचने या करने का प्रयास करता है, वह या तो कुचला जाता है या मारा जाता है। कोई विरला ही भीड़ को चीर कर आगे बढ़ पाता है और कोई विरला ही भीड़ के रुख को बदल पाता है। मनुष्य की इसी कमज़ोरी का लाभ सोशल मिडिया से लिया जा रहा है। इन्सान ही है जिसके पास दिल के साथ बुद्धि और विवेक है। इन्सान ही है जो अक्सर भावनाओं में बह कर निर्णय लेता है। बुद्धि और विवेक का प्रयोग करना भूल जाता है। तभी तो इतने धार्मिक गुरु बने। कई अयोग्य नेता गद्दियाँ सँभाले हुए है। अर्थ शास्त्री, समाज शास्त्री इसके कारणों और मापदंडों की कितनी भी व्याख्या या विवेचना कर लें पर असल में मानव के मस्तिष्क पर धीरे-धीरे वार करके उसे सोशल मिडिया के नशे से सराबोर कर बेकार किया जा रहा है। धैर्य कम हो रहा है और बुद्धि तथा विवेक से सोचने का समय ही लोगों के पास नहीं है।

अगली पीढ़ी के लिए पर्यावरण और सोशल मिडिया के प्रति सचेत रहें। कोई भी इसका दुरुपयोग करे उसे रोकें, वरना जब नई पीढ़ी को साहित्य और इतिहास का ग़लत या अधूरा ज्ञान मिलेगा तो आपकी आत्मा आपसे ही प्रश्न पूछेगी तो क्या तब आप उसका सामना कर पाएँगे ? या आप उसके प्रश्नों को नज़रअंदाज़ कर देंगे, जिस तरह अब सामने खड़ी पर्यावरण और सोशल मिडिया की समस्याओं का कर रहे हैं। समय तो सवाल दागेगा। सन् 2019 का वर्ष विदा ले रहा है और 2020 अपने आगमन का इंतज़ार कर रहा है। मित्रो, जब यह पत्रिका आप तक पहुँचेगी, नया वर्ष आपके जीवन में प्रवेश कर चुका होगा। आगामी वर्ष के लिए अगर अपने आप से एक वादा किया जाए कि पर्यावरण की रक्षा अपने-अपने स्तर पर करनी है और सोशल मिडिया की सामग्री को दिल से नहीं बुद्धि और विवेक का प्रयोग करके पढ़ना, देखना, सुनना, समझना और तब विश्वास करना है। सोशल मिडिया पर अंधविश्वास धातक है। सत्य और असत्य की परख ज़रूर करनी है।

विभोम-स्वर और शिवना साहित्यिकी परिवार की ओर से आप सबको नए साल की ढेरों शुभकामनाएँ!!! नया वर्ष आप सबके लिए मंगलकारी हो और आपके जीवन में खूब सुख-समृद्धि लाए।

आपकी,

सुधा ओम ढींगरा

मित्रनामा

बहुत अच्छी कहानी

आपकी अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका 'विभोम-स्वर' का अक्टूबर-दिसंबर अंक देखा जिसके लिए आपको बधाई! इसमें कादम्बरी मेहरा की कहानी 'एमी का प्रणय पथ' पढ़ी। बहुत अच्छी कहानी है। लेखिका दो समाजों के बीच रहते हुए स्वयं भी एक शिक्षिका रह चुकी हैं। उन्होंने यहाँ के समाज और जीवन में इस तरह की बातों को देखा हुआ है और इस कहानी में उसका प्रभाव साफ झलक रहा है। जिसमें एक भारतीय आशा नाम की शिक्षिका दो समाजों के बीच का अंतर समझती है और इसे दूसरों को भी समझाने का यत्न करती है। स्कूल के बच्चों को इतिहास से उदाहरण देते हुए दो समाजों और संस्कृतियों के बीच का फर्क बताती है जिस पर उन्होंने कभी पहले नहीं सोचा था। एमी के लिए भी यह एक नई जानकारी है।

साथ में शादियों को लेकर दो समाजों के बीच जो अंतर है उसे एमी को समझाती है। और एमी इससे काफी प्रभावित होती है। शिक्षा के माध्यम से दो समाजों के बीच रहने वाले लोग किस तरह एक दूसरे की बातों को समझ और समझा सकते हैं यह कहानी उसका एक अच्छा उदाहरण है।

-शन्नो अग्रवाल
shannoaggarwal1@hotmail.com

***

डॉ. हंसा दीप से बढ़िया बातचीत

विभोम-स्वर और शिवना साहित्यिकी पत्रिकाएँ मिलीं। 'विभोम-स्वर' पहले पढ़ी। 'विभोम-स्वर' पत्रिका में संपादक सुधा ओम ढींगरा जी ने मुझे मिलवाया एक और रचनाकार से- डॉ. हंसा दीप ! हिन्दी प्रेमी, टोरंटो, कनाडा में हिन्दी पढ़ाती हैं। कई किताबें आ चुकी हैं। हम सच में कितना कम जानते हैं दूसरों के बारे में। उनके योगदान के बारे में। सुधा जी के भीतर पत्रकार अभी सक्रिय है। वो हंसा जी से ख़ूब बतकही करती हुई सारी बातें निकलवा लेती हैं। साक्षात्कार सबसे उचित माध्यम है किसी रचनाकार को जानने समझने के लिए। उसका मूल्यांकन करते समय उसके परिवेश और विचारों, संघर्षों, अभावों को जानना ज़रूरी होता है। तब ऐसी बातचीत बहुत काम आती है। साक्षात्कार लेना और देना दोनों कला है- आप कितनी बातें, नई बातें, अनकही बातें निकलवा पाते हैं। रचनाकार अपने भीतर कितना उजाड़, कितना उत्सव समेटे रहता है। सब कुछ बाहर लाने के लिए उसे हौले-हौले खोलना पड़ता है।

हंसा जी को मानों सुन रही हूँ. ..

वे बोल रही हैं...

हिन्दी भाषा के बारे में, उसकी दिक़्क़तों के बारे में। उपाय भी बता रही कि हिन्दी को लोकप्रिय बनाने के लिए उसकी सरलता ज़रूरी है। ख़ासकर विदेशों में। वे स्वीकार रहीं कि अन्य स्त्री रचनाकारों की तरह उनके लिए भी लेखन पहली प्राथमिकता नहीं बन पाता। उसका नंबर सबसे अंत में आता है। वे बता रही कि उनकी किताबें लंबे अंतराल पर आईं, लेकिन लेखन में खामोशी कभी नहीं रही। अब जब धड़ाधड़ किताबें आ रहीं तो सबने नोटिस किया.. ये लेखिका कहाँ से आ गई? जब अपनी ज़िम्मेदारियों से मुक्त हुईं तो रचना संसार खुल गया। संकोची स्वभाव भी त्यागना पड़ा। अब वो हर मुद्दे पर खुल कर बोलती हैं। लिखती हैं।

उनकी बातें, स्वभाव कुछ-कुछ मेरे जैसा। मुझे भी सभाओं में जाना, सबको सुनना पसंद। माइक से दूरी भली लगती है। कहीं-कहीं चुप रह कर, अपनी पहचान छिपा कर सबको सुनना अच्छा लगता है। कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें आप वक्ता नहीं बनाएँगे तो आपको सुनने नहीं आएँगे। ये लोग स्थाई क़िस्म के वक्ता हैं। हम जैसे लोग श्रोता में ज़्यादा सुकून महसूस करते हैं। यह स्वभाव का मामला है। सही कहती हैं हंसा। लंबी बातचीत है। विस्तार से अनेक मुद्दों पर। साहित्य, स्त्री, बाज़ारवाद, भारतीय और पश्चिमी स्त्री के अंतर और स्त्री के बदलते सरोकार और भूमिका पर बेहतर जवाब।

धन्यवाद सुधा जी बढ़िया बातचीत पढ़ाने का, एक नए रचनाकार को जानने का मौक़ा मिला।

वे जो हमसे दूर बैठे हैं, उनसे हमें हर अंक में मिलवाते रहिए।..

इसके बाद 'विभोम-स्वर' की कविताएँ पढ़ डालीं। कई कवि हैं, निगाह अटक गई लगभग अनजान मेरे लिए, कवि विशाखा मुलमुले की कविताओं पर-

दर्द चिटक गया वहीं कहीं कविताएँ संपादन माँगती हैं, मगर जो मूल भाव है, वो कहीं बाधित नहीं।

मैंने काम के पैरा चुन लिए...
चावल चुनने की प्रक्रिया में
हम चावल नहीं चुनते
चुनते हैं उसमें से कंकड़
इसी तरह का बर्ताव हम
अन्य अनाजों के साथ भी करते हैं
कहते कुछ हैं, करते कुछ है
यही आदतें कब बन जाती है
हमारा स्वभाव
हम बूझ नहीं पाते हैं
सुख- दुख की थाली से हम
चुनने बैठते हैं सुख
और दुख चुन लेते हैं !

****

घास नहीं डालती कभी हथियार
उग ही आती है पाकर रीती ज़मीन
कुछ घास की तरह ही होते हैं बुरे दिन
जड़ें जमा ही लेते हैं अच्छे दिनों के बीच
(कविता का अंश)

****

इसी तरह भावना विहीन
कई मशीनी मानव भी
उगलते रहते मुख से
अपने शब्दों के रसायन
आबदार कई व्यक्तित्व आते
रसायन के चपेट में
कभी-कभी तो रसायन
इतना सांद्र कि
आँख का पानी भी न कर पाता इसे तनु
पर विज्ञान ही देता है अपाय से बचने के उपाय
मिलता वहीं कहीं से ज्ञान कि
रसायन गिरे शरीर पर या ज़मीन पर
या कहें कि ज़मीर पर
और बचाना हो जीवन
तब तुरंत उस रसायन पर
मिट्टी डालो !
(कविता के अंश)

-गीताश्री
geetashri31@gmail.com

***

बेहतरीन साक्षात्कार

'विभोम-स्वर' जुलाई- सितंबर अंक में रिश्वतखोरी, बेईमानी और भ्रष्टाचार का ज़िक्र देखा तो संपादक के शब्दों से ही शुरूआत करने की सोची !! हमारा महान् देश भारत, दुनियाँ के उन देशों में प्रमुख है जिसका नाम भ्रष्टाचार के लिए बदनाम है और आम लोगों को इसका बहुत खामियाज़ा भुगतना पड़ता है, लेकिन विकसित देशों में जहाँ जनता का बहुत ख़याल रखा जाता है वहाँ भी घूसखोरी है तो मुझे बहुत आश्चर्य हुआ, लेकिन यह खुशी हुई कि चलो जो भी होता है ऊँचे स्तर पर होता है और आम लोग इससे प्रभावित नहीं होते !! भारत में तो जहाँ चले जाइए भ्रष्टाचार मिलना ही मिलना है।

इस देश का दुर्भाग्य है कि यहाँ हर महकमें में भ्रष्टाचार मौज़ूद है, फिर चाहे वह कृषि हो या शिक्षा पर अमेरिका जैसे प्रभुत्वशाली देश में भी विश्वविद्यालयों और विद्यालयों में दाख़िला पाने के लिए भी लोग हथकंडे इस्तेमाल कर रहे हैं, सहसा इस पर विश्वास नहीं हुआ !! आई वी लीग ग्रुप के अन्तर्गत आने वाले हार्वर्ड, स्टैनफोर्ड, कोलम्बिया और येल विश्वविद्यालयों में प्रवेश के लिए अच्छे ग्रेड और अतिरिक्त क़ाबिलियत की आवश्यकता होती है और प्रतिभाशाली विद्यार्थी अपनी मेहनत और लगन से यहाँ दाख़िला पाते रहे हैं,लेकिन अब कुछ माँ - बाप अपने कम प्रतिभा संपन्न बच्चों के दाख़िले के लिए काउंसलर और अन्य कर्मचारियों को रिश्वत दे रहे हैं जो कि शर्मनाक है !! लेकिन फिर भी इस बात का संतोष है कि इन विश्वविद्यालयों में हुई धाँधलियों का पता चलते ही सुनवाई होती है और गुनहगारों को सज़ा मिलती है और भारत की तरह वहाँ छोटे- बड़े और अमीर- ग़रीब का लिहाज़ नहीं किया जाता; क्योंकि वहाँ क़ानून व्यवस्था सबके लिए एक है। भारत में धनवान और प्रभुत्वशाली वर्ग अनैतिक ढंग से कुछ भी कर सकते हैं और हमारे शिक्षा केन्द्रों में जो कुछ चल रहा है वह हमारी शिक्षा व्यवस्था पर कई सवाल खड़े करता है कि आख़िर रिश्वत और डोनेशन के बल बूते पर अच्छे विश्वविद्यालयों में दाख़िला दिलवा कर हम अपने बच्चों को कैसी शिक्षा दे रहे हैं ? खासकर प्राइवेट मेडिकल और इंजीनियरिंग कॉलेजों में जैसे बच्चों को दाख़िला मिलता है, उनसे देश का कितना और क्या भला होगा ?

यह बात कइयों के मुँह से सुन चुका हूँ कि, हिन्दी लेखन पर विचारधारा का दबाव रहता है, पर ब्रिटेन की लेखिका ज़किया ज़ुबैरी हिन्दी लेखकों को स्वतन्त्र सोच के साथ लिखने के बाबत क्या कुछ कह रही हैं यह जानने की ग़रज़ से सुधा ओम ढींगरा जी से उनकी बातचीत को पढ़ना ज़रूरी नहीं अत्यावश्यक लगा। भारतेत्तर लेखकों के संबंध में जो कुछ जानकारी है उसमें विभोम-स्वर का ख़ास योगदान है, क्योंकि आपके साक्षात्कार के माध्यम से मुझे एक से बढ़कर एक बेहतरीन साहित्यकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व को जानने का सुअवसर प्राप्त होता है और निस्संदेह इसके लिए मैं सदैव उनका आभारी रहूँगा। एक ही साथ साहित्य और राजनीति को साथ लेकर चलनेवाली ज़किया ज़ुबैरी के राजनीति के साथ-साथ साहित्य में वापसी की कहानी इतनी अच्छी लगी, कि मैं इस साक्षात्कार के इक- इक शब्द अपनी आत्मा में सहेजने लगा।

दूसरा प्रश्न मुझे बहुत काम का लगा, क्योंकि अन्दर ही अन्दर मेरे भीतर भी यही प्रश्न कुलबुला रहा था कि, ''ज़किया ज़ुबैरी राजनीति और साहित्य दोनों के साथ इन्साफ़ कैसे करती हैं ?'' लेकिन जब पढ़ा कि हिब्रू भाषा के शब्द ज़किया का अर्थ है Pure and Bright, तो समझ गया कि इन्होंने तो बस अपने नाम को ही सार्थक किया है, दो प्रतिकूल धाराओं में जाकर !! ये सच है कि राजनीति में झूठ और फरेब का फ़न्दा अच्छे से अच्छे व्यक्ति को भ्रष्टाचार में डुबो देती है, लेकिन यह एशियन राजनीति की सच्चाई है, क्योंकि एशियन देश आज भी जाति और धर्म की संकीर्णता से मुक्त नहीं हो सके हैं, खासकर भारतीय उपमहाद्वीप इस मामले में कुछ ज़्यादा ही आगे बढ़ गया है। लगभग बीस वर्षों तक गृहणी के उत्तरदायित्वों और ज़िम्मेदारियों को निभाना और उससे फ़ारिग होने के बाद राजनीति में आना अपने आप में एक उदाहरण है, जिससे भारतीय स्त्रियों को भी प्रेरणा लेनी चाहिए।

इस बेहतरीन साक्षात्कार के लिए आप दोनों को धन्यवाद।

नवनीत कुमार झा, दरभंगा
2rambharos@gmail.com

***

साक्षात्कार बहुत ख़ास हैं दोनों

शिवना प्रकाशन की पत्रिका 'शिवना साहित्यिकी' और वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका 'विभोम-स्वर' प्राप्त हुईं। सबसे पहले बात करूँगी 'शिवना साहित्यिकी'' की। कवर पेज पर ही बना बच्चा और भगवत रावत जी की कविता मन मोह लेती है। एक अंश ...

अलमुनियम का
वह दो डिब्बों वाला कटोरदान
बच्चे के हाथ से छूट कर
नहीं गिरा होता सड़क पर
तो कैसे पता चलता
कि उसमें चार रूखी रोटियों के साथ-साथ
प्याज की एक गाँठ और दो हरी मिर्चे भी थीं

'शिवना साहित्यिकी' के अक्टूबर-दिसम्बर अंक की खास बात है गीताश्री जी का पारुल सिंह द्वारा लिया गया साक्षात्कार। जितने चुटीले सवाल पारुल जी ने पूछे उतने ही दिलकश जवाब गीताश्री जी ने दिए। गीताश्री जी का स्पष्ट दृष्टिकोण, बेबाक और अपनेपन से भरा अंदाज़ पाठकों को ख़ासा लुभाता है। गीताश्री जी एक पत्रकार रही हैं। पत्रकारिता ने उनके अनुभवों को विस्तार दिया हैं और साहित्य प्रेम में शब्दों और भावों पर पकड़। इस कारण न उनके पास विषयों की कमी होती हैं ना उन्हें अभिव्यक्त करने के अंदाज़ की। साक्षात्कार लम्बा है, फिर भी कुछ बातें मैं आप सब से साझा कर रही हूँ। जो मेरे ख़याल से आप के अनुभवों में भी कुछ इज़ाफ़ा करेंगी। पुरस्कारों के बारे में वो कहती हैं कि, 'पुरस्कार मुझे उत्साहित करते हैं और बेहतर करने को उकसाते हैं।' हालाँकि वो साहित्य की तुलना जलेबी दौड़ से करती हैं। बचपन में हम सब ने जलेबी दौड़ में हिस्सा लिया है। इसमें हाथ पीछे बंधे होते हैं और धागे में बंधी जलेबी का एक टुकड़ा काट कर आगे भागना होता है। गीताश्री जी कहती हैं कि जो छोटा टुकड़ा काट कर आगे भाग जाते हैं

उन्हें पुरस्कार मिल जाते हैं और वो पूरी जलेबी खाने के लोभ में वहीं खड़ी रहती हैं तो उनका मुँह मिठास से भर जाता है। हालाँकि मिठास के साथ पुरस्कार भी मिल जाए तो क्या बुरा। कितनी सुन्दर बात कही है उन्होंने, भले ही पुरस्कार उत्साहित करते हैं पर रचनात्मक संतुष्टि की मिठास किसी पुरस्कार से कम तो नहीं। स्त्रियों के मामले में वो एक ऐसे समाज के स्वप्न देखती हैं जहाँ स्त्री समाज से टकराकर रूढ़ियों को तोड़ कर समानता के आधार पर एक संतुलित समाज की नींव रखती हैं। उनकी कहानियों की नायिकाएँ ऐसी ही हैं। वो बार -बार प्रयोग करने का जोखिम उठा कर अपनी रेंज का विस्तार करती हैं। किसी भी रचनाकार के लिए ज़रूरी है कि वो अपने द्वारा स्थापित मानकों में कैद होकर ना रह जाए।

डॉ. कमल किशोर गोयनका जी का शोध आलेख ''गांधी की पत्रकारिता का भारतीय मॉडल'' विचारों का परिमार्जन करने वाला एक अवश्य पठनीय आलेख है। वो लिखते हैं कि, ''नाथूराम गोडसे ने गांधी को तीन गोलियों से मारा था। पर हम उन्हें विगत 70 वर्षों से असंख्य गोलियों से मारते आ रहे हैं, परन्तु गांधी हैं कि मरते ही नहीं। गांधी ने मशीनी सभ्यता के दुष्परिणामों के विरुद्ध जगत को चेताया था तथा ग्रामीण व प्राकृतिक जीवन के निरंतर नाश से उत्पन्न होने वाले संकटों से सावधान किया था, परन्तु विज्ञान एवं तकनीकी जिस प्रकार जीव सृष्टि के लिए संक्सत पैदा कर रही है तब हमें गांधी याद आते हैं और तब हम उनके विचारों में सामाधान ढूँढ़ने लगते हैं।''

मंजुश्री के कहानी संग्रह ''जागती आँखों का सपना'' की डॉ. रमाकांत शर्मा द्वारा व योगेन्द्र शर्मा जी के उपन्यास 'कितने अभिमन्यु' की वेदप्रकाश अमिताभ जी द्वारा की गई समीक्षा प्रभावित करती है।केंद्र में पुस्तक ''जिन्हें जुर्म -ए -इश्क पे नाज़'' था की मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंकज पराशर, शुभम तिवारी, ब्रिजेश राजपूत, कविता वर्मा, दिनेश पाल की समीक्षाएँ पुस्तक पढ़ने के प्रति रुझान उत्पन्न करती है। मैंने भी इसे अपनी 'विश लिस्ट' में रख लिया है। इसी अंक में मेरे द्वारा प्रज्ञा जी के कहानी संग्रह ''मन्नत टेलर्स'' की समीक्षा भी प्रकाशित हुई है। जिसे पढ़कर बताने का काम आप पाठकों का है।

''विभोम-स्वर'' एक बेहतरीन साहित्यिक पत्रिका है। जिसके उत्तम स्वरूप लेने में सुधा ओम ढींगरा जी व पंकज सुबीर जी की मेहनत दिखती है। साहित्य में विचारधाराओं की गुटबाजी पर अपने संपादकीय में सुधा जी लिखती हैं, ''साहित्य में विचारधाराओं ने क्या किया ? सिर्फ अपने लेखक स्थापित करने के अतिरिक्त साहित्य और भाषा की समृद्धि की ओर किसने देखा ?''

डॉ. हंसा दीप का सुधा जी द्वारा लिया गया साक्षात्कार बहुत ही रोचक व प्रेरणादायक है। टोरंटो में लेक्चरार के पद पर कार्यरत डॉ.हंसा जी विदेशियों को हिन्दी भाषा सिखाने में होने वाली दिक्कतों के बारे में बताती हैं व इस बात पर ज़ोर देती हैं कि हिन्दी को विश्व व्यापी करने के लिए उसका सरलीकरण बहुत ज़रूरी है। अभी हिन्दी दिवस के आस -पास ट्विटर पर यह बहस भी चल रही थी। सच्चाई यही है कि भारत में भी बहुत क्लिष्ट भाषा आज का युवा समझता नहीं है। सबसे पहले ज़रूरी है कि युवाओं को हिन्दी से जोड़ा जाए। प्रवासी भारतीयों के लेखन के बारे में वो कहती हैं कि रोज़ी- रोटी की व्यवस्था करने बाद ही वो अपनी रचनात्मक भूख शांत कर पाते हैं। इसमें एक लम्बा अंतराल आ जाता है। फिर भी कैनवास व्यापक हुआ है। सृजनात्मकता बढ़ी है। स्त्री लेखन, प्रवासी लेखन के वर्गीकरण को वो नहीं मानती पर वो यह मानती हैं पर पश्चिमी व भारतीय स्त्री के प्रति मूलभूत मानसिकता वही है, को स्वीकार करती हैं।

विशाखा मुलमुले की कविताएँ गहरे भाव संप्रेषित करती हैं। ये कविताएँ हमें जीवन का आइना दिखाती हैं। ये एक रूपक के माध्यम से अपनी बात कहती हैं और दोनों को तराज़ू के दो पलड़ों में रखकर सोचने पर विवश कर देती हैं। कहीं ये रूपक विज्ञान से होते हैं तो कहीं जीवन से। जीवन पर उनकी गहरी दार्शनिक पकड़ है। जो सूक्ष्मता से आम जीवन को देखती हैं। उनमें काफी संभावनाएँ हैं। कहानी में ऐसा ही प्रयोग दीपक शर्मा जी की कहानियों में मिलता हैं।

विवेक मिश्रा जी की कहानी दुर्गा अच्छी लगी। विवेक जी अपनी कहानियों में सूक्ष्म डिटेल्स में जाते हैं। कहानी का अंत चौकाने वाला है। ज्योति जैन की कहानी ''जुड़े गाँठ पड़ जाए ' में हिन्दू मुस्लिम युवाओं का प्रेम है। परन्तु ये लव-जिहाद जैसा नहीं है। ये कहानी विश्वास पर आधारित है। विश्वास टूट जाए तो रिश्ता बचता नहीं है। जो आपको थोड़ा बदलने को कहता है वो पूरा बदलने पर भी संतुष्ट नहीं होगा। अर्चना पैन्यूली की कहानी ''हम पहुँच जाएँगे तेरी शादी में भारत'' अपने ही देश में भगौलिक बँटवारे के आधार पर बच्चों की पसंद पर विवाह की स्वीकृति देने में माँ की कशमकश को दिखाया है। आज ज़माना बदल रहा है फिर भी रफ़्तार धीमी है। डॉ. प्रदीप उपाध्याय की लघुकथा 'परख' व सुमन कुमार की लघुकथा 'बेटे होकर' प्रभावित करती है। अमृता प्रीतम पर वीरेन्द्र जैन जी का लेख ''अनाम रिश्तों की चितेरी'' उनके रचनात्मक जीवन के कुछ अनकहे पहलुओं पर प्रकाश डालता है।

एक बहुत अच्छे अंक के लिए पंकज सुबीर जी व सुधा ओम ढींगरा जी को बधाई।

-वंदना वाजपेयी

***

यात्रा वृत्तांत बहुत अच्छा

'विभोम-स्वर' में मैंने डॉ. अफ़रोज़ ताज द्वारा लिखित यात्रा वृत्तांत पढ़ा। मुझे बहुत अच्छा लगा। उन्होंने बहुत तफ़सील से ''स्वदेश विदेशियों की नज़र में '' शीर्षक से अपने छात्रों की यात्रा का वर्णन दिया है; जिसमें वे खुद भी एक बतौर शिक्षक छात्रों को लेकर भारत आए थे। भारत के विभिन्न शहरों में उन सबका study abroad का कार्यक्रम था। यात्रा के दौरान अलीगढ़ में एक छात्रा के द्वारा किसी मेज़बान के घर में ठहरने को मना करने के बाद अगले दिन वहीं रहने को जिस बिना पे राज़ी होती है, वह पूरा वाकिया मर्म स्पर्श करने वाला लगा।

-संजय दानी

sanjay.dani2@gmail.com

***

रचना श्रीवास्तव
शिक्षा: स्नातक विज्ञान, स्नाकोतर: हिन्दी, समाज शास्त्र,.बी. एड.।
संप्रति : स्वतन्त्र पत्रकारिता।
अमेरिका में गैर हिन्दी भाषी बच्चों की हिन्दी की शिक्षा (2008 से अब तक)
प्रकाशित कृतियाँ:
संपादक-अनुवादक-संयोजक, मन के द्वार हज़ार--हाइकु कविता का अवधि (अनुवाद), यादों के पाखी-हाइकु संग्रह(संयोजक), भोर की मुस्कान-हाइकु कविता, आधी आबादी का आकाश-महिला हाइकुकारों के हाइकु का संकलन गीत सरिता-तीन भागों में (बच्चों के गीत), अक्षर सरिता-साझा संग्रह
रचनात्मक सहयोग: संभावना डॉट कॉम, एक दुनिया इनकी भी, भाव कलश, देशान्तर, कहानियाँ अमेरिका से, नारी विमर्श के अर्थ, विभिन्न संग्रहों में कहानियाँ, कविताएँ, हाइकु प्रकाशित। पत्र पत्रिकाओं में निरन्तर लेखन।
अनुवाद:
बहुत से विज्ञान के लेखों और चिकित्सा संबंधी लेखों का हिन्दी अनुवाद। कृत्या के लिए कविताओं का हिन्दी अनुवाद। सौ बरस सौ कविताएँ चीन की कविताओं में आधुनिकवाद (चीनी कविताओं का हिन्दी अनुवाद)
बी.बी.सी हिन्दी (1 जून 2008 से 2011 तक)
मान्यता/ पुरस्कार/ सम्मान:
हिन्द युग्म यूनीकवि सम्मान।
841 W Durate, Unit 3, Arcadia CA 91007
ईमेल: rach_anvi@yahoo.com

कहीं भी परिवर्तन लाने के लिए सामूहिक सोच और बल चाहिए....

(अमेरिका की युवा लेखिका रचना श्रीवास्तव से सुधा ओम ढींगरा की बातचीत)

रचना श्रीवास्तव अमेरिका की युवा कहानीकार, कवयित्री, पत्रकार, समालापक हैं। साहित्य की कई विधाओं में लिखती हैं। वैश्विक साहित्य का भविष्य हैं। अक्सर बातचीत होती है। साक्षात्कार उसी बातचीत की देन है-

प्रश्न : रचना, पाठकों से पहले मैं यह जानना चाहती हूँ कि आप विदेश कब और कैसे आईं?

उत्तर : मैं अमेरिका करीब 15 साल पहले 2004 में आई थी। यहाँ आने से पहले मेरे पति जम्मू में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर थे। मेरे पति को अनुसन्धान करने में भी बहुत रुचि थी। भारत में उन्होंने बहुत काम किया; फिर यहाँ अमेरिका में उनको काम करने का मौका मिला और बस नए सपने लिए हम अमेरिका आ गए। अमेरिका में हम डैलस शहर में आए, जो कि टेक्सास प्रदेश में स्थित है।

प्रश्न : रचना, साहित्यिक कलम इस देश के अनुभवों ने पकड़वाई या अपने देश की माटी की खुशबू की देन है?

उत्तर : मैं बहुत छोटी उम्र से लिखती थी पर तब मालूम नहीं था क्या है ये सब, बस जो मन में आ जाता था लिख देती थी। मेरी एक छोटी बहन है, जो उम्र में मुझसे बहुत ही छोटी है, उसके लिए छोटी-छोटी तुकबंदियाँ करती थी। उसको सुनाने के लिए गीत लिखती थी। एक दिन माँ ने सुना और बहुत प्रशंसा की। फिर उन्होंने कहा कि ये कविता नंदन में भेजो। मैंने भेजी और वह छप भी गई, बहुत अच्छा लगा था। उसके बाद से लगा कि जो मैं लिख रही हूँ वो कविता है। फिर कविताएँ लिखती रही। सब डायरी के पन्नों में समाती गईं।

डायरी कविताओं का घर बन गई; क्योंकि मैंने उन्हें छापने के लिए कहीं भेजा ही नहीं। पढ़ाई, नौकरी फिर शादी। इन सभी जीवन के चक्रों में कविता पर ध्यान कहीं कम हो गया, पर मरा नहीं। जब भी कोई भाव अन्दर हाथ-पाँव मारता उसको अपनी डायरी के हवाले कर देती। अमेरिका आने के बाद दिन काटने मुश्किल हो गए, बहुत खाली-खाली लगता पूरा दिन। मेरी बिटिया थी पर थोड़े दिनों में उसने भी स्कूल जाना शुरू कर दिया, तब तो सिर्फ कविताओं का ही सहारा रह गया। मेरी कविताएँ मेरे साथ हँसती, मेरा खालीपन बाँटती, मेरे शब्दों में ढलकर मेरी डायरी के पन्नों पर ठुमक-ठुमक चलतीं। तो यहाँ आप कह सकती हैं कि अपने देश की माटी की खुशबू यहाँ आकर फैली और अनुभवों में ढल गई।

प्रश्न : रचना, यह प्रश्न तकरीबन मैंने हर वैश्विक रचनाकार से पूछा है, इससे रचनाकार की रचनात्मकता को समझने में आसानी होती है। क्या प्रवासवास ने आपके लेखन को प्रभावित किया? अगर किया तो वह प्रभाव कैसा था?

उत्तर : जो चीज़ आपके पास होती है कीमत तब समझ में आती है जब आप उससे दूर जाते हैं। अपना देश अपने लोग सब से बिछड़ कर पता लगा वो सभी मेरे लिए क्या थे? देश की छोटी सी बात रुला देती थी। माँ-पिता की एक-एक बात याद आकर मुझे दुखी कर जाती थी और यही कविताओं में दिखाई देता। देश का दर्द आँसू बन मेरी कविताओं में बहता और मेरी कविताएँ भीग जातीं। मैं दूर ज़रूर चली आई थी पर वहाँ की समस्याएँ मुझे आहत करती हैं। यहाँ आकर मुझे यहाँ बसे भारतीयों और उनकी अनेकों कहानियों को सुनने का मौका मिला। मेरी कविताओं ने उस ओर भी करवट ली। कहानियाँ उन्हीं कहानियों से ऑक्सीजन लेने लगीं।

प्रश्न : आप कविताएँ लिखते-लिखते अचानक हाइकु लिखने लगीं। आपकी तो कई पुस्तकें हाइकु में आ चुकी हैं। हाइकु जापानी कविता की एक विधा है; जो भारत में अभी लोकप्रिय हुई है। आप का आकर्षण इस विधा के प्रति कैसे हुआ?

उत्तर : कोई भी काम अचानक नहीं होता, मेरा मानना है कि कहीं न कही भगवान् ने सब कुछ सोच रखा होता है, तभी तो उन्होंने मुझे रामेश्वर काम्बोज हिमांशु जी से मिलवाया; जिनकी प्रेरणा से मैंने हाइकु लिखना शुरू किया। आज हाइकु ने भारत में लोगों के बीच में और भारतीय साहित्य के बीच में अपनी पहचान बना ली है। हिमांशु जी बहुत बड़े हाइकुकार हैं, साथ ही आप और मुझ जैसे बहुत से लोगों को हाइकु लिखना सिखाया है। हाइकु साहित्य को समृद्ध करने में रामेश्वर काम्बोज हिमांशु जी का बहुत बड़ा हाथ है और उनकी प्रेरणा से ही मैंने हाइकु का हाइकु में ही अवधी भाषा में अनुवाद किया; जिसको लोगों ने बहुत पसंद किया। हाइकु के क्षेत्र में मेरा जो भी काम है वो सब हिमांशु भाई के ही कारण है।

प्रश्न : रचना, मैंने आपकी कहानियाँ पढ़ी हैं। अमेरिकी परिवेश पर अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। कहानी लिखने की आपकी प्रक्रिया क्या है?

उत्तर : जानती हैं दीदी, बहुत सी कहानियाँ तो मेरे अन्दर उपजती हैं और वहीं तक रह जाती हैं। कभी कागज़ पर उतर ही नहीं पातीं। कुछ कहानियाँ जो लिखी हैं, उसको लिखने में बहुत समय लगा है; क्योंकि कभी लगता था कि और खोज की जाए या फिर लिखने के बाद लगा सही नहीं है। कभी-कभी मैं मुख्य कहानी लिख लेती हूँ उसके बाद उसका विस्तार करती हूँ। पर कुछ भी निश्चित नहीं है, जब जैसा समय मिले वैसा कर लेती हूँ। पता नहीं क्यों जब भी मैं लिखने बैठती हूँ मेरे बच्चों को सारा काम तभी याद आता है.... मम्मा हेल्प मी इन दिस प्रोजेक्ट। माँ कल स्कूल में ये ले जाना है। अब दीदी ये सब कह रही हैं तो बेटे जी भी माँ मेरे साथ खेलो मैं बोर हो रहा हूँ या मम्मा मुझे भूख लगी है। तो इसलिए मेरी कविताएँ कहानियों से ज़्यादा है; क्योंकि वो कम समय में लिख ली जाती हैं। जैसा कि आपने कहा है आपकी आज्ञा मानते हुए कहानियाँ लिखना जारी है। गृहकार्यों से थोड़ा-थोड़ा समय चुरा लेती हूँ। कभी-कभी चोरी के एहसास से ग्रस्त होती हूँ, फिर सोचती हूँ सृनात्मकता कुछ तो मोल लेगी। शांत होकर कहानी लिखने लगती हूँ।

प्रश्न : रचना, क्या लेखन से हम देश, समाज और स्वयं की यानी अपनी जात की लड़ाई लड़ सकती हैं।

उत्तर : हाँ दीदी, ज़रूर लड़ी जा सकती है। कलम की ताकत तलवार की ताकत से बड़ी होती है। इससे निकली आवाज़ दूर तलक जाएगी और इस आवाज़ को रोका भी नहीं जा सकेगा। मुझे लगता है यदि हम सभी एक दूसरे का साथ दें तो या तो मुश्किलें आएँगी ही नहीं या फिर हम उनका सामना आसानी से कर लेंगे। बशर्ते हमारी जात में एकता हो। मुश्किल तो यहीं आती है जब पुरुष से पहले नारी ही नारी का शोषण करती है। पुरुषसत्ता में बहुत एकता है, जाग्रति तो स्त्रीसत्ता में लाने की है। कहीं भी परिवर्तन लाने के लिए सामूहिक सोच और बल चाहिए। अपनी जात की लड़ाई लड़ने के लिए उसकी प्रबल आवश्यकता है।

प्रश्न : वैश्विक स्तर पर महिला को आपने कितना स्वतन्त्र पाया और पुरुषसत्ता का क्या महत्त्व महसूस किया?

उत्तर : मैंने अमेरिका के साथ और भी देशों की यात्रा की है; जो देखा उससे यही समझा कि महिलाओं के लिए भेदभाव लगभग हर जगह पर है। बात करते हैं अमेरिका की तो यहाँ तो पहले महिलाओं को वोट करने और जायदाद खरीदने, क्रेडिट कार्ड रखने तक के अधिकार नहीं थे। पर धीरे-धीरे समय बदला और ये सारे अधिकार मिले पर बहुत समय तक तो समान पद के लिए महिलाओं को पुरुषों से कम वेतन मिलता था। आज यदि देखें तो महिलाओं को बहुत से अधिकार है, उनको स्वतंत्रता भी है पर फिर भी उनका जीवन सुखी कितना है ? यहाँ आपको एक बात बताना चाहती हूँ जब मैं डैलस में रहती थी, मेरे अपार्टमेंट्स कॉम्प्लेक्स में बहुत सी लड़कियाँ रहती थीं। मेरी उनसे जान-पहचान हो गई। एक दिन सभी मेरे घर आईं। बात होने लगी तो उन्होंने पूछा क्या आपकी शादी हुई है, मैंने कहा हाँ। तो उसने बोला आपका भविष्य निश्चित है, पति हैं, बच्चा है, पर हम को देखिए, मेरे बॉय फ्रेंड ने मेरी बेटी के जन्म के बाद एक बार भी नहीं पूछा कि कैसे पाल रही हो बेटी को। इस सेंड्रा के बॉय फ्रेंड को जब पता चला कि ये गर्भ से है, उसी दिन से इससे नाता तोड़

लिया, न फ़ोन उठता है, न ईमेल का जवाब देता है। इसकी माँ इसकी सहायता करती है। हम दिन में काम करते हैं, पढ़ाई भी करते हैं और अपने बच्चों की देखभाल भी करते हैं। जीवन मशीन बन कर रह गया है। मुझे उनकी दशा देख कर लगा, पूरी दुनिया में औरतें ही सफर करती है कहीं कम कहीं ज़्यादा।

प्रश्न : रचना, बाज़ारवाद के दौर में स्त्री एक नए प्रकार के शोषण का शिकार हुई है। आप इसे किस तरह से देखती हैं?

उत्तर : देखिए, मेरा तो मानना है कि इस बाज़ारवाद ने नौकरी के नए आयाम खोले हैं। नारी को बहुत से क्षेत्रों में काम मिल रहा है और खुद को साबित करने का मौका भी मिल रहा है। यदि हम यहाँ देखें कि हर प्रचार में महिलाओं को दिखाया जाता है, सही है, पर आप ये सोचिए कि महिलाओं के आने से उत्पाद (प्रोडक्ट)की सुंदरता बढ़ जाती है तो इसमें बुराई क्या है ?और मॉडल को नाम और पैसे दोनों मिलते हैं। कितनों के घर चलते हैं। मैं एक बार एक सह अभिनेत्री का साक्षात्कार ले रही थी तो उसने बताया कि वह बहुत सी परेशानियों से गुज़री है। यदि ये फिल्म इंडस्ट्री और ये ऐड इंडस्ट्री न होती तो वो कभी भी अपने बच्चों को पढ़ा नहीं पाती। उसने कहा कि वो इस इंडस्ट्री का बहुत-बहुत धन्यवाद करती है। शोषण का शिकार महिलाएँ अपने घर और समाज में ज़्यादा होती हैं। एक बात और बाज़ारवाद को कोसने से क्या होगा जो लोगों को पसंद है वो दिखाया जाता है। यदि कुछ बदलने की ज़रूरत है तो वह है, लोगों का दृष्टिकोण और उनके सोचने का तरीका।

प्रश्न : रचना, कई तो मानते हैं कि साहित्य भी इससे प्रभावित हुआ है। इस पर आप क्या सोचती हैं ?

उत्तर : मुझे तो लगता है कि बाज़ारवाद ने हिन्दी साहित्य को बढ़ावा दिया है। लोगों की ज़ुबान पर हिन्दी है। उनकी सोचों में हिन्दी है। हिन्दी में सरल शब्दों का प्रयोग उसको सदा के लिए जीवित रखेगा ऐसा मेरा मानना है। जब लोगों को हिन्दी आ जाए, उनको हिन्दी रोचक लगने लगे तब क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग किया जाए या सिखाया जाए। यहाँ एक उदाहरण देना चाहती हूँ। मेरे पास कुछ अहिन्दी भाषी बच्चे हिन्दी पढ़ने आते हैं। उनके घर में कोई हिन्दी नहीं बोलता है पर वो हिन्दी सीखना चाहते हैं; क्योंकि वो हिन्दी फ़िल्में (चलचित्र) देखना चाहते हैं। उनको हिन्दी गाने पसंद हैं। कारण कोई भी हो पर यदि वो यहाँ अमेरिका में रह कर हिन्दी सीख रहे हैं, तो मेरे ख़याल से बहुत बड़ी बात है। जब मैं उनको हिन्दी पढ़ाती हूँ तो उनके पसंदीदा गानों का उदाहरण देती हूँ। गीतों के बोलों का अर्थ समझाती हूँ। जब वो गानों का अर्थ समझते हैं तो उनको गाने और भी अच्छे लगने लगते हैं। मुझे तो लगता है इससे हिन्दी की फसल लहलहाएगी सूखेगी नहीं।

प्रश्न : आप किन समकालीन लेखकों से प्रभावित हैं?

उत्तर : मैं तो सभी से प्रभावित हूँ। किसी की भाषा बहुत सुंदर है तो किसी के भाव बहुत गहरे हैं। किसी का कथानक कमल का है तो किसी का लिखने का तरीका। सभी बहुत उत्तम है। मैं सभी की हृदय से प्रशंसा करती हूँ।

प्रश्न : आपकी उपलब्धियाँ क्या हैं?

उत्तर : मैं साहित्य के क्षेत्र में अनाड़ी हूँ। मेरी उपलब्धियाँ कुछ ज़्यादा नहीं। हिन्दी युग्म यूनी कवि सम्मान और अभिव्यक्ति कथा महोत्सव में मेरी कहानी चुनी गई। हाँ एक उपलब्धि जो मुझको बहुत पसंद है वो यह कि मुझे सभी का प्यार बहुत मिला है, उसी के सहारे मेरा जीवन और साहित्य चल रहा है।

प्रश्न : रचना, मैंने अमर उजाला दैनिक समाचार पत्र में अभिषेक सहज द्वारा लिया गया आपका इंटरव्यू पढ़ा। अमेरिका में आपके हिन्दी के कार्यों को उसने बड़े सराहनीय तरीके से उजागर किया है, बधाई! अच्छा लगा जानकार।

उत्तर : दीदी बस आपका आशीर्वाद है।

प्रश्न : रचना यह आपकी मेहनत है। लॉस एंजिलस में भारतीय और अमेरिकन बच्चों को हिन्दी पढ़ा रही हैं, उन्हें भारतीय संस्कार और संस्कृति सीखा रही हैं, यह आसान काम नहीं। मैंने सेंट लुईस विश्वविद्यालय में कई वर्ष हिन्दी पढ़ाई है, कठिन काम है।

उत्तर : जी मुश्किलें तो आती हैं, खासकर विदेशी धरती पर कुछ भी बोना, जिनके पास अपनी मिट्टी, अपने पौधे हैं। वे उन्हीं को रोपते और उनकी खुशबू ही लेना जानते हैं।

प्रश्न : रचना मैंने कहीं पढ़ा कि आपने कोई अनुवाद किया है और वह सम्मानित हुआ। क्या आप हमारे पाठकों को उसके बारे में बताएँगी?

उत्तर : दीदी, 'सौ बरस सौ कविताएँ' चीन की कविताओं में आधुनिकवाद नाम से एक संकलन तैयार किया गया है, जो मिंडी डी के अंग्रेज़ी संकलन का हिन्दी में अनुवाद है। मिंडी डी ने यह संकलन विशेषरूप से हिन्दी पाठकों के लिए तैयार किया था, जिसमें सौ वर्ष के प्रमुख कवियों की सौ कविताएँ संकलित हैं, ये समस्त कवि चीन में आधुनिक कविता के पोषक रहे हैं। यह संकलन चीनी कविता का एक पूरी सदी का प्रतिनिधित्व करते हुए हिन्दी पाठकों के लिए महत्त्वपूर्ण है।

हिन्दी में इसका संपादन रति सक्सेना द्वारा किया गया है, और सह अनुवादक हैं रति सक्सेना, नीता पोरवाल, रचना श्रीवास्तव, राजलक्ष्मी शर्मा।

इस अनुवाद को प्रकाशन से पूर्व चीनी साहित्य के अनुवाद के लिए DJS Translation Award से सम्मानित किया गया है।

प्रश्न : आजकल आप नया क्या लिख रही हैं?

उत्तर : दीदी, मैंने अभी इधर कई नाटक लिखें हैं। हिन्दी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए। मेरे नाटक डैलस में भी हिन्दी कक्षा के विद्यार्थियों ने अभिनीत किए हैं। कविताएँ तो लिखती रहती हूँ। कुछ कहानियाँ है जो अधूरी हैं, उसको पूरा कर रही है। कुछ आँखों देखी लिखी है। कुछ जगहों के बारे में लिखा है। समय-समय पर कलाकारों और साहित्यिक लोगों का साक्षात्कार लेती हूँ। वैसे एक बात कहूँ, मैं कुछ लिखती नहीं हूँ, लोग मुझसे लिखवा लेते हैं।

रचना लोग आपसे ऐसे ही लिखवाते रहें और आप लिखती रहें। हिन्दी साहित्य को समृद्ध करती रहें। अभी तो आपने खुले आकाश में उड़ान भरनी है। एक सुनहरा भविष्य आपका इंतज़ार कर रहा है.....

***

डेरा उखड़ने से पहले...!

वन्दना अवस्थी दुबे

लगातार बजती फ़ोन की घंटी से झुँझला गई थीं आभा जी। अभी पूजा करने बैठी ही थीं, कि फ़ोन बजने लगा। एक बार टाल गईं, दो बार टाल गईं लेकिन तीसरी बार उठना ही पड़ा। अब उठने -बैठने में दिक़्क़त भी तो होती है न!! एक बार बैठ जाएँ, तो काम पूरा करके ही उठने का मन बनाती हैं आभा जी। बार-बार उठक-बैठक की न तो उमर रही उनकी, न इच्छा। घुटनों पर हाथ रख के किसी प्रकार उठीं, और फ़ोन तक आईं।

दूसरी तरफ़ से वही चिरपरिचित आवाज़ आई-

''कैसी हैं आभा जी? आज दीवाली है न, तो मैंने सोचा शुभकामनाएँ दे दूँ। व्हाट्सएप आप इस्तेमाल नहीं करतीं, वरना वहीं मैसेज कर देता।''

''जी शुक्रिया। आपको भी दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएँ।'' प्रत्युत्तर दे, झट से फ़ोन पटक दिया आभा जी ने, जैसे किसी अपवित्र करने वाली चीज़ को छू लिया हो। कुछ भुनभुनाती हुई वापस पूजाघर में सप्रयास बैठ गई हैं वे।

नमस्तेस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते।

शङ्खचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोस्तुते

पूजाघर से लक्ष्मी स्तोत्र के स्वर सुनाई देने लगे हैं। बहुत मन लगा के पूजा करती हैं आभा जी। अभी से नहीं, बचपन से ही पूजा के प्रति बहुत झुकाव था उनमें। मैं साक्षी हूँ, उनके इस झुकाव की।

पूजा घर में बड़ी लगन से आभा जी ने लक्ष्मी-पूजन की तैयारी की है। मूर्तियाँ, कलश, रंगोली, एपन, दिये, मिठाइयाँ, खील-बताशे, फल, फुलझड़ियाँ क्या नहीं सजाया? गेंदे के फूल की बड़ी-बड़ी मालाएँ। पूजा घर फूल मालाओं से सजा है। घर के दरवाज़े पर आम के पत्तों और गेंदे के फूलों की बंदनवार लगी है। बाहर भी एक रंगोली बनाई है उन्होंने।

फ़ोन पटक के आईं आभा जी ज़रा विचलित लग रही हैं। उनके हाथ, गौर का पूजन यंत्रवत् कर रहे हैं, होंठों से लक्ष्मी स्तोत्र स्वत: निकल रहा, लेकिन आँखें बता रहीं कि उनका मन उद्विग्न सा हो गया है। अब वे उतनी निश्चिन्त, शांत मन नहीं हैं, जितनी फ़ोन सुनने के पहले थीं। उनकी आवाज़ का कम्पन बता रहा, उनके मन की दशा। मैं बहुत अच्छे से महसूस कर पा रही हूँ उनकी इस हालत को। बचपन की सहेली हूँ आख़िर..!

आप ये न सोचें, कि आभा जी कोई बहुत बुज़ुर्ग महिला हैं। उम्रदराज़ हैं, लेकिन इतनी भी नहीं कि आप उन्हें बूढ़ा कह दें। दिखने में तो उनकी उम्र और भी कम लगती है। मुझसे यही कोई तीन साल बड़ी हैं। लगभग पचपन साल की हैं वे। सरकारी महकमें में अधिकारी हैं। बहुत बड़ी अधिकारी नहीं हैं, लेकिन उनकी पोस्ट में ''ऑफ़िसर'' शब्द आता है, सो अधिकारी ही कहलाईं। ऑफ़िस में बहुत इज़्ज़त है उनकी। पिछले तीस सालों से यहीं पदस्थ हैं। यहीं नौकरी शुरू की और अब यहीं से रिटायर हो जाएँगी, ऐसा लगता है।

वन्दना अवस्थी दुबे, केयर पब्लिक स्कूल, ओवर ब्रिज के पास, मुख़्त्यार गंज, सतना, म.प्र. 485001
मोबाइल : 9993912823
ईमेल : vandana.adubey@gmail.com

पिछले दो साल से घुटनों में थोड़ी तक़लीफ़ रहने लगी है। वज़न बढ़ गया है न, बस इसीलिए। वैसे वज़न इतना भी नहीं बढ़ा कि शरीर बेढब लगे। घुटनों की तक़लीफ़ का क्या है, किसी को भी हो जाती है। जबसे वज़न बढ़ने की शुरूआत हुई, तभी से आभा जी ने मॉर्निंग वॉक शुरू कर दिया है। रोज़ लगभग चार कि.मी. चलती हैं। शायद इसीलिए वज़न उतना ही बढ़ के रह गया, स्थिर हो गया। घुटनों में भी चलते समय दिक़्क़त नहीं होती, बस उठने-बैठने में परेशानी होती है, वो भी यदि ज़मीन में बैठ जाएँ तो।

आप सोच रहे होंगे, कि मैं आभा जी के परिवार का ज़िक्र क्यों नहीं कर रही? तो क्या ज़िक्र करूँ? कहने को तो तीन भाई, तीन भाभियाँ, आठ भतीजे, भतीजियाँ, दो बहनें, दो बहनोई, दो भांजियाँ हैं, लेकिन किस काम के?? बहनें ही हैं जो सम्पर्क बनाए रखती हैं, वरना भाई तो केवल तब याद करते हैं जब उन्हें पैसों की ज़रूरत होती है। बड़ी बहन अपनी ससुराल में व्यस्त रहते हुए बुढ़ापे को प्राप्त हो गई हैं, जबकि मंझली बहन इसलिए लगातार आना-जाना बनाए रखती है, क्योंकि उसकी ससुराल में एकदम पटरी नहीं बैठती। इन दोनों बुज़ुर्ग बहनों के लिए मायके के नाम पर केवल आभा जी का ये सरकारी क्वार्टर ही तो है। पुश्तैनी घर तो पिता के बिस्तर पकड़ते ही भाइयों ने बेच दिया था, ये चिन्ता किए बिना कि अब उनकी ये बहन और बीमार पिता कहाँ जाएँगे? वो तो भला हो आभा जी की नौकरी का, जिसमें सरकारी मकान का प्रावधान था।

आभा जी के बचपन में ही उनकी माँ का देहान्त हो गया था। तब वे शायद पाँच साल की थीं। पिता ने छह बच्चों, तीन बेटे और तीन बेटियों को सँभाला, पाला-पोसा,पढ़ाया-लिखाया। बड़े भाईसाब जल्दी ही नौकरी में आ गए सो उनके लिए रिश्ते भी फटाफट आने लगे। इधर शादी हुई, उधर बड़े भैया अपनी पत्नी को साथ ले गए अपनी पोस्टिंग पर। ले ही जाना था। शादी कौन सा भाई-बहनों को सँभालने के लिए की थी!! तीन साल बाद मंझले भैया की शादी हो गई, और वे भी भाभी को ले गए। तीसरे भैया एकदम नाकारा थे। न पढ़ने में, न लिखने में सो नौकरी भी क्या मिलती, और शादी भी क्यों होती! इन दो शादियों के बाद कई साल बीत गए। पिता फ़क्कड़ टाइप के थे। न लड़कों के लिए घर ढूँढ़े थे, न लड़कियों के लिए ढूँढ़ने की जुगत की। दोनों भाई भी बाहर निकले सो निकले। दीवाली पर ज़रूर सब इकट्ठे होते। लेकिन न पिता बेटियों के ब्याह का ज़िक्र करते, न भाई ऐसी कोई बात उठाते।

इस बीच पिता ने अपने रिटायरमेंट के पहले, शहर के बीचों बीच पड़े अपने पुराने प्लॉट पर घर बनवा लिया था। बेटियाँ अपने घर में सुरक्षित थीं। घर की गाय दुह रही थीं, गोबर से कंडे पाथ रही थीं, आँगन लीप रही थीं। शादी के इंतज़ार में बड़ी बहन ने डबल एम. ए. कर लिया था। मंझली बहन ने भी एम.ए. कर लिया था। आभा जी बी.ए. कर रही थीं। ये वो समय था, जब पढ़ाई के लिए गिने चुने रास्ते ही उपलब्ध होते थे। नौकरियों के लिए और भी कम रास्ते। लड़कियाँ आमतौर पर शादी की योग्यता हासिल करने के लिए पढ़ाई करती थीं। बी.ए. होते-होते शादी हो गई तो पूरे मोहल्ले में वाहवाही होती थी। न हो पाई तो लड़कियाँ, समाज शास्त्र में एम.ए. करती थीं। तब भी समय बच गया तो राजनीति विज्ञान में एम.ए. कर लेती थीं, प्राइवेट ही। मगर बड़ी बहनों का इंतज़ार ज़्यादा लम्बा हो गया। डबल एम.ए. के बाद बी.एड. की नौबत भी आ गई, लेकिन न भाई लोग कोई रिश्ता लाए, न पिता ने पहल की। पिता बहुत बूढ़े भी थे। हो सकता है नौकरी के दस्तावेज़ों में उनकी उमर कुछ ज़्यादा ही कम लिख गई हो। वैसे भी उस ज़माने में जन्म प्रमाण पत्र तो बनते नहीं थे। दस साल का बच्चा भी माँ-बाप को पाँच साल का लगता था। यही वजह रही होगी क्योंकि रिटायरमेंट के समय ही आभा जी के पिता जी पैंसठ के ऊपर दिखाई देते थे तो अब तो उनके रिटायरमेंट को भी दस साल हो गए थे।

कंडे पाथते, गोबर उठाते, दही मथते, उपलों पर रोटी सेंकते बड़ी बहन की उमर अब पैंतीस पार हो गई थी। मंझली बत्तीस के आस-पास और आभा जी तीस को छूने वाली थीं। अचानक ही एक रिश्ता किसी ने सुझाया। किसने ? नहीं जानती। लड़के वाले अच्छे खाते-पीते परिवार के थे। लड़का खुद ठेकेदारी करता था, इकलौता था। दुहेजू था। पहली बीवी बच्चे के जन्म के समय दुनिया छोड़ गई। कुछ दिन बाद बच्चा भी चल बसा था। शादी का इंतज़ार कर-कर के निराश हो चुकी बड़ी बहन के लिए ये रिश्ता सौगात सरीखा था।मंझली भी बैरियर खुलने की उम्मीद से खुश थी। बहनों के दुख में दुखी होने वाली आभा जी, अब बहनों की खुशी से खुश थीं। एक बात आपको बता दूँ, कि इस वक़्त तक आभा जी, अपने इसी ऑफ़िस में क्लर्क का अस्थायी पद प्राप्त कर चुकी थीं। बड़ी बहनों ने इतनी पढ़ाई करने के बाद भी कहीं नौकरी करने की कोशिश नहीं की थी।

बड़ी बहन के जाते ही, अचानक आभा जी घर में सबसे बड़ी हो गईं। मझली बहन को काम बहुत रुचता नहीं था। उनकी स्पीड भी इतनी धीमी थी, कि वे आभा जी के दफ़्तर निकलने के पहले उन्हें दो पराँठे तक नहीं दे पाती थीं। सो आभा जी ने उन्हें सफ़ाई का काम सौंप दिया और खुद रसोई सँभाल ली। एक बात बताना भूल ही गई। बड़ी बहन के ब्याह के दो साल पहले ही सबसे छोटे भैया ने भी इसी शहर की एक लड़की से प्रेम विवाह कर लिया था और अब घर जमाई बन के पत्नी के मायके में रह रहे थे, ससुर के धंधे में हाथ भी बंटा रहे थे, ऐसा सुना गया।

बूढ़े पिता और बूढ़े हो गए थे। बड़ी बहन की शादी से निश्चिन्त भी। इतने निश्चिन्त, जैसे तीनों बेटियाँ ब्याह दी हों। कोई टोकता तो बड़ी बेफ़िक्री से कहते- ''जैसे बड़की का ब्याह हो गया, वैसे ही ये दोनों भी अपने घर चली जाएँगीं।'' ऐसा कहते हुए वे इस बात पर ध्यान ही नहीं देते, कि बची हुई दोनों बेटियाँ अब बड़की के ब्याह वाली उमर को भी पार गई हैं। खैर बड़े बहनोई अच्छे निकले और उन्होंने मंझली की शादी का जुगाड़ जमाया। मंझली इस वक्त चालीस की हो रही थीं। बात जम गई और शादी भी हो गई। आभा जी अब तक परमानेंट हो गई थीं, और तरक्की भी पा चुकी थीं। वे भी तो चालीस को छूने वाली थीं आख़िर। आभा जी ने भी अब उम्मीद जगाई। उन्हें तो वैसे भी शादी का बहुत शौक़ था। सजने-धजने का, ज़रीदार कपड़े

पहनने की शौकीन हैं आभा जी। लेकिन तभी एक हादसा हो गया। पिताजी एक रात बाथरूम में गिर पड़े। अस्पताल में भर्ती किया गया। ब्रेन स्ट्रोक था, जिसके चलते आधा शरीर लकवाग्रस्त हो गया उनका।

बीमार पिता को देखने भाई आए। आभा जी ने सोचा शायद बड़े शहर में ले जा के उपचार की बात करें। लेकिन उन्होंने जो कहा उसके बाद आभा जी ने कभी भाइयों से कोई उम्मीद नहीं की। बड़े भाई बोले- ''अब क्या बाहर ले जाना, क्या फ़ालतू खर्चा करना। उम्र देख रही हो इनकी? अस्सी के ऊपर चले गए हैं। तुम्हारी भाभी वैसे भी अधिकतर समय बेटे के पास रहती है। सो इनकी देखरेख कौन करेगा? यहाँ तो तुम हो, सारी व्यवस्था जमी हुई है, कोई दिक्कत हो तो खबर करना। भगवान् तो अब इनकी सुन ले तो बढ़िया।''

पिता के लिए ऐसे प्रेमपूर्ण उद्गार सुन के आभा जी कट के रह गईं। बड़े भाई खुद साठ साल के हो रहे थे सो उनसे कुछ कह न पाईं। लेकिन अब ये तय हो गया था कि आभा जी का ब्याह नहीं होगा। पिता की सेवा का दायित्व उन्हीं पर है। कमाऊ हैं, सो भाइयों को रुपया भेजने की चिन्ता भी नहीं करनी है। एक फ़ैसला और सुना गए बड़े भाई। ये जो घर है, उसका समय रहते तीनों भाइयों में बंटवारा हो जाए, वरना पिता यदि अचानक चले गए तो बाद में फ़िजूल झगड़ा होगा, जो वे करना नहीं चाहते। आभा जी दंग रह गईं...! तीनों भाइयों के बीच बंटवारा!! जिन बहनों ने इस घर को सहेजा, एक एक ईंट लगवाई, आँगन को सालों साल लीपा-पोता उनका कोई हक़ नहीं! खैर! उन्होंने कोई उज्र नहीं किया। भाइयों ने आपसी परामर्श से मकान बेच दिया और पैसा तीनों भाइयों में बाँट लिया। बहन को परामर्श दे दिया कि मकान एक महीने में खाली कर देना है, सो तुम सरकारी क्वार्टर के लिए आवेदन कर दो, पिताजी और ज़रूरी सामान के साथ वहाँ शिफ़्ट हो जाओ। वैसे भाईसाब ये सलाह न भी देते तब भी आभा जी को करना तो यही पड़ता।

मकान का पैसा हाथ में आने के बाद भाई लोग बहन की तरफ़ से निश्चिंत हो गए। न कोई आना, न जाना। कभी कभार फ़ोन कर लेते, वो भी भाभी ही बात करतीं। आभा जी ने भी रिश्तों से हाथ जोड़ लिए थे। अपने घर से बेदखल होते ही बीमार पिता और बीमार हो गए। न बोल पाने की तक़लीफ़ और बढ़ गई। इशारे से पूछते- ''तुम्हें कुछ दिया?'' आभा जी 'हाँ' में सिर हिला के पिता को तसल्ली दे देतीं। लेकिन पिता घुलते गए और बमुश्किल एक महीने ही ज़िन्दा रह पाए सरकारी क्वार्टर में।

पिता के जाने के बाद आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ। भाई लोग अब अक्सर फ़ोन करने लगे। भाभियाँ छुट्टी में घर आने का न्यौता देने लगीं। नाती-नातिन कहीं जा रहे होते तो भाई साधिकार कहते-

''आभा, मिंटू लखनऊ जा रहा, ज़रा फ़लाँ तारीख का रिज़र्वेशन तो करवा दो। सेकंड ए.सी. में करवाना।''

आभा जी का मन तो नहीं करता, लेकिन फिर भी रिज़र्वेशन करवा देतीं।

बड़की जिज्जी साधिकार कहतीं- ''आभा, बिन्नी को फलाँ टेस्ट देने भोपाल जाना है। तुम चली जाओ उसके साथ। टेस्ट रविवार को है, सो तुम्हारा ऑफ़िस भी न छूटेगा। शनिवार की रात निकलो। बड़े सबेरे गाड़ी भोपाल पहुँच जाती है। होटल में रूम बुक कर लो सो वहाँ नहा-धो के फ्रेश हो जाएगी बिन्नी। फिर रात को यही गाड़ी चलेगी सो सुबह तुम अपने ठिकाने पर। है कि नईं?''

जब भाइयों का काम आभा जी कर रहीं, तो जिज्जी का काम टालने का सवाल ही नहीं। आभा जी टिकट करवातीं, होटल, खाना, ऑटो, पॉटो सबका खर्चा करतीं। बदले में जिज्जी हँसते हुए कहतीं- ''आभा तुमने बड़ी मदद कर दी।'' आभा जी दिल से खुश होतीं। भाई तो इतना भी नहीं कहते। बल्कि कभी-कभी तो मज़ाक में भतीजे कह भी देते- ''बुआ, इत्ता पैसा कमा रही हो, का करोगी? हमारे नाम कर जाना सब।'' आभा जी जानती हैं, सारे रिश्ते अब पैसे की वजह से ज़िंदा हो गए थे। बहनों की बात अलग है। उनके साथ लम्बा जीवन बिताया है आभा जी ने सो उनके लिए अलग प्रीति है मन में। सब अपनी ज़रूरतों का ज़िक्र करते हैं, लेकिन आभा जी की ज़रूरत का किसी को ख़याल नहीं। भूले से भी कोई नहीं पूछता- ''आभा तुम कैसी हो? अकेले बुरा लगता होगा न?'' न कभी कोई शादी का ज़िक्र करता है। पैंतालीस की उमर तक तो आभा जी ने इंतज़ार भी किया था कि शायद बड़ी जिज्जी कोई रिश्ता खोजें। उनका रिश्ते का देवर आभा जी को अच्छा भी लगता था, ऐसा ज़िक्र उन्होंने मुझसे किया था। लेकिन जिज्जी ने इस संबंध में कोई बात आगे नहीं बढ़ाई। मैंने कहा भी तो - ''अरे नहीं रे। एक घर में दो बहनें ठीक नहीं।'' कह के मामला ही ख़त्म कर दिया।

पिछली दफ़ा मैंने आभा जी से पूछा था कि इतनी लम्बी नौकरी कर डाली, तुम्हें कोई पसन्द नहीं आया? कोई हो तो खुद कर डालो शादी। काहे किसी के कहने की बाट जोहना? तो ज़ोरदार ठहाका लगा के बोली थीं आभा जी- ''अरे यार पूरा शहर तो दीदी कहता है, प्रेम कौन करेगा?''

मैं यह नहीं कह रही कि शादी जीवन का अनिवार्य अंग है, लेकिन ज़िन्दगी का एक मकाम ऐसा आता है, जब एक साथी की ज़रूरत पड़ती है। जीवन संध्या में जब न नौकरी होती है, न परिवार तो अकेला व्यक्ति और अकेला हो जाता है। रात-बिरात कुछ हो जाए तो किसी को पता ही न चले। ये अलग बात है, कि स्वेच्छा से जिए जाने वाले जीवन का अपना अलग महत्त्व और आनन्द है। न कोई बक-बक, न झिक-झिक। न बच्चों की चिन्ता, न ससुराल के दुख। लेकिन हमारी सामाजिक व्यवस्था ऐसी है न कि यदि किसी लड़की की शादी नहीं हुई, तो लोग उसका जीना हराम कर देंगे। ऐसी सहानुभूति से बात करेंगे जैसे पता नहीं कौन सा दुखों का पहाड़ टूट पड़ा हो। या फिर पीठ पीछे उसका भरपूर चरित्र चित्रण कर डालेंगे, वो भी बदचलनी के टैग के साथ।

पिछले दिनों आभा जी को ट्रेनिंग देने कई बार झांसी जाना पड़ा है। वहीं मुलाक़ात हुई थी उन सज्जन से। आभा जी से दो-तीन साल बड़े होंगे। दो बेटे हैं, दोनों अपनी नौकरियों और परिवारों में व्यस्त हैं। दोनों ही दो साल हुए, देश से बाहर हैं, सो साल में एक बार ही आ पाते हैं। पत्नी का तीन साल पहले देहान्त हो गया। तब से अकेले हैं। आभा जी को पसन्द करने लगे हैं, ये अहसास आभा जी को भी है, लेकिन इस उम्र में प्रेम की अनुभूति और उसका प्रदर्शन

आभा जी के रूढ़िवादी मन को पसन्द नहीं आ रहा। पिछले एक साल में तीन बार गई हैं आभा जी वहाँ और हर बार उनसे मुलाक़ात हुई है। उनकी आँखें बताती हैं कि वे आभा जी के प्रति कौन सा भाव रखते हैं। ये अलग बात है कि वे बहुत सभ्य, पढ़े-लिखे, ऊँचे ओहदे पर पदस्थ हैं। उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा जो अभद्र लगे। प्रेम प्रदर्शन भी उन्होंने नहीं किया है। उनके अंडर में ही आभा जी को ट्रेनिंग संपन्न करवानी होती है।

पिछले महीने उनके बेटे ने बहुत संकोच के साथ आभा जी के सामने विवाह का प्रस्ताव रखते हुए कहा- ''आंटी, मैं जानता हूँ आपको अटपटा लगेगा, लेकिन मैं अपने पिता के विवाह का प्रस्ताव आपके सम्मुख रख रहा हूँ। आप दोनों अकेले हैं, और दोनों को ही साथ की ज़रूरत है, ऐसा मुझे लगता है। बाक़ी आप का फ़ैसला ही अन्तिम होगा।'' सुन के आभा जी का पूरा शरीर झनझनाहट से भर गया। जिस बात का उन्हें डर था, वो हो गई, वो भी उनके बेटे के द्वारा। दो दिन बाद उनका फ़ोन आया, और आभा जी ने ज़रा डपटते हुए ही उनसे बात की -''कैसे उनकी ऐसा सोचने की हिम्मत हुई? ऐसा अटपटा प्रस्ताव रखने के पहले उन्होंने क्या सोचा था कि आभा तो शादी को तैयार बैठी है? सुनते ही 'हाँ' कर देगी? पूरी ज़िन्दगी अकेले जी ली है मैने, सो मुझे कोई अकेलापन नहीं सालता अब श्रीमान।''

कुछ दिन उनका फ़ोन नहीं आया। फिर एक दिन माफ़ी माँगते हुए उन्होंने बात करते रहने का आग्रह किया। तब से बीच-बीच में फ़ोन कर लेते हैं। और आभा जी हर बार उनकी आवाज़ सुनते ही झुँझला जाती हैं। कुछ दिन पहले उन्होंने मोबाइल नम्बर माँगा था और आभा जी ने ये सोच के दे दिया कि लैंड लाइन में नाम नहीं दिखता, सो हर बार उनका फ़ोन उठा लेती हैं। मोबाइल में कॉल आएगा तो उनका नाम दिखेगा और वे उसे नहीं उठाएँगीं। लेकिन हमेशा एक ही नम्बर इस्तेमाल करने वाली आभा जी भूल गईं, कि उनका व्हाट्स एप भी तो इसी नम्बर पर चलता है!! आज रात अचानक ही व्हाट्स एप पर गुड नाइट पढ़ के चौंकी आभा जी। जवाब नहीं दिया। अगले दिन सुबह फिर फूलों के गुच्छे सहित सुप्रभात हाज़िर था। आभा जी फिर चुप्पी साध गईं, लेकिन ये सिलसिला चल निकला। आभा जी भले ही जवाब नहीं दे रहीं, लेकिन वे तो जान ही रहे कि उनके मैसेज पढ़े जा रहे हैं। अब दिन में एकाध बेहद सलीके का फ़ॉर्वर्डेड मैसेज भी आ जाता। बीच-बीच में किसी किताब का ज़िक्र भी करते। कभी किसी लेखक का नाम पूछते। आभा जी तब भी जवाब नहीं देतीं। दो महीने से ज़्यादा हो गए, सिलसिला बदस्तूर जारी है। सुबह की गुड मॉर्निंग और रात का गुड नाइट तो हर हाल में आता ही है।

इधर तीन दिन हो गए थे, उनका कोई मैसेज आए हुए। रोज़ की तरह उस दिन भी नेट ऑन करते ही आभा जी ने व्हाट्स एप चैक किया। वहाँ उनका गुड मॉर्निंग नहीं था। आभा जी ने सोचा बला टली। रात में गुड नाइट भी नदारद। आभा जी मुस्कुराईं। सोचा-आख़िर कब तक एकतरफ़ा मैसेज करते महोदय? दूसरे दिन फिर सुप्रभात ग़ायब!! शुभरात्रि भी नहीं! आभा जी ने चैन की साँस लेनी चाही, लेकिन ले नहीं पाईं। उन्हें तो आदत हो गई थी इन सुप्रभात और शुभरात्रियों की...! जिन संदेशों का जवाब न दे के वे बड़ी प्रफुल्लित रहा करती थीं सारा दिन, आज उन्हीं संदेशों की अनुपस्थिति अखर रही थी उन्हें। मन को झिड़का- ''क्या इस उमर में ऊटपटाँग सोच! न आए मैसेज। अच्छा ही हुआ।'' लेकिन थोड़ी देर बाद ही उन्होंने खुद को संदेश न आने के बारे में सोचते पाया।

''कहीं बीमार तो नहीं?''

''होने दो, मुझे क्या?''

''इंसानियत के नाते ख़ैरियत तो पूछी जानी चाहिए आभा।''

झिझकते हुए मोबाइल के कॉन्टेक्ट्स में से उनका नम्बर निकाला। देखती रहीं। लगाएँ, न लगाएँ ? कहीं कुछ ग़लत न सोच लें। लेकिन भला हो इस टच स्क्रीन का!! इसी ऊहापोह में कॉल के बटन पर कब हाथ पड़ गया आभा जी जान ही नहीं पाईं। जानी तो तब, जब मोबाइल के अन्दर से ''हैलो'' जैसी कुछ आवाज़ उन्हें सुनाई दी। अब क्या करतीं? पूछ लिया- ''सब ख़ैरियत?''

''जी हाँ सब बढ़िया। बेटा आया है सो उसके साथ व्यस्त था तीन दिन से।अच्छा लगा आपने फ़ोन किया।''

''जी, आपके मैसेज नहीं मिले तो चिन्ता हुई कि कहीं बीमार न हों।'' सकुचाती आवाज़ में आभा जी ने कह ही दिया। कोई इस वक़्त उनके चेहरे को देखता, तो गुलाबी चेहरा कितना लाल हो गया है, समझ पाता।

''अच्छा जी! तो आपको मेरे मैसेज का इंतज़ार रहता है...!'' बेहद खुशगवार आवाज़ आई वहाँ से। ''जानती हैं आभा जी, हम दोनों उम्र के जिस दौर में हैं, उस दौर में किसी भी दिन दुनिया से कूच कर जाएँगे निहायत अकेले ही, और किसी को पता भी नहीं चलेगा। बेटे-बहू आज ही निकलने वाले हैं, इंडिया में ही उन्हें और भी दो-तीन जगह जाना है, फिर वापसी। सूने घर में बहू करे भी क्या? ये घर अब घर तो लगता नहीं। कुछ भी व्यवस्थित नहीं। कांता जब तक थी, घर में रौनक थी, अब तो उसकी गृहस्थी मैंने तितर-बितर कर दी, सो कांता की यादें भी उसकी तस्वीर में ही सिमट के रह गई हैं। चाहता था, हम दोनों एक दूसरे का साथ दे पाते...। कांता भी खुश होती, अपनी गृहस्थी को फिर से संवरा हुआ देख के !''

पता नहीं क्यों आज आभा जी का झिड़कने का मन नहीं हुआ। उन्होंने मोबाइल रखते-रखते एक नज़र अपनी व्यवस्थित गृहस्थी पर डाली। उनका मन हो रहा था कि झांसी पहुँच कर वे उनका घर व्यवस्थित कर दें। ये तो सरकारी फ़्लैट है, रिटायरमेंट के बाद छोड़ना ही होगा। यहाँ कितना भी व्यवस्थित कर लें, डेरा तो उखड़ेगा ही। फिर आज तक किसी ने उन पर ध्यान नहीं दिया। वे क्या चाहती हैं, कैसे रहती हैं, किस मुश्किल में हैं, कोई पूछने वाला नहीं। एक हमदर्द मिला है, जिसे केवल मेरी चिन्ता है, ये परवाह किए बिना कि मैं उसके साथ रिश्ते में बँधूँगी या नहीं, लगातार मेरी चिन्ता करता है। पैसे की उसे कमी नहीं, कोई और स्वार्थ भी नहीं।

रात बारह बजे आभा जी के मोबाइल पर चमका- ''शुभरात्रि''

आभा जी मुस्कुराईं। लगा एक स्माइली भेज दें। फिर नहीं भेजी। कुछ और लिखना चाहा, नहीं लिख पाईं। मन ही मन फ़ैसला सा करतीं, उनकी उँगलियों ने टाइप किया- ''शुभरात्रि।''

***

स्मृतियों के प्रश्नचिह्न

अंशु जौहरी

पीड़ाएँ कई प्रकार की होती है। कुछ सार्वभौमिक होती है, कुछ स्थानीय- लोकल! जो किसी विशेष जगह, उसकी जड़ों से इस तरह जुड़ी होती है कि जिन्हें स्वयं भोगे बिना, किसी के लिए उन्हें समझ पाना लगभग असंभव ही होता है। ज़्यादातर लोगों के लिए वो अचीन्ही बनी रहती है, उपेक्षित, उन पानी की बूँदों की तरह जो आपदा और दर्द के समंदर में गिरने के बाद बड़ी सरलता से भुलाई जा सकती है।

मैं पिछले चार घंटो से बड़ी बेसब्री से साहिल की प्रतीक्षा कर रही हूँ। यूँ चलने से पहले उसने मुझसे कहा था कि मुझे परेशान होने की ज़रूरत नहीं है और वह ऊबर लेकर घर पहुँच जाएगा। पर मैं कैसे न जाती एअरपोर्ट उसे लेने। वह आज भले ही चौबीस बरस का नौजवान हो पर मेरी दृष्टि में वह अब भी दुधमुँहा था, दो बरस का शैतान गप्पू, तेरह बरस का जवाँ होता मासूम बच्चा था। पूरे एक साल दो महीने बाद, पूर्वी यूरोप के कई शहरों की यात्रा से संबद्ध एक आर्ट फैलोशिप खत्म करके वह घर आ रहा था। प्लेन के जमीं छूते ही उसने मुझे फ़ोन किया था। ''प्लेन लैंड हो गया है माँ।'' फिर दूसरा फ़ोन उसके पंद्राह मिनट बाद आया था, जब उसने फुसफुसाते हुए कहा था, ''पता नही माँ, मुझे कुछ पूछताछ के लिए ले जा रहे है।'' उसके बाद जो उसका फ़ोन बंद हुआ तो अब तक कोई खबर नही। वह अब तक अंदर ही है। बाहर नहीं आया है...

साहिल की प्रतीक्षा करते, बीते वक्त के एक धुँधले से पल ने मुझे धीरे-धीरे घेर लिया। मेरे मस्तिष्क के परिदृश्य पर पहले कुरैशी आंटी उभरती है, फिर टुटू। जैसे दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हो। मेरी स्थानीय पीड़ा की खोहों में दुबके कुछ उपेक्षित अवसाद जाग उठते है।

टुटु की उम्र तब होगी कोई सात बरस, जब मैंने कॉलेज खत्म होने पर बिना वेतन, मानसिक रूप से विकलांग बच्चों के स्कूल में, सहायक अध्यापिका के बतौर पढ़ाना आरंभ किया था। टुटु मेरी क्लास में था। अपनी उम्र के हिसाब से बेहद दुबला-पतला, तेल में चिपचिपाते काले, घने बाल। कई कई बार उसकी सुबह की जागी, अनधोई आँखों के कोनों में कीचड़ चिपका होता था, उसके श्यामल हाथ पैरों की त्वचा रूखी और फटी, और उँगलियों के बढ़े हुए नाखून मैल से भरे रहते थे। उसकी कमीज़ हमेशा आधी खुसी रहती। टुटु को मुँह ऊपर कर हवा में थूकने की गंदी आदत थी। फुत्त-फुत्त वह हवा में थूकता और अपने ही थूक की बौछारों में खूब खिलखिलाता। सब उसके साथ रहने से कन्नी काटते थे। थोड़ी सी भी आवाज़ ऊँची करके मना किया तो सहम कर एक कोने में बैठ जाता था और घंटो सहमा रहता था। या तो आप उसके थूक की बौछारों को बरदाश्त करो या उसके सहमे हुए चेहरे को। टुटु के दिमाग के किसी हिस्से के असंतुलन की वजह से टुटु का मानसिक विकास उसकी उम्र के मुकाबले बहुत धीमा था। टुटु बोल नहीं सकता था और ना ही खाने को चबा सकता था। चबाने की कोशिश की तो खों खों खाँसी। फिर भी उसके खाने के डिब्बे में पराँठे होते थे या बड़े-बड़े सब्जी के ढ़ेले। बहुत संदेश भेजने के बाद भी उसके डिब्बें में कभी पिसा या नरम खाना नहीं आता था। कभी उसके बाल सँवारते, कभी नाखून

Anshu Johri, 2839 Norcrest Dr
San Jose CA 95148. USA
मोबाइल: 408-274-5160
ईमेल: anshu@udgam.com

काटते, हम उसकी माँ के बारे में ज़रूर सोचते थे और अक्सर अपने मासूम बेटे पर ध्यान न देने के लिए उसकी भर्त्सना किया करते थे। उसके नज़रिए की न कभी हमने परवाह की और ना ही जानने की कोशिश की। टुटु हमारी नज़रों में एक ऐसा अनचाहा स्वप्न था, जो बिना किसी कारण अपने माता-पिता की आँखों में उतर आया था और शायद उनकी आँखों से उतर भी गया था।

एक दिन टुटु स्कूल नहीं आया, न उसके दूसरे दिन, न दूसरे के दूसरे दिन। कुछ दिन उसकी प्रतीक्षा में बीते और फिर हमें पता लगा कि अब वह कभी नहीं आएगाा। टुटु के घर के पिछवाड़े में एक पानी की टंकी थी। टंकी ज़्यादातर लोगों के लिए न तो बड़ी थी, न गहरी पर टुटु के लिए थी। खबर सुनने के बाद कल्पनाओं के जाले बुनते मन ने देखा धप-धप करके टुटु को टंकी की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए- थूक की बौछार बिखेरते हुए, हँसते हुए टंकी में झाँकते हुए पानी में अपनी परछाईं छूने की कोशिश करते उसके नन्हें हाथों को जैसे जलपरियों ने खींचकर अपनी गोद में भर लिया और एक छपाक की आवाज़ के साथ, पानी में विलीन होता चला गया होगा टुटु। टुटु चिल्लाया तो ज़रूर होगा पर उसकी चीखें शायद खुद उस तक भी नहीं पहुँची होंगी, किसी और के कानों तक कैसे पहुँचती? एक बेबस रोष और असहनीय पीड़ा अंतर को भेदती चली गई थी, यह सोच कर कि टुटु की अंतिम साँसों के बाहर निकलते बुलबुलों ने टुटु की मदद माँगती खामोश चीखों से अधिक शोर किया होगा।

मेरे सैल फ़ोन पर ''बीप''! नहीं, साहिल का मैसेज नहीं है, कोई और है। ''साहिल टुटु नहीं है, साहिल टुटु नही है।'' मैं दृढ़ता से दोहराती हूँ। मेरे काँपते हृदय की गति तीव्र है। अतीत वापिस मुझे खींचता है।

जाने किस योग से, जिस दिन टुटु बिछुड़ा, उसी दिन राजनैतिक दाँवपेंचो के चलते, मोहल्ले के मंदिर के बाहर गाय का माँस, और मस्जिद के अहाते में सुअर का माँस पाया गया था। दोनों समुदायों में यह खबर आग की तरह फैली और मरे हुए जानवर के माँस को लेकर इंसान, इंसान के रक्त के प्यासे हो गए। प्रतिशोध की ज्वाला धधक उठी, दंगे छिड़ गए। जब दंगे छिड़ते है तो बस्तियों, दुकानों, मकानों, वाहनों, दीवारों का अस्तित्व भी खतरे में पड़ जाता है और उनका भी वही धर्म, वही मज़हब हो जाता है, जो उनमें रहनेवालों का होता है। बस्ती, मोहल्ला, कॉलोनी चाहे किसी की भी हो, उसमे हमेशा कुछ अल्पसंख्यक होते है जिनका जीवन और मरण तनाव के समय बहुसंख्यकों की अंधी भीड़ पर निर्भर करता है। स्थान-स्थान पर सिर्फ धर्म के मुखौटे बदलते है, नहीं बदलते हैं तो धर्म के नाम पर वार करने वालों की क्रूरता और वहशीपन, और भोगने वालो की पीड़ा, निर्बलता और अकेलापन।

इन अल्पसंख्यकों और बहुसंख्यकों के बीच एक वर्ग ऐसा भी होता है जो दया जानता है, मानवता में विश्वास करता है, समझता है कि बस्तियों, दुकानों, मकानों, वाहनों, दीवारों जैसी निर्जीव वस्तुओं का धर्म नहीं होता, जो सही गलत का भेद तो जानता है, पर अपनी निजी आवश्यकताओं में ही उलझकर रह जाता है, ब्राऊन ड्वाफ्स की तरह! मन के कसैलेपन में उभरते है- ''ब्राऊन ड्वाफ्स'' या भूरे वामन, ब्रह्मांड में डोलते पिंड जो न सितारा बन पाते है और न ही ग्रह। जिनकी आंतरिक ऊर्जा ग्रहों से अधिक होती है किंतु उतनी नहीं जितनी सितारा बनने के लिए चाहिए होती है। वे ठंडी गैसों के गोले, उपस्थित होकर भी अदृश्य रहते है।

''नहीं! मै ब्राऊन ड्वाफ नहीं हूँ। मैं ब्राऊन ड्वाफ नहीं थी।'' मैं बुदबुदाती हूँ। एक कभी न समाप्त होने वाली चिंता की यातना मुझे बेबस करती है। मैं घबरा कर सैल फ़ोन पर मौजूद हर एक ऐप पर साहिल का संदेश ढूँढ़ती हूँ। मैसेंजर, वाट्सऐप, इंस्टेग्राम, ट्विटर, कहीं भी, एक पंक्ति, एक शब्द! मैं उसे फ़ोन करती हूँ, जो बज बजकर अंततः शांत हो जाता है। मेरी आँखें आँसुओं की बाढ़ों से जूझती हैं।

जैसी चिंता मैं आज कर रही हूँ, वैसी ही उस रात भी की थी जब कुरैशी आंटी की करुण गुहार, गहन अंधकार को चीर कर गूँज रही थी, पर सब बहरे हो गए थे जैसे, किसी बहरे अंतरिक्ष के निष्क्रिय, भूरे वामन।

टुटु की मौत का गम ठंडा नहीं हुआ था पर सांप्रदायिक दंगों की वीभत्स अफवाहों के दावानल से भयभीत हो दुबक कर बैठ गया था। किसी बस्ती की औरतों का बलात्कार कर उनके वक्षस्थलों को काटने के चर्चे थे, तो कही मारकाट के बीच नवजात शिशुओं तक को तलवार घोंप कर मारने का कहर था। जल्दी ही पूरे शहर में कर्फ़्यू लग गया था। सड़के खाली होने लगी थी। सब तरफ, हर कोने पर पुलिस ही पुलिस। फिर सेना को भी बुला लिया गया था। इससे हिंसा में तब्दीली नहीं हुई, उसकी सूरत में तब्दीली हुई थी। समय प्रतिकूल हो तो हिंसा को भी वैद्यता मिल जाती है, वर्दियों में सजे कानून का संरक्षण करते उन लोगों के द्वारा, जो अंततः होते तो इंसान ही हैं, जिनके भीतर निजी पूर्वाग्रह होते हैं और ढंके छुपे जानवर भी। और इस तरह के जानवर से संग्राम बहुत कठिन होता है जो कानून की हिफ़ाज़त तले कानून की धज्जियाँ उड़ा दिया करता है। जो प्रमाण के बगैर सज़ा दे सकता है, जिसका जुर्म, जुर्म होकर भी जुर्म नहीं होता, जिसकी सुनवाई नहीं होती। जो सिर्फ आदेश का पालन करने के नाम पर अपना पागलपन भूखे शेर सा खुला छोड़ देता है।

कुरैशी आंटी हमारे मोहल्ले की शान थीं। वो भौतिकी की प्रोफ़ेसर थीं और उनका बेटा फैज़ान मोहल्ले की जान था। फैज़ान के पास एक पुरानी कार थी जो खस्ता हाल में होकर भी वक्त ज़रूरत पर चल पड़ती थी। किसी को डॉक्टर के पास ले जाना हो तो फैज़ान, बस छूट जाने पर स्कूल छोड़ना हो तो फैज़ान, रात को दवाइयाँ मँगानी हो तो फैज़ान, ऑटो नहीं मिल रहा और बाज़ार जाना हो तो फैज़ान, गणित के सवाल नही बन रहे तो फैज़ान, बैडमिंटन की कोचिंग के लिए, फैज़ान। फैज़ान हमारे मोहल्ले का 'फ्लोरैंस नाइटेंगैल' था। मुसीबत का साथी और बहुत ही हँसोड़।

दंगे की उस रात, कुछ डेढ़ बजे के आसपास किसी की चीखों से मेरी कच्ची नींद टूट गई थी। जगने पर आवाज़ पहचान गई थी मैं। किसी बड़े ट्रक जैसे वाहन के रुके हुए शोर के बीच भी कुरैशी आंटी की आर्द, घबराई हुई आवाज़ गूँज रही थीं। ''कहाँ ले जाना है उसे। वह चार दिन से घर पर है। कॉलेज भी नहीं गया, बीमार था। ऐसे कैसे ले जा सकते है आप? वारंट है

आपके पास?''

उस दोपहर सबने कुरैशी आंटी को घर-घर जाते देखा था कि जब तक स्थिति संभल नहीं जाती, कोई फैज़ान को अपने घर पनाह दे दे। सुना था कि सोलाह से पच्चीस बरस के लड़कों की पुलिस धरपकड़ कर रही थी। लेकिन सब कोई न कोई बहाना करके टाल गए थे।

मैंने फटाफट जूतियों में पैर डाले थे और बाहर के दरवाज़े की ओर दौड़ चली थी जब पापा की कड़कदार आवाज़ गूँजी थी, ''कहाँ जा रही हो, इस वक्त।''

''पापा, कुरैशी आंटी की चीखें हैं ये। आप भी आईए ना! उन्हें हमारी ज़रूरत है।''

''जो भी है तुम्हारा उससे कोई सरोकार नहीं है। अपने काम से काम रखो। शहर का क्या रुख है इसका अंदाज़ तो होगा तुम्हें। सो जाओ जाकर।''

'पापा हमें शहर से क्या करना! ये कुरैशी आंटी और फैज़ान है पापा।''

''पता है मुझे। और आजकल किसी का कुछ पता नहीं होता कि किसके घर के अंदर क्या चल रहा है।''

''पापा, आप कैसे उनकी मिन्नत माँगती चीखों को नज़रअंदाज़ कर सकते है?''

''वो हममें से नहीं हैं।''

''माने...?''

''माने, तुम अपने कमरे में वापस जाओ।''

उस दिन अर्जुन की व्यथा समझ पाई। अपनों से युद्ध करने का धर्मसंकट क्या होता है? तय किया था कि कभी भी, किसी अपने को इस तरह की दुविधा में नहीं डालूँगी। मन पर पत्थर और हारी हुई बगावत की ग्लानि लिए मैं कमरे में लौट गई थी। उसी दिन पापा के स्वरूप का एक भाग मेरी नज़रों से गिर गया था।

''कहाँ ले जा रहे है उसे? उसने कुछ नहीं किया, कुछ नहीं किया। वारंट भी नहीं हैं आपके पास। बोलिए कोई वारंट है? फैज़ान, मेरे बच्चे। फैज़..फैज़ान...।''

कुरैशी आंटी की चीख़ें खामोश रात की छाती पर गिरती रही थी उस रात...मगर आवाज़ को गूँजने के लिए माध्यम की आवश्यकता होती है पर लगता था कि हम सबके आसपास एक वैक्यूम की संरचना हो गई थी।

फैज़ान को साथ ले जाते ट्रक के खर्राटेदार शोर ने कुरैशी आंटी के रुदन को कुछ देर के लिए बौना कर दिया था। वो सारी रात, एक ज़हरीले पानी की टंकी में बिलखती रही- ज़हरीले पानी की टंकी, जो हमारा मोहल्ला बन गया था और टुटु की दम तोड़ती साँसों के बुलबुलों की तरह उनका मर्म भी किसी के कानों तक नहीं पहुँचा।

उस दिन से पहले कभी किसी ने उन्हें ''हम में से नहीं है'' नहीं माना था। टुटु भी हममें से नहीं था। मेरे वहाँ रहते फैज़ान लौटकर नहीं आया। कुरैशी आंटी अपने घर के बंद किवाड़ों के पीछे रोज़ उसका रास्ता देखती थीं। शायद वह कभी लौट कर आ जाए ...इस एक उम्मीद पर, वो वही बनी रहीं, हमारे मोहल्ले में, जहाँ वो सबसे जुदा थीं.....

फैज़ान के न लौटने की याद से देह में एक झुरझुरी सी दौड़ती है। मैं अपने सैल फ़ोन पर फिर से साहिल का संदेश ढूँढ़ती हूँ और निराश होती हूँ। हो सकता है ना, कि साहिल भी कभी न लौटे। ज़्यादा देर नहीं लगती किसी को भी ''हममें से एक'' से ''हममें से नहीं है'' बनने में।

उसकी चमड़ी का रंग, एथनिसिटी, उसका नाम, न जाने किस कारण साहिल को रोक लिया है। शायद इमिग्रेशन वालों ने, शायद एफ.बी. आई ने, शायद पुलिस ने! कुछ पता नहीं चलता। पर क्यों?

मेरे मस्तिष्क में दबी घुटी आवाज़ें चीख रही हैं- टुटु की, कुरैशी आंटी की, फैज़ान की, साहिल की और मेरी भी। ये आवाज़ें धीमी नहीं होती बल्कि तीव्र से तीव्रतर होती जा रही है, एक लयबद्ध कोरस ''हममें से नहीं, हममें से नहीं'' के जाप के विरुद्ध, एक बार फिर 'ब्राऊन ड्वाफ्स' अर्थात् भूरे वामन के बर्फीले, बहरे कानों पर।

मैं तब विवश थी, पर अब नहीं हूँ। अगर कैद कर के रखो तो जुनून पागल कर देता है। मैं उठ कर खड़ी होने को होती हूँ कि पीछे से एक थकी सी आवाज़ पुकारती है, ''माँ!''

''साहिल!'' मुड़ कर देखती हूँ तो वही है।

''कहाँ रह गए थे? फ़ोन नहीं किया?'' मैंने आगे बढ़कर उसे सीने से लगा लिया। बहुत रोका पर आँसू थे कि टप...टप टपकते जाते थे।

''फ़ोन और कम्प्यूटर ले लिया माँ।''

''क्यों?''

''क्योंकि मैंने पासवर्ड नहीं दिया। उनके अपने कारण होंगे मुझे रोकने के, मेरे पास अपने कारण थे नहीं बताने के। कितनी देर रोकते? पासपोर्ट तो अमेरिका का है ना। और फिर मुझे पता था कि तुम भी चुप होकर बैठने वालों में से तो हो नहीं। आज तो जैसे ज़िन्दगी ने मेरी दिशा ही बदल दी। चलों घर चलते है।''

''तो किस तरफ का रुख ले रही है ज़िन्दगी ?'' मैंने उसका हाथ खींचकर बाहर निकलते हुए पूछा।

''मैं अगर बाहर नहीं आता तो तुम क्या करती माँ?''

''मैं...मैं ..'' शब्द कहीं लड़खड़ा गए थे।

''मैं आज जान पाया माँ कि खोए हुए, गुम हुए लोग अपने पीछे एक प्रश्न चिह्न छोड़ जाते है। मेरे हिसाब से प्रतीक्षाओं को 'क्लोज़र' मिलना चाहिए। मैं गुम हुए लोगों की आवाज़ बनना चाहता हूँ माँ, अगर मैं नहीं लौटता तो तुम्हें जिस तरफ जाना चाहिए, वह दिशा बनना चाहता हूँ।''

कहते है कि हम सबमें तारों की राख के कण है। पर रोशनी भरी सोच उस राख को फिर चमकना सिखा देती है। हम पार्किंग गैराज में पहुँच गए थे।

''तुमने 'ब्राऊन ड्वाफ्स' के बारें में पढ़ा है?'' मैंने कार का रिमोट दबाते हुए पूछा।

''सच में माँ! मैंने ही तुम्हें बताया था उसके बारे में। मेरी बिल्ली मुझी से म्याऊँ। और हाँ, गाड़ी मैं चला रहा हूँ। चाबियाँ पैर फेवोर!* हाँ तो, क्या कह रही थी तुम 'ब्राऊन ड्वाफ्स' के बारे में?'' उसने कार को रिवर्स करते हुए कहा।

मेरी स्मृतियों के प्रश्नचिह्न को साहिल ने एक पूर्ण विराम दिखा दिया था, उसके शब्दों में कहूँ तो-'क्लोज़र'। हम अपने घर की ओर चल पड़े थे।

***

*पैर फेवोर- स्पानिश में प्लीज़ या कृपया

घास का मैदान

शेर सिंह

''नमस्कार जी !''

''नमस्कार !''

''कैसे हैं आप ?'' मैंने मैदान के एक किनारे बैठी उस अधेड़ महिला को यह सोचकर प्रणाम किया था कि वह भारतीय होगी। उसने अपनी माँग में ढेर सा सिंदूर भरा हुआ था। माथे पर बड़ी सी चमकती लाल बिंदी थी। साफ, गौरवर्णी भरा -भरा चेहरा। मोटी -मोटी आँखें। आँखों के ऊपर उतनी ही मोटी -मोटी और घनी भौंहे। साड़ी पर ऊपर से लाल रंग का कार्डिगन पहने। लगता था, वह उत्तर भारत के किसी राज्य से है। शायद उत्तर प्रदेश या बिहार से ? वह नीचे बैठी अपनी टाँगे फैलाए, प्रैम पर एक छोटे से दुधमुँहे बच्चे को बिठाए उसे हिला- डुलाकर बहला रही थी। हालाँकि बच्चा चुप था। वह संभवत: उसका नाती या पोता था। उसका अपना बच्चा होने का मतलब ही नहीं था। इसका प्रमाण उसके चेहरे पर अंकित उसकी उम्र और शरीर दे रहा था।

''आप इंडियन हैं ?'' मैं उसे भारतीय समझ पूछ बैठा। बस, सामान्य जिज्ञासा के वशीभूत होकर।

''न... ना... नेपाल के हैं !'' मैं थोड़ा चौंका। यह मेरी ग़लतफ़हमी थी। अपनी समझ पर मैं अपने आप में थोड़ा झेंप गया।

''ओह... सॉरी !''

''कोई बात नहीं।'' उसने कहा

''आपको हिन्दी आती है ?''

''थोड़ी-थोड़ी... ज़्यादा नहीं।''

''नेपाल में कौन सी जगह से हैं ?''

''काठमांडू...''

''काठमांडू बहुत अच्छी जगह है।''

''हाँ..''

''आप यहाँ कैसे ?''

''बच्चों के पास आई हूँ। यह मेरी बेटी का बेटा है।''

''बहुत अच्छे ! वैसे... आपके बच्चे यहाँ क्या करते हैं ? बिजनेस...जॉब ?''

''जॉब करते हैं जी।''

शेर सिंह, नाग मंदिर कालोनी, शमशी,
कुल्लूस, हिमाचल प्रदेश - 175126.
मोबाइल: 08447037777
ईमेल : shersingh52@gmail.com

''वैरी गुड!''

''आप यहाँ कब से हैं ?''

''आठ महीने हो गए।''

''वाह... अभी और रहना होगा ?''

''हाँ ... चार महीने और रहना है।''

''कितने समय का वीज़ा मिला है ?''

''एक साल का...''

''मेरा नाम रवि है। मैं इंडिया से हूँ। मैं भी बच्चों के पास आया हूँ। हमारे बच्चे भी यहाँ जॉब करते हैं।'' मैंने अपना परिचय दिया। हालाँकि वह बता चुकी थी कि उसे हिन्दी नहीं आती है, लेकिन वह हिन्दी में अच्छे से बात कर रही थी। अच्छी हिन्दी बोल रही थी। बेशक बोलने के लहज़े से पता चल रहा था कि वह वाकई में हिन्दी भाषी नहीं है।

सिडनी शहर का यह अर्ट्रामॅन एरिया, और जर्सी रोड के किनारे बहुत ही खूबसूरत घास का मैदान है। शायद कुदरती घास भी नहीं है। कृत्रिम घास है, एस्ट्रो टर्फ ! लेकिन मैं इसे घास का मैदान ही कहूँगा। गोल, आँखों को बरबस अपने से बाँध कर रखने वाली हर ओर हरियाली, सुंदर और साफ - सुथरा बड़ा सा मैदान। चारों ओर युक्लिप्टस के ऊँचे -ऊँचे पेड़ों से घिरा हुआ। मैदान के एक किनारे बेसबॉल का कोर्ट बना हुआ है। पूरे मैदान को फुटबॉल, बेसबॉल आदि खेलने के उद्देश्य से गाढ़े सफेद, पीले और नीले पैंट से मार्किंग कर लाइनें खींची हुई थी। मैदान अलसुबह से रात 10.00 बजे तक तरह- तरह की गतिविधियों से गुलज़ार रहता है। अलसुबह सबसे पहले जॉगिंग करने वाले होते हैं। आठ -नौ बजते -बजते स्कूल के बच्चे इस मैदान से होकर स्कूल को आना- जाना शुरू करते हैं। छोटे -बड़े सभी उम्र के ! भिन्न-भिन्न शक्ल-सूरत वाले। इन बच्चों को छोड़ने इनकी माएँ, दादियाँ- दादू, नानू- नानी पता नहीं कौन-कौन होते हैं ? विभिन्न देशों, विभिन्न नस्लों के बच्चे हैं ! अंग्रेज़, चीनी, जापानी, भारतीय, यूरोपियन, श्रीलंकाई, पाकिस्तानी, थाईलैंडी ! पता नहीं कितने देशों, कितनी नस्लों के ! नीली शर्ट, ग्रे कलर वाले फुल पेंट। गहरे नीले रंग का हॉफ स्वेटर। सफेद कैनवास के जूते और सिर पर नेवी ब्ल्यू कलर का फैल्टी हेट। लड़कों का स्कूल ड्रेस। लड़कियाँ स्कर्ट में। स्कर्ट के नीचे घुटनों से ऊपर तक स्टॉकिंग्स अथवा कुछ वैसे ही। मल्टीलिंगुअल, मल्टीकल्चरल तथा मल्टीनैशनल। छोटे बच्चों को छोड़ने आए माँ-बाप, दादा- दादी, नाना- नानी को देखते ही बनता ! अधिकांश की शक्ल-सूरत एक दूसरे से बिल्कुल भी नहीं मिलती है।

सुबह 10.00 बजे के बाद मैदान में इक्के-दुक्के बूढ़े, बुज़ुर्ग धीरे-धीरे कदम बढ़ाते, टहलते नज़र आते। धूप में इन दिनों बिल्कुल भी गर्मी नहीं है। सितंबर महीने में टेम्प्रेचर अधिकतम 26 डिग्री से ऊपर नहीं जाता है। वो भी कभी -कभार ! अधिकतर 17-19 के करीब ही रहता है। यहाँ आजकल वसंत ऋतु है। मैदान में टहलने वाले इन बुज़ुर्गों के बारे कुछ नहीं कह सकते हैं। किस देश, दुनिया के किस भाग से हैं ? सबकी शक्ल-सूरत, बोल- भाषा, पहनावा -वेशभूषा, कार्य-व्यवहार अलग दिखता है। अंग्रेज़ यानी गोरे लोग तो सबसे अधिक हैं ही, चीन तथा चीनी प्रजाति के लोग भी कम नहीं दिखते हैं !

मैं भी कुल्लू से यहाँ अपने बच्चों के पास आया हुआ था। मेरी पत्नी नीरजा भी साथ आई हुई थी। यह मैदान घर के बिल्कुल पास में था। इसलिए मैं अक्सर ही यहाँ टहलने के लिए आ जाता था। मेरे जैसे पता नहीं कितने माँ- बाप अपने देश से बाहर अपने बच्चों के पास आए हुए होंगे ? बच्चे सपनों की दुनिया में, सपनों के शहर में, अपने सपने पूरा करने आए हैं। बुज़ुर्ग माता -पिता उनके सपनों को और मज़बूती से देखने तथा हकीकत में बदलने के प्रयोजन से आए हुए हैं शायद ? हम यहाँ कुछ दिनों पहले ही आए थे। आने के कुछ दिन बाद ही मैंने घर के पास इस सुंदर मैदान में टहलने आना शुरू किया था। एक तो मैदान बहुत अच्छा था, दूसरा आना -जाना बहुत सुविधाजनक था। घर में बैठे -बैठे बाल्कानी से इधर -उधर देखते, झाँकते बोर हो जाता, तो यहीं आ जाता था। मेरे जैसे दूसरे लोगों की भी संभवत: ऐसी ही दिनचर्या हो ? और ऐसे ही उबाऊ माहौल से निजात पाने का, यह आँखों को तृप्ति करता, मन को भाता पेड़ों की घनी छाँव के मध्य सुकून देने वाला मैदान था !

दोपहर होते -होते पास के स्कूल में लंच ब्रेक होता, तो बच्चे टिफिन बॉक्स लेकर मैदान में पहुँच जाते। पूरा मैदान बच्चों की किलकारियों, उनकी आवाज़ों से गूँजने लगता। जैसे बहुत सारी चिड़ियों का झुंड मैदान में उतर आया हो ! कोई टिफिन खाने बैठता, कोई फुटबाल या बेसबॉल को किक मारने लगता। कोई एक दूसरे को पकड़ने के लिए भागते, कोई केवल अपने हाथों में टिफिन बॉक्स पकड़े दूसरों को देखते रहते। हरा मैदान बच्चों के नीले, आसमानी रंग के यूनिफार्म से नीला दिखने लगता। ऐसे समय में बच्चों और उनके टीचर के अतिरिक्त ग्राऊंड में कोई दूसरा नहीं होता। जो दूसरे लोग दिखते भी, तो वे किनारे होकर बैठ जाते अथवा खड़े-खड़े बच्चों को मस्ती करते हुए देखते रहते। आधे घंटे से भी कम समय में बच्चे खाना, खेलना, हँसना, दौड़ना, देखना करने के पश्चात् वापस अपने स्कूल की सीढ़ियाँ चढ़ क्लासरूम को चल देते। उनके जाते ही कुछ समय के लिए मैदान में सन्नाटा छा जाता। जैसे अचानक ही खुशबू का झोंका आया हो, और खुशबू फैलाता हुआ गुज़र गया हो !

दिन के 2.00 - 2.30 बजते -बजते बुज़ुर्ग लोग फिर से मैदान में टहलने, घूमने और हल्के व्यारयाम करते दिखने लगते। कुछ वॉकर के सहारे एक- एक कदम रखते दिखते। कुछ धीरे-धीरे कदम बढ़ाते नज़र आते। ये शायद ऐसे लोग थे, जिनका घर में कोई काम नहीं था। अथवा उम्र भर काम करने के पश्चात् अब बेकाम हो चुके थे। ऐसे लोगों में चीनी या चीनी प्रजाति के लोग ही अधिक दिखते। मैं अपने को ऐसे ही बेकाम लोगों में शुमार करता था। चार बजते-बजते कुछ युवा मैदान में आ जाते। मिक्स नस्लों के। अंग्रेज़, चीनी और पता नहीं कौन -कौन ? वे फुटबॉल या बेसबॉल को किक मार-मार कर मैदान और स्कूल के बीच बनी बाउंड्री वॉल के साथ उसे पटकते और फिर उतनी ही फुर्ती से रोकते। यह क्रम बहुत देर तक चलता रहता। कुछ मैदान में बॉल के पीछे भागते। कोई टेनिस बॉल से खेलते दिखता, तो कुछ जुडो- कराटे का करतब दिखाते नज़र आते। ऐसे समय में कोई -कोई मैदान के बिल्कुल किनारे चलते, टहलते हुए भी दिख जाते।

एक दिन शाम के समय मैंने मैदान के

तीन-चार राऊंड लगाए। फिर मैदान के साथ बाहर पेड़ों के नीचे लगे एक खाली लोहे की बैंच पर बैठ गया। तीन लोगों के बैठने की क्षमता वाली बैंच पर अपनी दोनों बाँहें बैंच की पुश्त पर फैलाकर बैठ गया था। लोहे के मज़बूत स्टेंड के ऊपर हरे पेन्ट से पुती लकड़ी की हत्थे वाली बैंच ! थोड़े फासले पर दूसरी बैंच की ओर देखा। उस बैंच पर भी एक ही आदमी तनिक सिकुड़ कर बैठा हुआ था। मैंने उसे ध्यान से देखा। उसने मेरी ओर देखा। मैं धीरे से मुस्कराया। वह चुप ही रहा। मुस्कराया तक नहीं ! क्षण भर मुझसे नज़रें मिलाने के पश्चात् उसने तुरंत अपनी नज़रें सामने मैदान में फुटबॉल खेलते, साइकिल चलाते लोगों की ओर फेर ली थी।

''बड़ा असभ्य और अजीब आदमी है !'' मैंने अपने आप से कहा। उसको फिर से गौर से देखा। 62 -65 की आयु का। साँवले चेहरे पर तरतीब से कटी हुई सफेद मूँछे ! सिर पर बीच से उड़े हुए, लेकिन कनपटियों के ऊपर काले बाल। सफेद मूँछे, काले बाल ? यानी बाल को रंगाकर रखा था। चेहरे पर घोर उदासी। आँखें सामने की ओर तनी हुई सी। परन्तु लगता नहीं था कि वह मैदान में खेलते, दौड़ते लोगों को देख रहा है। ऐसा लगता था, जैसे किसी गहरी सोच में डूबा हो। मानों बहुत ही मुश्किल एवं तनाव में हो ? वह सौ प्रतिशत भारतीय था। केरल के किसी भाग का जैसा लग रहा था। लेकिन चेहरा रूखा, फीका पड़ा हुआ था। सूखा हुआ मुँह, जर्द चेहरा ! उदास- उदास !

प्राय: केरल के लोगों का हाथ- पैर, सिर- मुँह, शक्ल -सूरत, चेहरा- मोहरा दमकता -चमकता और चिकना रहता है। यह शायद अपवाद था। इसके घर में ज़रूर उसके बेटे या बहू ने कुछ कहा होगा? अथवा अपने देश, घर में कोई चिंता वाली घटना या बात हुई होगी ? वह चिंतित, अवसादग्रस्त और उदासी का बुत लग रहा था। उसके चेहरे के भाव, उदासी की परतों से भरे पल- पल बदल रहे थे। क्या परेशानी हो सकती है ? यह इतना दुखी, चिंता से क्यों भरा हुआ है ?

बैंच के नीचे से एक कबूतर अपने गुलाबी पंजों से चलते, टहलते से मेरे पैरों के बीच आ गया। वह शायद दाना खोज रहा था। मेरे हाथ में कुछ नहीं था जो मैं उसको डालता। मैं कबूतर को खामोशी से एकटक देखता रहा। जब उसे कुछ नहीं मिला, तो ज़मीन पर वसंत ऋतु में उगी हरी दूब तथा उनमें किसी -किसी में नर्म फूलों तथा नन्हीं, कोमल पत्तियों को अपनी गुलाबी चोंच से हरी, नीली गर्दन को उठा उठाकर चुगने लगा। मैं अपनी नज़रें उसी पर जमाए उसे देखता रहा। लेकिन मेरी निगाहें दूसरी बैंच में बड़े उदास मुख से बैठे उस शख्स की ओर भी उठ जाती थी। मैंने पैर नहीं हटाया। जब कबूतर को कुछ नहीं मिला, तो वह अपने पंजों पर चलते अपनी नीली, हरी गर्दन को मटकाते हुए मेरे पैरों के पास से हट गया। वह उड़ा नहीं। पंजों के बल निडर होकर चल रहा था। मुझे पक्का विश्वास हो गया था कि साथ के बैंच पर बैठा व्यक्ति घरेलू वजह से मानसिक मंथन में लगा हुआ है। क्यों दुखी है ? उससे बात करने की मेरी तीव्र इच्छा हुई। क्या बात करूँ ? उसका नाम, पता पूछूँ ? उसकी मानसिक दुविधा जानने की कोशिश करूँ ? मगर वह सपाट नज़रों से केवल सामने की ओर देख रहा था। उसने मुझ में कोई उत्सुकता नहीं दिखाई थी। इसलिए मैं हिचक गया था। यह इतनी दूर सात समंदर पार कर अपने बच्चों के पास आया होगा ? अपने नौजवान बेटा या बहू से पता नहीं क्या कहा सुनी हुई होगी ? जो चेहरे पर इतनी हताशा, निराशा का भाव ओढ़े गुमसुम बैठा है ! उसे किसी अपने से शायद बहुत ठेस पहुँची थी ? हो सकता है, उसका अपने पुत्र या पुत्रवधू के किसी बात को लेकर ज़रूर मोहभंग हुआ है ? मुझे ऐसा ही लगा।

मैं उससे कुछ कहे बिना उठा। और, टहलने के इरादे से हरे मैदान में आया। लंबा, चौड़ा मैदान था। मैंने दाईं ओर किनारे से तेज़ -तेज़ कदमों से चलना शुरू किया। बीच मैदान में सब अपने खेल और मनोरंजन में मगन थे। चलते -चलते काफी आगे बढ़ा, तो एक किनारे दो छोटी लड़कियाँ आपस में खेल रही थी। कम उम्र वाली दो स्त्रियाँ ज़मीन पर बैठी, आपस में बातें करती व्यस्त दिखीं। एक भारतीय थी। दूसरी चीनी। दोनों अपनी टाँगे फैलाए आपस में अंग्रेज़ी में बातें कर रही थीं। लगता था दोनों रस ले -लेकर बातों में डूबी हैं। लड़कियाँ आपस में लोट-पोट होकर खेल रही थी। दोनों में एक दूसरी को पकड़ने, दौड़ने की होड़ लगी थी जैसे ! उनकी माँएँ अपने घर, गृहस्थी की परेशानियों, दुख- सुख, सुविधा- दुविधा को आपस में बाँटने की कोशिश कर रही थी शायद ? मैं उनके पास से गुज़रा। दोनों आपस में बहुत जुड़ी हुई, पक्की दोस्त लग रही थीं। उनकी दोस्ती को मन ही मन सलाम कर मैं आगे बढ़ा।

आगे एक और भारतीय जोड़ा धीरे -धीरे मैदान में पेन्ट से निशान लगाए, दो लाईनों के भीतर अपने कदम बढ़ा रहे थे। पुरुष पीले रंग का घिसा हुआ टी शर्ट और लोअर पहने हुए था। गोरा रंग, काले बाल। मोटी -मोटी भौंहे, कम हाइट का। पैरों में नाइक के काले बूट। उसके साथ उसकी पत्नी थी शायद ? वह उससे कुछ अधिक उम्र की लग रही थी। साड़ी पर लाल कार्डिगन पहने। वैसे ही गोरी रंगत, काले, लंबे बाल। लेकिन माथे में झुर्रियाँ स्पष्ट दिख रही थीं। बाईं ओर की आँख आधी खुली, आधी बंद। दाईं आँख ठीक लग रही थी। वह बाँए हाथ से साड़ी की चुनट को ऊपर से पकड़े, धीरे- धीरे कदम बढ़ा रही थी। चलने में तेज़ी से चलते अपने पति से वह पिछड़ रही थी।

मैं उनके पास से गुज़रा। मैं हौले से मुस्कराया। वे दोनों भी मुस्करा दिए। लेकिन हम में से बोला कोई नहीं। परदेश में अपने देश के अनजाने, अपरिचित लोगों के मुस्कान भर से ही प्रसन्न हो उठना स्वाभाविक है। दो बड़ी उम्र की महिलाएँ सलवार-कमीज़, कार्डिगन तथा ऊपर से शाल, स्टोल पहने अलग -अलग दिशाओं में चक्कर काट रही थीं। आश्चर्यजनक रूप से दोनों ने काले रंग के शाल ओढ़ रखे थे। हालाँकि दोनों की उम्र और शक्ल में बहुत साम्यता थी, तथापि दोनों अलग -अलग दिशाओं में टहल रही थी। इसका मतलब था, दोनों एक- दूसरे से अपरिचित हैं। एक दूसरे को नहीं जानती, पहचानती हैं।

एक और बुज़ुर्ग सी दिखती भारतीय महिला स्किन टाइट जीन्स और ऊपर से ब्राऊन कलर का टॉप पहने, अकेली ही मैदान में टहल रही थी। पैरों में नीले रंग के स्पोर्ट्स शूज़ पहने, जल्दी-जल्दी अपने

कदम बढ़ाने की कोशिश करती लग रही थी। लेकिन मोटी होने के कारण शायद अपेक्षित स्पीड से चल नहीं पा रही थी। टॉप में से पेट अलग ही बड़ा और उभरा हुआ दिख रहा था। तंग जीन्स के कारण उसके नितंब ज़रूरत से ज़्यादा ही मोटे मगर थुलथुले लग रहे थे। तंग पेंट से उसकी जाँघे और पिंडलियाँ भी कुछ अधिक ही उभर आए थे। यही हाल उसकी छातियों का था। स्पष्ट है, वह अपने को अत्याधुनिक दिखाना चाह रही थी ! लेकिन इन तंग वस्त्रों में अपनी सोच के विपरीत, वह एक कार्टून अथवा सर्कस में किसी मसखरे जैसी लग रही थी, जिसे देख कभी नहीं हँसने वाला व्यक्ति भी मंद -मंद मुस्कराने लगता है !

मैं अपने में सोचने लगा। पहले पढ़े, लिखे भारतीय अच्छी नौकरियों के लिए अमेरिका, ब्रिटेन को जाते थे। लेकिन इन देशों में हाल के दिनों, वर्षों में कड़े नियम, कानून लागू करने की वजह से अब युवा बेहतर रोज़गार की खोज में ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड का रुख कर रहे हैं। ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड में भारतीयों सहित अन्य देशों से प्रवासियों की संख्या बढ़ रही है।

पार्क सह मैदान मेरे लिए टहलने, जॉगिंग का केंद्र बन गया था। रोज़-रोज़ आने से कुछ चेहरे पहचान में आ रहे थे। अपने देश तथा विदेशियों के भी। एक दिन ठंड जब अधिक ही चुभने लगी, तो धूप सेंकने के इरादे से अपनी पत्नी के साथ मैदान में आया। दोपहर 12.00 के आस- पास का समय था। इस समय पूरा मैदान खाली था। वह नेपाली महिला अपने उसी रूप, सज्जा में मैदान के एक किनारे बच्चे को प्रैम में डाले, धूप का आनंद ले रही थी। हैल्लो, हाय के बाद आगे बढ़े ही थे कि एक बुज़ुर्ग सी लगती महिला सूट- सलवार में तथा ऊपर से काले रंग का शाल ओढ़े, हमारे पास से गुज़र रही थी। माथे पर बड़ी सी चटख लाल बिंदी।

सलवार-सूट, लाल बिंदी में सजी महिला को देख नीरजा अपनी जिज्ञासा, उमड़ती भावनाओं को व्यक्त करने से रोक नहीं पाई। वह उसकी ओर देखकर मुस्करा दी। वह महिला भी अपनी मुस्कराहट को रोक नहीं सकी। फिर तो बातों का, परिचय का, सिलसिला चल पड़ा।

''आप इंडिया से हैं ?''

''हाँ जी ... आप भी ?''

''जी... भारत में कौन सी जगह ?''

''गुड़गाँव से... आप ?''

''जी... हम कुल्लू हिमाचल से हैं।''

''बहुत अच्छा! हम भी दरअसल कश्मीर से हैं। अभी गुड़गाँव में सेटल हुए हैं। लगभग 28 साल हो गए हैं... कश्मीर छोड़े। छोड़े क्या... भगा दिए गए थे। 1990 से ही बाहर हैं।'' अचानक ही उसका स्वर उदासी से भर गया था।

''ओह... अभी भी कुछ लोग केंपों में रह रहे हैं क्या ?'' हमें भी थोड़ा धक्का लगा।

''केंपों में तो अब कम ही होंगे ? शायद कुछ कम पढ़े-लिखे ! पढ़े-लिखे तो सभी नौकरी में हैं। सेटल हो चुके हैं।'' कुछ उदास, अनमने भाव से उसने कहा।

नीरजा ने इस संवेदनशील मामले पर अधिक बोलने, बात को टालने के इरादे से विषय को बदलते हुए पूछा, ''यहाँ आपके परिवार से कोई जॉब करता होगा ?''

''हाँ...बेटा है। अभी अकेला है। हम यहाँ दूसरी बार आए हैं।''

''हमारी बेटी और दामाद हैं।'' नीरजा ने स्वयं ही अपने बारे बता दिया।

हमने मैदान का दो -तीन राऊंड लगाया ही था कि स्कूल के बच्चे लंच ब्रेक में मैदान में चिड़ियों की तरह फुदकते, चहकते हुए पहुँच गए। हम मैदान की बाउंड्री के साथ बाहर लगे बैंचों में से एक पर आकर बैठ गए। अभी बैठे ही थे कि बच्चों की एक टोली मैदान के साथ लगी जाली वाली फेंसिंग से उचक-उचक कर हमें देखने लगी। काले- गोरे, पीले- गेहुँए, तीखे नैन-नक्श, लंबी- चपटी नाक, मोटी -छोटी आँखों वाले सभी प्रकार के बच्चे शामिल थे। एक चपटी नाक वाला लड़का जो चीनी जैसा लग रहा था, कुछ ज़्यादा ही मुखर था। एक ट्यूनिक पहने लड़की ज़रूरत से ज़्यादा ही शरमा रही थी। लगता था, वह बात करना चाह रही थी। लेकिन उसे संकोच हो रहा था। वह शायद भारतीय थी।

''आर यू इंडियंज़ ?'' चीनी लड़का जाली से अपना मुँह सटाकर हम से पूछ रहा था।

''यस...वी आर फ्रॉम इंडिया !'' गुड़गाँव वाली महिला राजदान ने उस लड़के से कहा।

इंडिया से होने और पहचानने का बहुत बड़ा कारण था। शायद इस स्कूल के बच्चों, अथवा कहें सारे संसार को यह कारण या तथ्य मालूम था। यह तथ्य अथवा आसानी से पहचान लिए जाने का कारण, दोनों महिलाओं के माथे पर लाल रंग की बड़ी-बड़ी बिंदियाँ थीं। बच्चों ने दोनों के माथे पर सजाए इन बिंदियों के कारण ही हम भारतीय हैं, पहचाना था। हमने भी इन लाल बिंदियों के कारण ही एक- दूसरे को जाना और पहचाना था। किसी अनजाने, अपरिचित देश में माथे की बिंदी पहचान की एक बहुत बड़ी निशानी थी !

अब मैं लगातार मैदान में टहलने आ रहा था। बहुत से लोगों, बच्चों को पहचानने की कोशिश करने लगा था। बल्कि पहचान लिया था। लेकिन कभी खुलकर बात नहीं हो पाई थी। इन बुज़ुर्ग माता- पिताओं के युवा बच्चे यहाँ विदेश में नौकरी कर रहे थे। कुछ का अपना कारोबार था। कुछ पढ़ाई करने आए थे। बूढ़े माँ-बाप अपने बच्चों के बच्चों की देखभाल करने के लिए ही यहाँ आए हुए थे, अथवा विशेष तौर पर इसी प्रयोजन हेतु बुलाए थे, जिससे वे निश्चिंत होकर अपने जॉब पर जा सके। डॉलर के रूप में धन कमा सकें। यह केवल भारतीयों के मामले में ही नहीं, बल्कि दूसरे देशों से आए अन्य प्रवासियों के मामले में कहा जा सकता है?

यह घास का मैदान, केवल मैदान भर नहीं है ! यह विभिन्न देशों के लोगों का संगम स्थल है। देश और विदेशी प्रवासियों के सुख-दुख, वर्षा-धूप, सर्दी-गर्मी, सुविधा-असुविधा, मेल-मिलाप, खेल-खिलाड़ी, कल्प-विकल्प, शिक्षा-सीख, जान-पहचान, दूर-करीबी, अपना-पराया, मन-मिज़ाज, आचार-व्यवहार, दोस्ती-प्यार, काला-गोरा, पीले-गेहुँए, ऊँचे-नाटे, दुबले-मोटे इत्यादि सभी तरह के लोगों को आपस में मिलाने, जोड़ने का एक ज़रिया है। इसे मैंने बड़ी शिद्दत से महसूस किया। परदेश में अपनों की उपस्थिति जब न्यून हो, तो मेरा- तेरा, घर -द्वार, अपना- पराया का भेद शायद नहीं रह पाता है ! है न ?

***

जॉन की गिफ़्ट

पुष्पा सक्सेना

अमेरिका का वह पूरा शहर क्रिसमस की रोशनी से जगमगा रहा था। रंग-बिरंगे वस्त्रों में उत्साहित लोग शौपिंग के लिए निकल पड़े थे। चारों तरफ खुशियाँ बिखरी हुई थीं। सड़कों से ले कर घरों तक पर रंगीन विद्युत झालरें, पेड़ों और झाड़ियों पर रंगीन बल्बों के फूल खिले हुए थे। दूकानों के आकर्षक सेल एक-दूसरे से प्रतिस्पर्द्धा करते हुए ग्राहकों को आकृष्ट कर रहे थे।

मिस्टर डेविड का दो सौ अस्सी नंबर का घर शहर के बाहरी इलाके में था। शांति प्रिय डेविड को प्रकृति से प्रेम था, शहरी कोलाहल उन्हें अच्छा नहीं लगता था। घर में कार की सुविधा होने के कारण कहीं आना-जाना असुविधाजनक नहीं था। परिवार मे पत्नी मारिया, एक पाँच वर्ष की बेटी जेनी और उसका छोटा भाई जॉन था। घर के आसपास एकांत होने के कारण बच्चे कम दिखाई देते थे, पर जेनी और जॉन अपने आप में पूर्ण थे। साथ में खेलते हुए उन्हें कभी किसी और की ज़रूरत ही महसूस नहीं हुई।

डेविड के घर से कुछ दूरी पर रिटायर्ड स्कूल टीचर एलिज़ाबेथ का घर था। अकेली होने के कारण एलिज़ाबेथ अक्सर डेविड और मारिया के घर आया करती थीं..बच्चे एलिज़ाबेथ का इन्तज़ार करते, एलिज़ाबेथ आंटी उनके लिए खिलौने और चाकलेट लाना कभी नहीं भूलती थीं।

क्रिसमस के उल्लास से डेविड का भी घर अछूता नहीं था। घर में जेनी अपने चार वर्ष के छोटे भाई जॉन के साथ क्रिसमस ट्री पर खिलौने सजा रही थी। जेनी के आदेश पर नन्हा जॉन अपने अनभ्यस्त हाथों से खिलौने लाकर दे रहा था। गलती से खिलौना गिर जाने पर उसे जेनी की मीठी झिड़की सुननी पड़ती थी।

''जॉन, सँभाल कर उठा, तू तो खिलौने तोड़ देगा।''

''सॉरी सिस्टर, प्लीज़ एक्सक्यूज़ मी।'' भोले मुख पर भय था।

''इट्स ओके, जॉन।'' प्यार से भाई के माथे पर चुम्बन अंकित कर के जेनी बोली। जेनी को अपने छोटे भाई जॉन से बहुत प्यार था। जॉन भी अपनी बहिन की हर बात मानता था।

Pushpa Saxena,13819 N E 37 th PL, Bellevue, WA 98005, USA
मोबाइल:425-869-5679
ईमेल: pushpasaxena@hotmail.com

पूरे दिल की मेहनत के बाद दोनों भाई-बहिनों के चेहरों पर खुशी थी, उनके द्वारा सजाए गए खिलौने कितने सुन्दर दिख रहे थे। शाम को पेड़ पर सजाई गई बिजली की झालरों के रंगीन बल्बों ने पेड़ की शोभा बढ़ा दी। क्रिसमस ट्री भी जैसे उनकी खुशी में शामिल था।

दोनों को उनके मम्मी -डैडी ने बताया था क्रिसमस की रात सैंटा- क्लॉज चुपचाप घरों में सोते हुए बच्चों को उनके मनचाहे गिफ्ट देता है। सवेरे अपनी-अपनी मनचाही गिफ्ट्स पाकर बच्चों को सैंटा- क्लॉज के अस्तित्व में विश्वास हो जाना स्वाभाविक ही होता। उन्हें आश्चर्य इस बात का होता, सैंटा कैसे अमेरिका के इतने सारे बच्चों के गिफ्ट्स याद रख पाता है? भोले बच्चे कैसे जान पाते उनके सो जाने के बाद उनके डैडी और मम्मी ही उनकी मनचाही गिफ्ट्स सैंटा के नाम से क्रिसमस ट्री के नीचे रख देते हैं।

''जेनी तू सैंटा- क्लॉज से क्या गिफ्ट माँगेगी?'' जॉन बहिन की गिफ्ट के बारे में जानने को उत्सुक था।

''मैं तो सैंटा से पिंक कलर की ड्रेस वाली एक टॉकिंग डॉल माँगूँगी।''

''तुम्हारे पास तो इतनी सारी डॉल हैं फिर दूसरी डॉल क्यों चाहिए?'

''तू नहीं समझेगा, बातें करने वाली डॉल मेरी फ्रेंड बन जाएगी। जब जी चाहे उसके साथ बातें करूँगी।''

''जेनी, क्या सैंटा से हम जो भी गिफ्ट माँगेगे वो हमें देगा? अगर हम सो रहे होंगे तो हमें गिफ्ट कैसे मिलेगी?'' जॉन शंकित था।

''अरे बुद्धू, सैंटा रात में चुपचाप आ कर हमारी गिफ्ट इस क्रिसमस ट्री के नीचे रख जाएगा। सवेरे हमें हमारी गिफ्ट मिल जाएगी। वैसे जॉन तू सैंटा से कौन सी गिफ्ट माँगेगा?'

''मुझे तो रॉबिन के वीडियो गेम जैसा नया कार वाला वीडियो- गेम चाहिए। नए वीडियो गेम में मेरी रेड कार फर्स्ट आएगी, रॉबिन के वीडियो- गेम में उसकी ब्लू कार फर्स्ट आई थी।

''जेनी और जॉन डिनर के लिए आओ। डैडी तुम्हारा वेट कर रहे हैं।'' बच्चों की माँ मारिया ने आवाज़ दी।

''कम ऑन चिल्ड्रन, जेनी तुमने क्रिसमस ट्री बहुत सुन्दर सजाया है।'' डैडी मिस्टर डेविड ने प्यार से कहा।

''थैंक्स डैडी, पर इसमें जॉन ने भी मेरी बहुत मदद की है।'' जेनी की बात सुनते जॉन का चेहरा खिल उठा।

''वेल डन माई सन। इसका मतलब हमारा बेटा अब बड़ा हो गया है।'' डेविड ने स्नेह से बेटे को देखा।

''यस डैडी, जॉन मेरा सबसे प्यारा और अच्छा भाई है।'' प्यार से जेनी ने भाई की तारीफ़ की।

''बच्चों, तुमने सैंटा से माँगने के लिए अपनी-अपनी गिफ्ट्स तय कर ली हैं?'' मम्मी ने जानना चाहा।

''जी मॉम, मैंने डिसाइड कर लिया है। मुझे एक पिंक कलर की ड्रेस वाली टॉकिंग डॉल चाहिए।''

''मॉम मुझे नया वीडियो-गेम चाहिए। मुझे राबिन की ब्लू कार को हराना है।'' खुशी से जॉन ने बताया।

''मॉम, हम क्रिसमस पार्टी के लिए नई ड्रेस खरीदने कब जाएँगे?'' जेनी को नई ड्रेसेज़ खरीदने का शौक था।

''कल लंच के बाद तुम्हारी शॉपिंग के लिए चलेंगे। अब डिनर के बाद जल्दी सो जाना। याद रखो, आज नो टीवी वरना सवेरे जल्दी नहीं उठ पाओगे।'' मारिया ने प्यार से बच्चों को सलाह दी।

''गुड नाइट डैडी, गुड नाइट मॉम।''

''गुड नाइट मेरे बच्चों।'' मारिया और डेविड ने प्यार से कहा।

जेनी और जॉन खुशी-खुशी अपने कमरे में अपने- अपने बेड पर लेट कर कल के सपनों में खो गए।

दूसरे दिन जेनी और जॉन मॉम के जगाए बिना खुद ही जल्दी जाग गए। तैयार होने के लिए दोनों ने देर नहीं की। अचानक खिड़की से बाहर देखते ही जॉन खुशी से चिल्लाया-

''लुक जेनी, कल रात स्नो फॉल हुआ है।''

''वाह, मज़ा आ गया। इस बार व्हाइट क्रिसमस होगा।'' जेनी ने खुशी में साथ दिया।

''स्नो बॉल से खेलने में खूब मज़ा आएगा। हम स्नो मैन भी बनाएँगे।'' जॉन उत्साहित था।

''कमाल है, आज तुम दोनों खुद ही इतनी जल्दी तैयार हो गए वरना स्कूल जाने के दिन तुम्हें उठाना मुश्किल होता है। आओ ब्रेकफास्ट तैयार है।'' बच्चों को तैयार देख मारिया ने कहा।

''यस मॉम, आज हमें शॉपिंग के लिए जो जाना है। देर से जाने पर सारी अच्छी ड्रेसेज़ ख़त्म हो जाएँगी।'' जेनी ने जल्दी उठने का कारण बताया।

''ओके, पहले अपने डैडी को तो तैयार हो जाने दो वरना कार कौन ड्राइव करेगा?''

''सॉरी बच्चों, आज आफ़टरनून में भारी तूफ़ान आने की वार्निंग है, हम शॉपिंग के लिए आज नहीं कल चलेंगे।'' डेविड ने आते ही बच्चों के उत्साह पर छींटे डाल दिए।

''ओह नो डैडी, तूफ़ान और स्नो फाल तो यहाँ आते ही रहते हैं। हम कितनी देर से तैयार हैं। प्लीज़ मॉम आप डैडी से कहिए ना हमें आज ही जाना है।'' जेनी ने ज़िद की।

''मॉम, मुझे अपना वीडियो गेम चाहिए, प्लीज़ डैडी हमें जाना है।'' नन्हें जॉन ने भी जेनी का साथ दिया।

''बच्चे बड़ी देर से जाने को तैयार हैं, मौसम खराब होने के पहले हम जल्दी लौट आएँगे। आज नहीं जाने से ये निराश हो जाएँगे।'' मारिया ने बच्चों के मायूस चेहरों को देख उनका पक्ष लिया।

''ठीक है, पर शॉपिंग में देर नहीं करनी है। मारिया, तुम भी शॉपिंग के वक्त बच्चों के साथ वक्त भूल जाती हो।''डेविड ने पत्नी से कहा।

''परेशान ना हों, हम शॉपिंग जल्दी खत्म कर लेंगे। पहले ब्रेकफास्ट तो लीजिए।'' मारिया ने विश्वास दिलाया।

''याद रखना, हम एक बजे के पहले वापिस आ जाएँगे, घर लौटने में कम से कम डेढ़-दो घंटे लग जाते है।'' डेविड ने चेतावनी सी दी।

बाहर जाने के लिए बच्चों ने जल्दी-जल्दी अपना ब्रेकफास्ट खत्म कर लिया।

शॉपिंग मॉल की शोभा ही निराली थी। दूकानों की सजावट देखते ही बनती थी। हर शॉप पर सेल की धूम थी। बच्चे तो बच्चे बड़े भी बच्चे बन गए थे। बच्चों की दूकानें विशेष रूप से सजाई गई थीं। बच्चों की

चलती तो वे पूरी दूकान खरीद लेते। रंगीन रोशनी में तरह-तरह के खेल बच्चों को अपनी तरफ आकृष्ट कर रहे थे। उनके लिए तो वो स्वर्ग का नज़ारा था। काश वे हमेशा उसी दुनिया में रह पाते।

बड़ी देर खोजने के बाद आख़िर जेनी को अपनी पसंद की ड्रेसेज़ मिल ही गईं। जॉन को अपनी ड्रेस के लिए ज़्यादा परेशानी नहीं हुई, मारिया ने उसके लिए खुद ही ड्रेसें खरीद लीं। अब पार्टी के लिए ड्रेस खरीदने की बारी मारिया की थी। डेविड ने ठीक कहा था, मारिया भी बच्चों से कम नहीं थी। बड़ी मुश्किल से मारिया अपने लिए दो ड्रेसेज़ खरीद सकी।

घड़ी पर नज़र डालते डेविड चौंक गए तूफ़ान आने का जो समय बताया गया था, वो अब पास आ चुका था। बाहर आने पर पेड़ों को तेज़ हवा में झूलते देख डेविड परेशान हो उठे। घर पहुँचने में अब दो की जगह ज़्यादा घंटे लग जाएँगे। लोग तेज़ी से मॉल के बाहर आने लगे थे। अपनी कारें स्टार्ट कर सब घरों की तरफ चल दिए थे। डेविड के चेहरे पर चिंता स्पष्ट थी।

''तुमसे कहा था, समय का ध्यान रखना, पर खरीददारी करते वक्त तुम लोग सब भूल जाते हो।''

''सॉरी, गलती हो गई। अब तुम शान्ति से ड्राइव करो। हवाएँ बहुत तेज़ हो रही हैं। प्रभु ईसू हमारी मदद करे।'' मारिया की आवाज़ में भी भय स्पष्ट था।

कुछ ही देर में तूफ़ान ने भयानक रूप धर लिया। तेज़ हवाओं के साथ भारी स्नोफॉल से स्थिति और भी गंभीर हो गई थी। तेज़ हवाएँ डेविड की छोटी कार को भी हिला रही थीं। बर्फ से गीली सड़क पर कार फिसल रही थी। अचानक कार स्किड करके ज़ोरों से एक बड़े पेड़ से टकरा गई। पल भर में प्रलय सा आ गया था। जेनी और जॉन बाहर के नज़ारे देखने खिड़की वाली सीट की तरफ बैठे थे और बीच की खाली सीट पर आज खरीदा हुआ बड़े से टेडी बियर को बैठाया था। एक चीख और सब जैसे शांत हो गया। कार का पीछे का हिस्सा पेड़ से टकरा कर पिचक गया था। खिड़की का शीशा टूट कर अंदर आ गया था। एक बड़ा सा नुकीला काँच धक्के के ज़ोर से सीधा नन्हें जॉन के सिर के आर-पार निकल गया

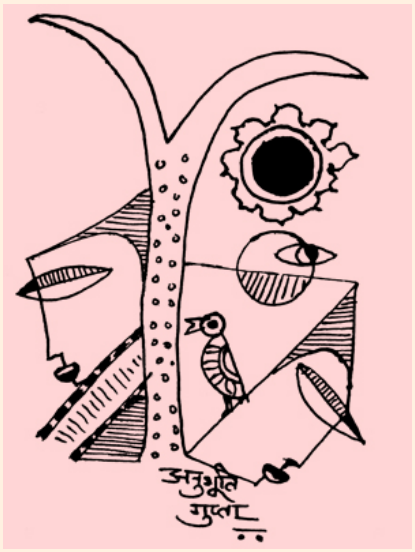

था। जेनी के ऊपर भालू के गिर जाने से नुकीले काँच के टुकड़े भालू के शरीर पर ही अटक कर रह गए। उस अचानक धक्के से जेनी का सिर कार की साइड से ज़ोरों से टकरा गया। इतना आघात उसे मूर्छित करने को काफी था। सामने की सीट पर कार को अधिक क्षति नहीं पहुँची थी, पर उस आकस्मिक दुर्घटना के कारण अर्धमूर्छित से मारिया और डेविड कुछ भी ना समझ पाने की स्थिति में थे।

भयंकर तूफ़ान के कारण कार से उस रास्ते से गुज़रने वालों का साहस उनकी मदद करने का नहीं हो सका, पर उनमें से कुछ ने फ़ोन द्वारा 911 को दुर्घटना की सूचना दे दी थी। कुछ ही देर में एम्बुलेंस से मेडिकल टीम और कॉप (पुलिस) के सदस्य पहुँच गए। डेविड और मारिया को उनकी अर्ध मूर्छित अवस्था में कार से बाहर निकाल कर जेनी के साथ एम्बुलेंस में ले जाया गया। रक्तरंजित निष्प्राण जॉन को देख सब स्तब्ध रह गए। नन्हें जॉन का प्यारा चेहरा इस बुरी तरह से बिगड़ गया था कि उसे देखने का साहस नहीं हो रहा था।

हॉस्पिटल में सब उनकी हालत देख कर दुखी थे। उस तूफ़ान ने डेविड का घर उजाड़ दिया था। जॉन का चेहरा बिगड़ चुका था, आँखें बाहर आ गई थीं, ओंठ, नाक का पता नहीं था। होश आने पर मारिया और डेविड से डॉक्टर ने कहा-

''हमें दुःख है, आपका बेटा यहाँ पहुँचने के पहले ही ये दुनिया छोड़ गया, अब अपनी बेटी को सँभालिए। भाई को इस हालत में देख उसके दिमाग पर बहुत अनिष्टकारी प्रभाव पड़ेगा। उसके लिए कभी ना भूल पाने वाला यह बहुत बड़ा सदमा होगा।''

''क्या हम अपने बेटे को अपने घर ले जा सकते हैं?'' मुश्किल से डेविड पूछ सके।

''आपको मना तो नहीं कर सकता, पर जब तक आपकी बेटी ठीक ना हो जाए आपका यहाँ रुकना ही अच्छा होगा। अभी वह बेहोशी की हालत में है, उसे सामान्य होने दीजिए और मेरी बात समझने की कोशिश कीजिए।'' डॉक्टर ने गंभीरता से कहा।

''ऐसी हालत में अपने बेटे को कैसे देखते रह सकते हैं। कैसे सहें, क्या करें?'' मारिया ने रोते हुए पूछा।

''ज़िन्दगी में कभी-कभी प्रैक्टिकल होना अच्छा होता है। मेरी राय है, यहाँ चर्च के फादर से बात कर के अपने बेटे को हमेशा के लिए इसी शहर से विदा करना अच्छा होगा।'' डॉक्टर ने सलाह दी थी।

डॉक्टर की बात में सच्चाई थी। अपने प्यारे भाई को उस स्थिति में देख कर क्या जेनी सह पाएगी?

फादर की मदद से सारे रिच्युल्स पूरे कर, अपने जिगर के टुकड़े जॉन को उस अपरिचित शहर में हमेशा के लिए विदा करने के बाद जेनी के होश में आने की प्रतीक्षा थी। दो दिनों बाद आँखें खोलती जेनी अपने माँ-बाप के उदास चेहरे देख चौंक गई-

''क्या हुआ मॉम, हम यहाँ कहाँ है, जॉन कहाँ है?''

''जेनी बेबी, हमारा जॉन हमें छोड़ कर गॉड के पास चला गया।'' रुंधे स्वर में डेविड ने जवाब दिया।

''नहीं, हम भी जॉन के पास जाएँगे। हमको भी गॉड के पास जाना है।'' जेनी रो रही थी।

''ऐसे नहीं कहते, गॉड जिसे चाहते हैं उसे ले जाते हैं। तुम हमें छोड़ कर कैसे जा सकती हो, तुम्हारे बिना हम कैसे रहेंगे।'' मारिया ने प्यार से जेनी को अपने सीने से चिपटा लिया।

''हम किससे बात करेंगे, किसके साथ खेलेंगे? जॉन हमें छोड़ कर क्यों गया, हमें उसके पास जाना है।''

बड़ी मुश्किल से जेनी को समझा के डेविड, मारिया और जेनी को साथ लेकर उस सूने घर में लौटे थे। जिस घर में चार दिन पूर्व जेनी और जॉन हँसते-खेलते क्रिसमस ट्री को सजा रहे थे। घर का सूनापन जेनी के साथ सबको रुला गया। जेनी क्रिसमस ट्री से लिपट कर रो पड़ी। क्रिसमस पार्टी के लिए आने वाले अब शोक- संवेदना के लिए आ रहे थे। अचानक जेनी को याद आया शौपिंग मॉल में जॉन ने जेनी को एक वीडियो- गेम दिखा कर कहा था, उसे सैंटा से बिल्कुल वैसा ही वीडियो गेम चाहिए।

''मॉम, अब सैंटा जॉन को उसकी पसंद का वीडियो कैसे देगा?'' जेनी ने व्याकुल स्वर में कहा।

''डोंट वरी,जेनी। मैं तरीका बताती हूँ। हम जॉन की पसंद का गेम खरीद लाएँगे। उस गिफ्ट को क्रिसमस ट्री के नीचे रख देंगे उसके साथ सैंटा के लिए एक रिक्वेस्ट का नोट लिख कर रख देंगे कि जॉन गॉड के पास है, यह गेम जॉन को पहुँचाने की कृपा कीजिए।''

एलिज़ाबेथ आंटी ने जेनी की तसल्ली के लिए तरीका बताया। जॉन एलिजाबेथ आंटी का बहुत दुलारा बच्चा था।

''क्या ऐसा हो सकता है, आंटी?''जेनी की आँखें खुशी से चमक उठीं।

''तैयार रहना, कल हम दोनों उसी शॉप पर चलेंगे, तुम जॉन की मनपसंद गिफ्ट ले लेना।''

''थैंक्स, आंटी, हम तैयार रहेंगे। जॉन गिफ्ट पाकर कितना खुश होगा।'' खुशी से जेनी ठीक से सो भी नहीं सकी।

दूसरे दिन दूकान पर पहुँच कर जेनी ने दूकानदार से कहा-

''सर, हमें कार वाला वीडियो-गेम चाहिए। गेम के बॉक्स के ऊपर लाल कार की तस्वीर बनी है।''

दूकानदार ने वीडियो गेम के कई डिब्बे दिखाए, पर उनमें से जेनी को जॉन की पसंद वाला बॉक्स नहीं मिला, जिस पर लाल कार की तस्वीर बनी हो। जेनी परेशान हो उठी। दूकानदार ने समझाया-''देखो बेबी, इन सभी वीडियो गेम में लाल, नीली, पीली कई रंगों की कारें हैं।''

''नहीं, हमें जॉन की पसंद वाला बॉक्स चाहिए, उसे रोंबिन को हराना है।''जेनी की आँखों में आँसू आ गए।

''ऐसा करो, तुम जॉन के साथ आओ, वह खुद अपनी पसंद का गेम ले लेगा।'' दूकानदार ने कहा।

''जॉन कैसे आ सकता है, वह तो गॉड के पास चला गया है।'' नम आवाज़ में जेनी बोली।

''अगर ऐसा है तो हम कहीं से भी जॉन का मनपसन्द गेम लाएँगे।'' स्तब्ध शॉप-कीपर ने अपने सहायक को निर्देश दे कर दूसरी दूकानों से जेनी के बताए गए वीडियो गेम को लाने के निर्देश दिए।

सहायक द्वारा लाए गए वीडियो गेम के डिब्बे पर लाल कार का चित्र देख कर जेनी खुश हो गई। हाँ जॉन ने वैसा ही बॉक्स दिखा कर तो जेनी से कहा था, वह वही गिफ्ट सैंटा से माँगेगा।

एलिज़ाबेथ आंटी के साथ खुशी-खुशी जेनी घर वापिस लौटी थी। घर पहुँच कर एक सुन्दर से कागज़ पर जॉन की गिफ्ट पहुँचाने के लिए सैंटा को संदेश लिखा गया था। गिफ्ट के साथ संदेश को क्रिसमस ट्री के नीचे रख दिया गया। जेनी को विश्वास नहीं हो रहा था, कल क्रिसमस है, क्या सैंटा क्लॉज सचमुच जॉन को उसकी गिफ्ट पहुँचा देगा? किसी तरह सोई-अधसोई जेनी सवेरा होते ही क्रिसमस ट्री के पास पहुँची थी। एक गुलाबी रंग के कागज़ पर लिखा था- ''थैंक्स फ़ॉर दी गिफ्ट।'' जॉन।

''मॉम-डैडी जल्दी आओ, जॉन को गिफ्ट मिल गया।'' गुलाबी कागज़ थामें खुशी से जेनी चिल्लाई थी।

''जेनी, देख सैंटा तेरे लिए कितनी प्यारी डॉल लाए हैं। तू ऐसी ही डॉल चाहती थी न।'' मारिया ने जेनी का ध्यान डॉल की तरफ करके उसे बहलाना चाहा।

''नहीं, हमें डॉल नहीं जॉन चाहिए। सैंटा हमें जॉन चाहिए।'' जेनी रो रही थी।

''जेनी बेबी, तेरी डॉल तुझसे बात करना चाहती है।'' डेविड ने प्यार से कहा।

माँ-बाप की बातें अनसुनी कर, अपनी गिफ्ट पर नज़र भी ना डाल, आँखों से बहते आँसुओं के साथ जेनी 'माई लिटिल ब्रदर' कहती उस गुलाबी कागज़ को बेतहाशा चूमे जा रही थी।

***

लेखकों से अनुरोध

'विभोम-स्वर' में सभी लेखकों का स्वागत है। अपनी मौलिक, अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी। रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा। बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फ़ाइल अथवा वर्ड की फ़ाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीएफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें, इस प्रकार की रचनाएँ विचार में नहीं ली जाएँगी। रचनाओं की साफ़्ट कॉपी ही ईमेल के द्वारा भेजें, डाक द्वारा हार्ड कॉपी नहीं भेजें, उसे प्रकाशित करना अथवा आपको वापस कर पाना हमारे लिए संभव नहीं होगा। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। पुस्तक समीक्षाओं का स्वागत है, समीक्षाएँ अधिक लम्बी नहीं हों, सारगर्भित हों। समीक्षाओं के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, लेखक का चित्र तथा प्रकाशन संबंधी आवश्यक जानकारियाँ भी अवश्य भेजें। एक अंक में आपकी किसी भी विधा की रचना (समीक्षा के अलावा) यदि प्रकाशित हो चुकी है तो अगली रचना के लिए तीन अंकों की प्रतीक्षा करें। एक बार में अपनी एक ही विधा की रचना भेजें, एक साथ कई विधाओं में अपनी रचनाएँ न भेजें। रचनाएँ भेजने से पूर्व एक बार पत्रिका में प्रकाशित हो रही रचनाओं को अवश्य देखें। रचना भेजने के बाद स्वीकृति हेतु प्रतीक्षा करें, बार-बार ईमेल नहीं करें, चूँकि पत्रिका त्रैमासिक है अत: कई बार किसी रचना को स्वीकृत करने तथा उसे अंक में प्रकाशित करने के बीच कुछ अंतराल हो सकता है।

धन्यवाद

संपादक

vibhom.swar@gmail.com

सीप में समुद्र

कविता विकास

खिड़कियों को मोटे - मोटे पर्दों से ढंकते हुए संजीवन कह रहे थे,'' इस बार बर्फ़बारी बंद होने का नाम नहीं ले रही है। तृषा, तुमने अलाव जला दी है न, आज रूम हीटर से काम नहीं चलेगा।''

''आ - हाँ'' दुबारा शायद उन्होंने यह बात कही थी, क्योंकि आवाज़ में थोड़ी सख्ती थी।

''हाँ जी, बैठक कक्ष में तो शाम से ही अलाव जला दी थी। पिछले दो-तीन सालों से शिमला में बर्फ़बारी काफी होने लगी है। सच पूछो तो बर्फ़बारी मुझे बहुत अच्छा लगती है। रुई के फाहों जैसे बर्फ़ जब पत्तियों पर जम जाते तो अलग सी खूबसूरती दिखलाई देती। पर इस बार की बर्फ़ को मेरे अंदर की ज्वाला मात दे रही थी। बाहर की बर्फ़ भले ही ठंडी और कठोर हो, पर मेरे अंदर, मेरे अतीत पर तीस सालों से जमी बर्फ़ अख़बार के एक कोने पर छपी खबर से यूँ पिघल गई मानों यह लम्हा इतना लंबा न रह कर कल की बात हो। प्रोफ़ेसर उत्कर्ष बिनानी, भारत मूल के वैज्ञानिक को हार्वर्ड यूनिवर्सिटी की ओर से विश्व का सर्वोच्च ''साइंटिफिक अवार्ड'' रसायन शास्त्र के क्षेत्र में उनके अमूल्य शोध के लिए दिया जाएगा। उन्होंने पहले भी केमिस्ट्री के अनेक तथ्यों को सरल करते हुए पाठ्य क्रम को मनोरंजक बनाने का प्रयास किया था, जिसे नामचीन वैज्ञानिकों ने बहुत सराहा था। इस समाचार को पढ़ने के बाद अजीब सी बेचैनी और प्रसन्नता दोनों का अहसास हो रहा था। करीब अट्ठाइस साल के बाद उत्कर्ष को टी वी पर देखूँगी। कैसा लगता होगा वह! बाल झड़ गए होंगे क्योंकि कॉलेज के समय से ही उसके बाल झड़ने लगे थे और उसकी दाढ़ी.. फ्रेंच कट दाढ़ी पक गई होगी। मेरी तरह ही चेहरे पे झुर्रियाँ हो आई होंगी। उम्र की मार कमोबेश सब पर एक ही जैसी होती है। मैंने समाचार पढ़ते ही भावों के अतिरेक को यथा सम्भव छिपाते हुए घोषणा कर दी कि शनिवार के दिन जो अवार्ड समारोह का लाइव टेलीकास्ट होगा, वो मैं देखूँगी।

संजीवन ने कहा, ''ठीक है यह बोरिंग प्रोग्राम जब तक तुम देखोगी, मैं क्लब चला जाऊँगा।''

बेटे ने भी घोषणा कर दी, ''बाप रे, फिर वही लम्बा चटाऊ वाला प्रोग्राम। साक्षात्कार भी होगा न... आपकी सफलता का राज कौन स्त्री, घर- परिवार में किसने मदद की और किसने ऑब्जेक्ट किया वगैरह - वगैरह।'' संभावित प्रश्नों की झड़ी लगा दी बेटे ने।

''ठीक है माँ, मैं उस समय कुछ काम निबटा लूँगा, और चिंता न करो, बीच - बीच में तुम्हें आवाज़ दे दिया करूँगा कि कहीं तुम बोर होकर सो न जाओ।'' संजीवन और संदीप ज़्यादातर स्पोर्ट्स और न्यूज़ चैनल ही देखते हैं, उन्हें इस तरह के गंभीर विषय नहीं भाते हैं। संदीप के कथन पर अब तक मेरा ध्यान जिस पहलु पर नहीं गया था, उस पर भी चला गया।

कविता विकास, डी.-15, सेक्टर-9,
पीओ-कोयलानगर, जिला-धनबाद, पिन-826005, झारखण्ड
मोबाइल: 09431320288
ईमेल: kavitavikas28@gmail.com

''सचमुच कैसी होगी उत्कर्ष की पत्नी ? क्या मेरी तरह ही या कुछ अलग। गोरी चमड़ी वाली मेम भी हो सकती है क्योंकि वर्षों से वह अमेरिका में रह रहा है।'' मेरे रूप पर तो उसने वांछित परिवर्तन किए थे मसलन हेयर स्टाइल कैसे रखने हैं, क्या पहनना है आदि - आदि। मैंने बड़ी शिद्दत से उसकी बातों को माना था। क्या उसकी पत्नी भी उसके मनोनुकूल चलती होगी ? बहुत सारे सवाल मन में उथल - पुथल हो रहे थे। रात की नींद उड़ गई थी, सोते - जागते हर समय उसका ही ख़याल रहता।

मेरे पापा और उत्कर्ष के पापा रेलवे में काम करते थे और अगल- बगल ही रेलवे क्वार्टर में रहते थे। साथ-साथ हम स्कूल जाते। रास्ते भर लड़ते-झगड़ते। वह अक्सर मेरे स्कूल बैग से पानी की बोतल निकाल लेता और स्कूल पहुँचने के पहले ही पीकर ख़त्म कर देता। इस बात पर मैं उससे खूब लड़ती। लड़ाई की और वजहें थीं। उसे कुछ बोलना होता तो बड़ी बेदर्दी से मेरे बाल खींच कर मुझे बुलाता। फिर मैं उसे मारने दौड़ती। वह आगे - आगे, मैं उसके पीछे - पीछे। छोटी कक्षाओं में हम साथ - साथ बैठते। अगर हमें टीचर अलग करतीं तो हम रोने लगते। फिर घर से पापा का आग्रह - पत्र जाता कि हमें साथ बैठने दिया जाए। उत्कर्ष बचपन से ही मेधावी था। हाई स्कूल आते - आते हमारे बैठने का स्थान बदल गया। आठवीं कक्षा में उसने एक कहानी लिखी जो हमारे स्कूल की पत्रिका में छपी।

स्कूल से लौटते हुए उसने कहा, ''मेरे जीवन की पहली कहानी तुम्हें समर्पित है। देखा, इसकी नायिका तुम्हारी तरह है।''

''हें... ये समर्पित - वमर्पित क्या होता है।'' लापरवाही से मैंने पूछा था। उसने कोई जवाब नहीं दिया, बस गहरी निगाहों से मुझे निहारता रहा। उसके बाद के सालों में साहित्य की दुनिया में उसने तहलका मचा दिया। बारहवीं तक पहुँचते - पहुँचते अनेक कहानियाँ प्रकाशित हुईं। था तो वह साइंस का स्टूडेंट, लेकिन कला और साहित्य का मर्मज्ञ। हाई स्कूल की परीक्षाओं में खरा उतरने के कारण ऐसे भी सभी शिक्षकों की आँखों का तारा बन चुका था।

अब पहले वाली चुहलबाज़ियाँ कम हो गई थीं। स्कूल में भी हमारी बातें कम होतीं; क्योंकि हमारी दोस्ती पर सभी की नज़रें रहतीं। एक दिन स्कूल से घर लौटते समय उत्कर्ष ने कहा, ''देखो दीपाली, बारहवीं के रिज़ल्ट पर हमारा भविष्य टिका हुआ है। तुम भी मन लगा कर पढ़ो। इधर देख रहा हूँ कि तुम हर दिन बदल - बदल कर नेल - पॉलिश लगाती रहती हो और बनने - संवारने में ज़्यादा ध्यान देती हो। इन सब को छोड़ो, याद रखो, सादगी में सुंदरता है। तुम एक लम्बी चोटी या खुले बालों में ही अच्छी लगती हो।'' आदतन उसकी बातों का मज़ाक उड़ाते हुए मैंने कहा,''बड़े आए ज्ञान बाँटने वाले, मेरी मर्ज़ी, मैं सजूँ या न सजूँ .... तुम्हें क्या फर्क पड़ता है ?''

''फर्क पड़ता है, अन्य लड़के तुम पर फब्तियाँ कसते हैं, तुम्हारी तस्वीर कॉपी में बना कर भद्दी-भद्दी बातें लिखते हैं, जो मुझे पसंद नहीं।''

''क्यों पसंद नहीं.... क्या तुम्हें प्यार है मुझसे ?''

अचानक उत्कर्ष ने मेरे कंधे को पकड़ कर सागवान के एक बड़े से पेड़ से मुझे टिका दिया और मेरी आँखों में आँखें डाल कर कहा,''हाँ, प्यार है, तुम्हें भी है।''

''मुझे भी है वो तुम कैसे जानते हो ?''

''क्योंकि उस दिन जब क्लास में श्रीमाली और ऋषिका मुझसे हँसी - मज़ाक कर रही थीं, तुम उन्हें घूर कर देख रही थी और उनके चले जाने के बाद याद करो क्या कहा था तुमने।''

''हाँ, वो... मैंने कहा था, ये तुमसे इतना हँस- हँस कर क्यों बात कर रही थीं, तुम इनसे दूर ही रहना।''

''तो फिर, क्यों जलन हो रही थी तुम्हें उनसे, क्योंकि तुम मुझे चाहती हो।'' शरारत से मुस्कुराते हुए उसने मेरी कमर को हौले से खींच कर मेरे मस्तक पर जीवन के पहले प्यार की चुम्बन जड़ दिया।

घर पहुँच कर काफी देर तक मैं प्यार की, उस छुअन की पहली अनुभूति की खुमारी में गोते लगाती रही थी। और उस दिन से लेकर आज तक मैंने कभी नेल पॉलिश को नहीं छूआ। अपने ख़यालों में खोई हुई थी कि संजीवन की आवाज़ सुनाई दी, ''आज खाने में पकौड़ियाँ तल दो तृषा, काफी दिन हो गए तुम्हारे हाथ की पकौड़ियाँ खाए।''

मैं रसोई के सारे काम तल्लीनता से पूरी कर रही थी पर दिल के एक कोने में उत्कर्ष से जुड़ी तमाम स्मृतियाँ करवटें ले रही थीं। सारे काम निबटा कर जब बिस्तर पर पहुँची, संजीवन ने रूम को अच्छा गर्म कर दिया था। संजीवन को लेटने के साथ नींद आ जाती है, पर मेरी आँखों से तो नींद गायब हो चुकी थी।

बारहवीं में मुझे साइंस में दिक्कत होने लगी। कोचिंग की ज़रूरत पड़ने लगी थी। मैंने उसी कोचिंग इंस्टिट्यूट को ज्वाइन किया जिसे उत्कर्ष ने किया हुआ था। पिताजी को तसल्ली थी कि आधे घंटे के इस रास्ते में जहाँ एक जगह पर ऑटो बदलना भी पड़ता है, मुझे कोई परेशानी नहीं होगी अगर उत्कर्ष मेरे साथ होगा। हमें ऑटो में अगल - बगल बैठना बहुत अच्छा लगता। एक दिन ऑटो स्टैंड पर हम खड़े थे कि बारिश होने लगी। निकट की एक दूकान में बचने के लिए हम दौड़ पड़े। फिर भी उस बंद दूकान के बरामदे में पहुँचते - पहुँचते हम दोनों भीग गए थे। उस समय रात के आठ बजे थे। कोचिंग से लौटते हुए अक्सर इतनी देर हो जाती थी। दुकान के बरामदे में मैं अपने दुपट्टे को सुखाने का यत्न करने लगी। मैंने महसूस किया कि उत्कर्ष बड़े ही रोमांटिक अंदाज़ में मुझे निहार रहा है। उसे नज़रअंदाज़ करना चाह रही थी कि अचानक उसने मेरी कमर को पकड़ कर धीरे से अपनी ओर खींचा और मेरे मस्तक पर अपने गर्म होंठ रख दिए। फिर मेरी आँखों पर, गालों पर और होंठ पर अपने दहकते स्पर्श की मोहर लगा दी। तरुणाई का यह प्यार आज तक ज़ेहन में ज़िंदा है। मैंने संजीवन की ओर देखा, वह नींद की आगोश में दिन भर की थकावट निकाल रहे थे। बहुत मासूम लग रहे थे। जाने क्यों बदन में एक सिहरन सी उठी, शायद उत्कर्ष के साथ की ये यादें मुझे गुदगुदा रही थीं।

हमने कॉलेज में विज्ञान संकाय में प्रवेश लिया था। स्नातक करने की अवधि में उत्कर्ष की योग्यता निखर कर सामने आई। उसके तर्क, दलील और अपने विषय में गहरी पकड़ देख कर प्रोफ़ेसर उसे आगे की पढ़ाई के लिए हमेशा विदेश जाने की सलाह देते। रसायन शास्त्र के किसी विषय को वह अपने वाद -विवाद में उलझा कर अक्सर

शिक्षकों को उलझा देता फिर स्वयं ही उसका हल निकाल देता। फ्री टाइम में कहानियों के माध्यम से समाज की घटनाओं पर लिखता। उसकी कहानियों का मूल आधार प्रेम ही था। एक दिन उसने कहा, ''मेरी नई कहानी की नायिका तुम ही हो - लम्बे, घने, काले बाल और भरी - भरी देह वाली।''

''अच्छा, तो मेरा मोटापा अब देश-दुनिया में जाना जाएगा ? तो लो, मैं स्लिम हो कर दिखा देती हूँ।'' और सचमुच मैंने अपना नार्मल डाइट कम कर दिया। इसके कारण मुझे कुछ ही दिन बाद कमज़ोरी होने लगी। चक्कर भी आने लगे और तीन दिन तक कॉलेज नहीं गई। अचानक यूँ अनुपस्थित देख चौथे दिन वह मेरे घर आया। माँ ने उसे मेरे कमरे में भेज दिया और शिकायत भी की, ''जाने क्या डाइटिंग का शौक चढ़ा है, हालत ख़राब हो रही है, पर भरपेट खा नहीं रही। समझाओ इसे कि पहले वाली दीपाली ही अच्छी थी।'' माँ उसे मेरे कमरे में पहुँचा कर चली गई।

''यह क्या रुग्ण काया बना रखी है, अचानक वेट - लॉस का क्या भूत चढ़ गया तुम्हें ?'' मैंने नज़रें नीची करते हुए कहा, ''यूँ ही, यह तो आजकल का ट्रेंड है, फिर तुम्हारी हीरोइन भी दुबली - पतली रहेगी तो अच्छी लगेगी।''

ऐसा लगा जैसे मेरी बातों से उसे चोट पहुँची हो। मेरे गालों को अपनी हथेलियों के बीच दबा कर उसने कहा, ''ऐसी ही हीरोइन चाहिए मुझे भरी - भरी देह वाली, और हाँ किसी ग़लतफ़हमी में न रहना कि मैं आज कल के ट्रेंड का दीवाना हूँ।'' उसकी पतली - पतली चित्रकार सी अंगुलियाँ मेरे कमर के इर्द-गिर्द रेंगने लगी और एक झटके से मुझे खींच कर अपने अधरों को मेरी आँखों पर रख दिया। उसकी साँसों की गर्मी थी या स्पर्श का सुख... मैं बिलकुल स्वस्थ महसूस करने लगी। कॉलेज की लाइब्रेरी में हम छुट्टी के बाद एकाध घंटा अवश्य बैठते। नई पत्र - पत्रिकाओं का अध्ययन करते। मेरे लिए तो उसका मेरे साथ होना इतना मायने रखता कि अनेक बार वहाँ मेरे काम की किताबें न भी होतीं तो मैं सिर्फ उत्कर्ष के लिए बैठी रहती। एक अजीब सा खिंचाव महसूस करती। रात करवटों में बीत जाती। सुबह होने और कॉलेज में उत्कर्ष से मिलने के लिए मन बेचैन रहता। उसके घर में आगे की पढ़ाई के लिए उसे अमेरिका भेजने की बात चल रही थी। जब भी वह इन बातों को छेड़ता मैं परेशान हो जाती। कैसे जीऊँगी उसके बिना और वहाँ जाकर यदि वह बदल जाए तो मेरा क्या होगा, मैंने तो किसी और के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने की कल्पना भी नहीं की थी। एक दिन मेरा यह डर उभर कर उसके सामने आ गया। मैं उसके कंधे पर सर रख कर रो पड़ी। उसने मुझे अपनी बाहों में भरते हुए कहा, ''यह क्या पागलों जैसी बातें कर रही हो? मैं तुम्हें कैसे भूल सकता हूँ। तुम तो मेरी प्रेरणा हो। मेरे बचपन की कली जिसे मैंने अपने मन मुताबिक खिलाया है। तुम तो मेरी इबादत हो।'' उसके बाद हमारा मिलना और भी कम हो गया क्योंकि उसे कई प्रतियोगिताओं में बैठना था और उनकी तैयारी में वह जी-जान से जुट गया। उसकी मेहनत रंग लाई। करीबन सभी प्रतियोगिताओं में वह सफल रहा। उसके पापा उसकी हर कामयाबी की खबर देने हमारे घर आते।

वह भी आता, मेरे पापा-मम्मी के पैर छू कर आशीर्वाद लेता। मैं दरवाज़े की ओट से उसे देखती और जब नज़रें मिल जातीं तब शरारत से वह आँख मार देता। अंततः वह दिन भी आया जब उसे हार्वर्ड में प्रवेश मिल गया। उसने मुझे स्कूल के रास्ते वाले पार्क में मिलने को बुलाया। सागवान के पेड़ के नीचे की बेंच में हम बैठ गए। शाम का धुँधलका घिर रहा था। उत्कर्ष ने मेरी हाथों को थाम रखा था।

''दीपाली, मैं कल जा रहा हूँ। पहले दिल्ली फिर वहाँ से अमेरिका। तुम अपना जीवन बिलकुल स्वाभाविक तौर पे जीना। ऐसा नहीं कि मेरी याद में कुम्हला जाओ।'' उत्कर्ष ने ऐसे ही बात की शुरूआत की थी।

''पर यह कैसे मुमकिन है, उत्कर्ष, मैंने तो तुम्हारे बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की है। अब तो कल से तुम्हारे वापस आने की बाट जोहती रहूँगी।''

''नहीं तुम ऐसा कुछ नहीं करोगी, अन्यथा मेरा भी मन उदास रहेगा और जिस लक्ष्य को प्राप्त करने मैं जा रहा हूँ, शायद उससे विमुख भी हो जाऊँ। तुम्हारे दिल की हर आवाज़ मुझ तक पहुँचती है। इसलिए मुझे याद कर कभी आँसू न बहाना।'' कहते - कहते उसने मुझे अपनी बाँहों में भर लिया। एक दोस्त, एक गार्जियन की तरह मुझे वह समझाता रहा। मैंने अपनी आँखों के आँसू पी लिए। हम घर जाने के लिए उठ पड़े। चार कदम बढ़ कर वह रुक गया। फिर मेरे कमर को अपने हाथों से पकड़ हौले से खींच कर मुझे अपने इतने करीब ले आया जहाँ से मैं उसकी धड़कनों को गिन सकूँ और वही चिर- परिचित अंदाज़ में मेरी आँखों, गालों और मेरे होठों पे अपने प्रेम की आख़िरी मुहर लगा गया। बहुत निराला अंदाज़ था उसका। मैं तो उसके प्यार के गहरे सागर में डूब जाती थी।

वादों - यादों की लम्बी फेहरिस्त लिए हम जुदा हो गए। जल्द अपना शोध कार्य पूरा कर वह मुझे लिवा ले जाएगा। यह सांत्वना मुझे खुश रखने की एक दवा थी जबकि उसकी अनुपस्थिति के वे क्षण बेहद बोझिल होते। एक - एक दिन काटना मुश्किल लगता था, जब भी मैं फ़ोन लगाती, वह जल्द आने की बात करता और ढेर सारी नसीहतें दे देता, मसलन, खाना भरपूर खाना, सूख न जाना, बालों की हिफाज़त करना, पढ़ाई में मन लगाना आदि - आदि। उत्कर्ष मेरे लम्बे बाल को मेरी सुंदरता का राज़ बतलाता था। यह अलग बात है कि उसके अपने बाल तेज़ी से झड़ रहे थे। मैं उससे मज़ाक में कहती, साइंटिस्ट बनने के सारे लक्षण हैं तुममें, देखो कैसे गंजे हो रहे हो ! धीरे - धीरे हमारी बातें कम होती गईं। अगला साल बीत गया, फिर अगला भी। पर वह नहीं आया। पापा रिटायर होने जा रहे थे।उत्कर्ष के पापा भी तक़रीबन उसी समय रिटायर हो रहे थे। वे अपनी पुश्तैनी मकान में गोरखपुर जाने वाले थे। उनके जाने के पहले पापा ने उनसे उत्कर्ष के साथ मेरी शादी की बात चलाई। अंकल को कोई ऑब्जेक्शन नहीं था पर उत्कर्ष के भारत आने तक मुझे रुकना था। पिताजी ने अगले दो साल तक कहीं भी मेरी बात नहीं चलाई। इस बीच मैंने मास्टर्स कर ली। पर, उत्कर्ष के भारत आने की कोई गुंजाइश नहीं दिख रही थी। अब तो फ़ोन की घंटी बजती रहती पर वह उठाता भी नहीं। उसकी छोटी-बड़ी उपलब्धियाँ पेपर में आती रहती। मुझे

विश्वास नहीं होता कि समय इतना बेरहम भी हो सकता है। अपनी खोजों में कोई इतना कैसे खो सकता है कि सारे अंतरंग रिश्ते टूट जाएँ। उसके परिवार वाले भी उसकी इस आदत से खफा थे। यह मेरे लिए बेहद मुश्किल समय था। पापा मेरे लिए लड़का खोज रहे थे। अपने सारे जज़्बातों को परे हटा कर एक नई दीपाली का निर्माण करना बहुत कठिन था। मैंने दिल को समझा लिया, उसे कोई गोरी मेम मिल गई होगी, और फिर जब वह मुझे इतनी आसानी से भूल सकता है तब मैं ही क्यों उसकी याद में पागल होती रहूँ। उत्कर्ष ने जाने से पहले कहा भी था कि मुझे अपना जीवन एक स्वाभाविक तौर पर जीना है, उसे याद कर आँसू नहीं बहाना है। तो क्या, उत्कर्ष का मुझसे दूर हो जाना पूर्वनियोजित था? विश्वास नहीं होता पर अविश्वास जैसा भी कुछ नहीं था।

अपने सारे अरमान और अहसास को भूल कर मैंने नए सिरे से ज़िन्दगी की शुरूआत की। उसके अनेक कहानी संकलन और रचनाओं की पत्रिकाएँ लेकर मैं संजीवन के घर आ गई। उसके घर में सभी जानते थे कि मैं पढ़ने - लिखने की शौक़ीन हूँ, इसलिए अपने साथ लाई हुई किताबों को करीने से मेरे बैडरूम के शेल्फ में सजा दिया गया। ससुराल में संजीवन के साथ - साथ सभी मुझे तृषा कह कर बुलाते। यह नया नाम मुझे अपनी पिछली ज़िन्दगी को भूलने में वरदान सिद्ध हुआ। मैं केवल अपने मायके वालों के लिए दीपाली थी। धीरे-धीरे अपनी गृहस्थी में मैं रम गई। एक मिलिट्री मैन की बीवी कहलाने का बड़ा सुखद अनुभव रहा। ढेर सारे अटेंडेंट रहते। खाना बनाने से लेकर बाज़ार जाने तक अलग - अलग कर्मचारी थे। बहुत सारा फ्री टाइम मिलने के कारण मैं सोशल वर्क में अपना समय बिताने लगी। बड़ा सुकून मिलता था गरीब और त्यक्तों की सेवा करके। संदीप के जन्म के बाद तो समय जैसे पंख लगा कर उड़ता गया। कोई गिला नहीं, कोई शिकवा नहीं। जो भी मिला, जिस हाल में भी, मैंने उसे गले लगा लिया। अब संदीप बाइस साल का खूबसूरत नौजवान बन गया है। मैंने उसे वह सारी आज़ादी दी जो उसके लिए ज़रूरी थी। उसकी गर्ल फ्रेंड मुझे देख कर पूछती, ''आंटी आप नेल पोलिश क्यों नहीं लगातीं, आपके नेल्स तो बड़े अच्छे कटे होते हैं ?''

मैं कहती,''मुझे शौक नहीं है।''

''फिर आप बालों में जुड़ा क्यों नहीं करती ?''

मैं कहती, ''मुझे चोटी या खुले बाल पसंद हैं।''

''आंटी आप कोई श्रृंगार क्यों नहीं करतीं ?''

''जी में आता कह दूँ कि मैंने किसी की बात मानी है'', पर चुप लगा जाती।

वह बोलती जाती, ''मुझे लगता है आंटी, कॉलेज में आपके दीवानों की संख्या कम न होगी, आप हैं ही इतनी आकर्षक।'' उसकी बात सुनकर मैं मुस्कुरा देती। कभी-कभी संजीवन इन बातों को सुनकर मुझे बाँहों में भर लेते,''अरे मैंने उन दीवानों को पीछे छोड़ इन्हें जीत लिया। आख़िर में जो जीता वही सिकंदर।'' मैं भी शरमा कर इनकी बाँहों में सिमट जाती।

अपने अतीत को पीछे छोड़े हुए एक लम्बा समय गुज़र गया था। पिछले हफ्ते अख़बार के एक कोने में छपा समाचार, जिस में उत्कर्ष को विज्ञान वर्ग में दिया जाने वाला विश्व- विख्यात इस अवार्ड की घोषणा की गई थी, ने मेरी अपनी दुनिया में सेंध लगा दी थी। बचपन और जवानी के दिनों में उत्कर्ष के साथ बिताए गए दिन अक्सर मेरी आँखों में तैरते रहते। कई बार तो अकेली बैठी मुस्कुरा पड़ती, कभी सिहर जाती तो कभी उत्तेजित हो जाती। अवचेतन मन में बैठी हुई उसकी यादें पुन: उभर पड़ी थीं। मन करता उसकी पत्नी को देखूँ जिसके लिए उसने मुझे छोड़ दिया। वर्षों के कसमें-वादे तोड़ दिए। कुछ तो कारण रहा होगा आख़िर, जिसके चलते मुझसे बात करना उसने छोड़ दिया था। अपने शोध कार्य को अद्वितीय बनाने का जुनून समझ में आता है, विलक्षण प्रतिभा का धनी था वह, जिस कार्य में हाथ लगाता, उसमें डूब जाता। पर ऐसा भी क्या जुनून कि सारे रिश्ते - नाते बेमानी हो गए। आश्चर्य है, गुस्सा भी करती हूँ उस पर, फिर बड़ी सहजता से उसकी मज़बूरी की सफाई भी खुद ही दे डालती हूँ। दिल में ही उसकी सफलता का जश्न मना लेती हूँ। किसी के साथ बगैर शेयर किए। मेरे माँ-पिताजी अब जीवित नहीं थे और उसके माँ-पापा के साथ कोई संपर्क नहीं रहा था। अच्छा लगता था सोच कर कि इस सम्मान के भागीदार विरले ही हैं और मेरा उत्कर्ष उनमें से एक है।

रविवार का दिन था। मैंने सुबह में ही शाम के नाश्ते - खाने का इंतज़ाम कर लिया था। रात आठ बजे सम्मान समारोह का सीधा प्रसारण था। कार्यक्रम के दौरान मैं अपने को कहीं नहीं व्यस्त रखना चाहती थी। धीरे - धीरे वह घड़ी भी पास आ रही थी। संजीवन सात बजे क्लब चले गए और संदीप अपने दोस्तों के साथ निकल गया। साढ़े सात बजे से मैंने टी. वी. ऑन कर दिया। जैसे - जैसे समय सिकुड़ रहा था, मेरी धड़कनें भी तेज़ हो रही थीं। गज़ब की बेचैनी.. कैसे देखूँगी उसे .... अब तो उसकी दाढ़ी भी पक गई होगी। आँखों पर मोटा चश्मा होगा, हलके पके बाल या वैज्ञानिकों की तरह गंजे सिर वाला हो गया होगा वो ज़रूर वाइट शर्ट और ब्लैक पैंट में ही आएगा। फॉर्मल पार्टियों में यह उसका मनपसंद ड्रेस होता था। अट्ठाइस साल पहले के उत्कर्ष में मेरी कल्पनाओं ने रंग भरना शुरू कर दिया था। अब मैं पचास साल के उत्कर्ष को देख रही थी। बेचैनी के ये पल कहीं मेरी जान न ले ले। नहीं .... मैं नहीं देख पाऊँगी उसे .... हे भगवान् यह लाइट चली जाए .... कोई आ जाए .... मैं अपना आपा न खो दूँ। हे ईश्वर .... शक्ति देना मुझे। मेरे जीवन का पहला प्यार, जिसके संग स्मृतियों की अनगिन परतें दबी थीं, जिसकी इच्छाओं को मैंने अपने व्यक्तित्व में ढाल कर खुद को जीवित रखा है .... वो आज मेरे सामने होगा। टीवी स्क्रीन से निकल कर काश मेरे सामने आ जाए ! मैं भी न उलजलूल सोचती हूँ .... !

अरे, यह क्या हुआ .... मेरी आँखें बंद होने लगीं। लगता है कोई भारी बोझ रखा है पलकों पर। मेरा पूरा शरीर उत्तेजित हो रहा है। मैं दीवार से सट कर खड़ी हो जाती हूँ। लगा जैसे मेरे पीछे कोई खड़ा है। ये पतली - पतली चित्रकार सी अँगुलियाँ मेरे कमर पर रेंग रही थीं और वह एक झटके से मुझे खींच कर मेरे बालों के झुरमुट में अपना सर छुपा रहा था। मेरे नाक, गाल, गर्दन हर जगह वह बेतहाशा चूम रहा था। मैं उस

जानी पहचानी देह – गंध के आगे अपने आप को खो रही हूँ। उस अद्भुत प्यार के सागर में डूब रही हूँ। वर्षों का गिला-शिकवा उसकी उपस्थिति मात्र से मिट गया। ज़रा भी नहीं बदला था वह..... ज़रा भी नहीं। वही रूप – रंग, वही हरकतें। मैं पसीने से तर-बतर थी।'' हाँ तो बाल नहीं काटे न तुमने, ठीक किया, और वैसे ही भरी – भरी हो, स्लिम होने का भूत नहीं चढ़ा, अच्छा है। कोई कृत्रिमता नहीं, वैसा ही नैसर्गिक सौंदर्य है। मेरी दीपाली, भोर की तरह स्निग्ध, ओस की तरह शीतल और गुलाब की तरह नर्म है। सचमुच तुम मुझे इतना चाहती हो... मेरी कल्पना से भी ज़्यादा।

यानी पिछले अट्ठाइस सालों से वक़्त आगे बढ़ा ही नहीं। हम जैसे जुदा हुए थे, वैसे मिल रहे थे। मेरी साँसें ऊपर – नीचे होती हुई तीव्र गति से चल रही थी। मैं धम्म से कुर्सी पर बैठ जाती हूँ। अचानक किसी ने मेरे कन्धों को झिंझोड़ा।

''माँ... माँ, क्या कर रही हैं आप अँधेरे में ?कब से पावर कट हो चुका है और आप इस ठंडक में भी पसीने – पसीने हो रही हैं। आपने प्रोग्राम देखा? ''

''आ.. हाँ.. नहीं, पावर कट हो गया था न, मैं इन्वर्टर का स्विच भी नहीं ऑन कर पाई। जाने कब मेरी आँख लग गई'' मैंने अपने आप को सँभालते हुए कहा।

''मैं विदिशा को कह ही रहा था कि माँ जो भी चाहती हैं उन्हें मिलता नहीं। कितने दिनों बाद आज वह किसी प्रोग्राम को लेकर उल्लसित थीं, तो पावर कट हो गया। तुमने रिकॉर्डिंग मोड भी ऑन किया होता तो बाद में यह प्रोग्राम देख लेतीं।'' संदीप को मेरी हालत पर तरस आ रहा था।

उत्कर्ष को न देख पाने का अफ़सोस बना रहा। मुझे अपने आप पर कोफ़्त हो रही थी। संजीवन भी क्लब से आ गए थे। खाने के समय बेटा अपने पापा को बता रहा था, ''माँ तो अपने पसंदीदा कार्यक्रम के इंतज़ार में सो गई थी। वह तो मैंने आकर इन्हें जगाया और इन्वर्टर ऑन किया। ''

रात के सारे काम निबटा कर मैं सोने चली गई। वैसी सुकून भरी नींद बहुत दिनों बाद आई थी। पोर – पोर हल्का हो गया था। जाने क्या जादू हो रहा था।

सवेरे चाय की चुस्कियों के साथ अख़बार देख रही थी। अख़बार के एक कोने पर कल के अवार्ड समारोह की ख़बरें थीं। वहाँ मौजूद भारतीय पत्रकारों ने उत्कर्ष पर विशेष फोकस किया था।

''प्रोफ़ेसर उत्कर्ष बिनानी विश्व के पाँच महान् वैज्ञानिकों के साथ सम्मानित'' इस हैडलाइन के साथ एक लम्बा – चौड़ा उसका साक्षात्कार भी था और एक ग्रुप फ़ोटो। फ़ोटो अत्यंत छोटा होने के कारण स्पष्ट नहीं था,पर बाएँ से तीसरे वाले स्थान पर उत्कर्ष की फ़ोटो थी। मेरी सोच सही थी, वह वाइट शर्ट और ब्लैक पैंट में ही था। मैंने उसके साक्षात्कार को पढ़ना आरम्भ किया। पत्रकार ने बड़ी चतुराई से उसके जीवन के एक- एक पहलुओं पर उसके जवाब लिए थे। आरंभिक जीवन में परिवार का सहयोग, स्कूल – कॉलेज की मेधा सूची में नाम दर्ज़ करने के अनुभव, विदेशों में भारतीयों के साथ होने वाले व्यवहार और हार्वर्ड की अन्य गतिविधियों के बीच समायोजन आदि बिन्दुओं पर चर्चा थी। साक्षात्कार के जिन प्रश्नों पर उसके उत्तरों ने मुझे आकर्षित किया, वो ये थे...

साक्षात्कारकर्ता – इस कामयाबी का श्रेय आप किसे देंगे ?

उत्कर्ष – मेरे माता – पिता, गुरुजनों और बचपन की मेरी सहपाठी।

साक्षात्कारकर्ता- आपने विवाह क्यों नहीं किया?

उत्कर्ष- मैंने महसूस किया कि विवाह कर के मैं उसके साथ न्याय नहीं कर पाऊँगा। मेरा शोध मेरा पूर्ण समर्पण चाहता था। इसलिए मैं उससे दूर होता गया। पर सच कहूँ आज भी उससे जुड़ा हुआ हूँ, कभी उसे अपने से अलग नहीं समझा।

साक्षात्कारकर्ता- तो अब आप उसे देखना चाहेंगे?

उत्कर्ष – यूँ तो अमेरिका जाने के छह साल बाद मैं भारत आया था। मुझे पता चला उसकी शादी हो गई है और वह अपने परिवार के साथ खुश है। यह सही निर्णय लिया था उसने। उसमें एडजस्टमेंट की गज़ब की क्षमता थी। ज़िन्दगी जीने के सकारात्मक दृष्टिकोण का मैं सदा से कायल रहा हूँ। वह जहाँ भी है, मेरी सफलता की खबर उसे ज़रूर मिल गई होगी.. और उसने इस कार्यक्रम को देखा भी होगा। मेरी सफलता उसकी शुभकामनाओं का ही प्रतिफल है। उसे जीवन की बीच राह पर छोड़ देने के लिए उससे माफ़ी माँगता हूँ।

साक्षात्कारकर्ता- आपकी मित्र और प्रेरक के बारे में कुछ बताएँ।

उत्कर्ष – काफी लम्बे – घने बाल थे उसके, औसत कद -काठी, मोटी नहीं, पर पतली भी नहीं। (पढ़ते – पढ़ते मैं मुस्कुरा पड़ी)और बाईं कान के पीछे कटे का निशान।

अचानक मेरा हाथ बाईं कान के पीछे चला गया उस कटे के निशाँ पर जो बालों से ऐसा ढका रहता था कि आज तक किसी ने कभी नोटिस नहीं किया थी।

साक्षात्कारकर्ता-कैसे कटी थी वह जगह?

उत्कर्ष – आर्ट की कक्षा में पेपर काटने वाली कैंची से उसने अपने बाल कुतर दिए थे। सामने के बेतरतीब कटे बालों पर पूरी कक्षा में ठहाके लग रहे थे और वह भी इन ठहाकों में शामिल थी। मुझे बेहद गुस्सा आ गया, मैंने आव देखा न ताव और अपने बस्ते से उसे दे मारा। यह तीसरी कक्षा की घटना थी। वह खूब रो रही थी। उसे टाँके लगे और मुझे सज़ा मिली। उस के दर्द को मैं आज भी महसूस कर ग्लानि से भर जाता हूँ। पागल लड़की थी वह....

मैंने मन ही मन सोचा,''पागल तो तुम भी थे उत्कर्ष। प्यार में बेहद हो जाना तभी होता है जब दोनों पागल होते हैं। असली प्यार तो तुमने निभाया है। अभी तक मेरी यादों के सहारे जी रहे हो। तुम्हें वादाखिलाफ़ी और मतलबपरस्त माना था, मुझे क्षमा कर दो दोस्त।''

उसकी विद्वता पर नाज़ हुआ कि बगैर मेरा नाम लिए तमाम एहतियातों के साथ अपना सन्देश मुझ तक पहुँचा दिया उसने। मुझे मेरे अनगिनत सवालों के जवाब मिल गए थे। मैंने जीवन के मीठे-खारे सभी अनुभवों को सागर की भाँति खुद में समा लिया था, पर वह तो सीप था जिसने सागर को खुद में समा लिया था।

संजीवन की ओर पेपर बढ़ाते हुए मैंने कहा, ''लो देखो, ऐसे भी लोग होते हैं दुनिया में।''

***

सीख

डॉ. पुष्पलता

एक हफ्ते बाद हम दिल्ली से लौटे थे। ताला खोलकर अन्दर घुसे तो कार्ड व पेपर धूल से अटे नीचे पड़े थे, जो चैनल के नीचे से डाले गए थे। धूल झाड़कर उन्हें मेज़ पर रख ऊपर आ गए। ताला खोलकर देखा तो जाल से आए तिनके, पत्ते व पंख फैले थे। शायद आँधी आई होगी, धूल भरी थी। रसोई खोलकर देखी, तो हालत देखकर रोने का मन हो गया। पूरी रसोई में पंख, तिनके, बीट और दुर्गन्ध भरी थी। सारे बर्तन, गैस, फिल्टर एक्वागार्ड पर बीट ही बीट थी। यह कैसे साफ होगी, सोच ही रही थी कि कबूतरों का एक जोड़ा एग्ज़ॉस्ट फैन के रास्ते से घुसा और मुझे देखकर बाहर भाग गया। जल्दी में जाते समय उनके कई पंख मेरे ऊपर आ गिरे और पंखों के उखड़ने से खून की बूँदें भी गिर पड़ीं। ऐसी रसोई में खाना बनने का तो सवाल ही नहीं था।

''इतने छोटे से रास्ते से भी घुस गए। मैं बाज़ार से खाना लेकर आता हूँ, 11 बजे हैं, दुकान भी बन्द होने को है।'', यह कहकर मेरे पति चले गए।

मैंने ज़रूरत की प्लेट-कटोरी माँजकर, फिल्टर साफ कर पानी भरकर कमरे में रख लिया। खाना खाकर सुबह सोचेंगे, यह विचार कर, बैड कवर उतारकर सो गए। सुबह चाय का डब्बा साफ कर, दो कप चाय बनाकर मैं काम वाली को बुलाने के लिए पड़ोस में फ़ोन करने लगी। वह वहाँ भी काम करती थी। इतनी गन्दी रसोई साफ करना मेरे वश की बात नहीं थी, रसोई में घुसते ही दुर्गन्ध से सिर में दर्द हो रहा था। हम हफ्तों बाहर रहते थे। चाहे कामवाली ने महीने में चार दिन ही काम किया हो, मैं उसके पैसे नहीं काटती थी। इसलिए वह मेरा लिहाज करती थी। उसने सारे बर्तन, गैस, स्लैब वगैरह साफ करके रसोई धो दी, मगर बॉक्स के ऊपर बीटों का अम्बार शायद लगा था। दुर्गन्ध ज्यों की त्यों थी। कुर्सी पर चढ़कर देखा तो दो अण्डे रखे थे। दूध वाले के लड़के से मैंने कबूतर का घोंसला व अण्डे उठवाकर जीने के ऊपर रखी चावल की टंकी पर सँभालकर रखवा दिए। खिड़की व ज़ीना, कबूतरों को अण्डे दिखाई देते रहें, सोचकर खुला छोड़ दिया। ऊपर से बीट साफ करवाकर पेपर बिछवा दिए। सोचा, किसी पुताई वाले से खाली रसोई में ही पेन्ट करवा लूँगी। बॉक्स भीतर से तो साफ ही थे। मैं जाकर देखती, अण्डे ज्यों के त्यों रखे थे। बीस दिन के करीब

डॉ. पुष्पलता, 253 / ए, साउथ सिविल लाइंस, मुज़फ़्फ़रनगर 251001, उत्तर प्रदेश
मोबाइल: 9458413369
ईमेल: pushp.mzn@gmail.com

हो गए। अंडे तो खराब हो चुके होंगे, मैं सोचने लगी थी। कबूतर नहीं आए। शशांक दशहरे की छुट्टी में घर आया तो बोला – ''पेन्ट करवा रहे हो।'' मैंने उसे सारी बात बताई, वह बोला– ''जब मैं कानपुर में था, मुझे एक दिन सपना आया रसोई में दो अण्डे रखे हैं, जो आपने उठवाकर डेयरीवाले की छत पर रखवा दिए।'' मैंने सचमुच जब महीने भर तक कबूतर नहीं आए और पड़ोस की भाभी जी ने बताया कि पक्षियों के अण्डे छू दो तो वे उन्हें नहीं सेते, उन्हें डेयरी वाले की छत पर रखवा दिए थे। मेरे मन में अण्डे छेड़कर खराब करने का अपराध-बोध था। मगर कबूतर दोबारा रसोई में न घुस जाए, यह सोचकर एग्ज़ॉस्ट के होल में पीछे गत्ते लगवा दिए। हवा न मिले, कम से कम कबूतर तो नहीं घुसेंगे, यह सोचकर सकून था। कबूतर बार-बार आने की कोशिश में लगे थे मगर आ नहीं पा रहे थे। कभी-कभी इतना होल कर देते थे कि लगता था, घुस जाएँगे। मुझे फिर शशांक का सपना याद आ गया। सपनों का रहस्य भी समझ से परे है।

हमें पन्द्रह दिन के लिए फिर पारुल के पास दिल्ली जाना पड़ा। पारुल के पास जो लड़की रह रही थी, उसकी आँख का ऑपरेशन होना था। वह पन्द्रह दिन की छुट्टी ले चुकी थी। पारुल के अकेला होने या इनका कोई काम होने की वजह से मुझे भी साथ जाना पड़ता था, क्योंकि दोनों बच्चे बाहर होने के कारण मैं अकेली यहाँ नहीं रह सकती थी। पन्द्रह दिन बाद घर लौटे तो रसोई पुरानी कहानी दोहरा रही थी। कबूतरों ने कोशिश करते-करते गत्ता हटा दिया था। कबूतर का जोड़ा डरकर झटके से बाहर भागा, फिर से पंख व खून के छींटे बिखर गए। मैं अपने पति पर गुस्सा उतारने लगी ''मैंने कहा था न, इसमें बाहर जाली लगवा दो।'' ये भी परेशान खड़े थे। कुर्सी पर चढ़कर देखा, फिर बॉक्स के ऊपर दो अण्डे रखे थे। कोई चारा नहीं था। मैंने सुबह कामवाली से सारे बर्तन मँजवाकर बाहर रखवा लिए। एक पुरानी मेज़ पर बाहर चूल्हा रखकर खाना बनाने लगी। रसोई कबूतरों के हवाले कर दी। कबूतरी बार-बार घुसती, घंटों बैठी रहती, काम वाली सफाई करने या मैं कोई सामान उठाने घुसती तो भाग जाती। मेरी कोशिश थी कि मैं उसे ज़्यादा डिस्टर्ब ना करूँ। मैं उसके दो अण्डे खराब करने का पाप दोबारा नहीं कर सकती थी। कुछ दिन बाद कबूतरी की फड़फड़ के साथ बच्चों की चीं-चीं की आवाज़ें आने लगीं। कबूतरी अब हमारे घुसने के बाद भी भागती नहीं थी। हम उसे नुकसान नहीं पहुँचाते, वह समझ गई थी। मैंने एक चपटे बर्तन में पानी भरकर तथा चावल बॉक्स के ऊपर अखबार पर रख दिए। महीने-भर से खाना बाहर बना रही थी। कब इस मुसीबत से पिण्ड छूटे, इस इंतज़ार में थी। कभी-कभी कबूतरी के साथ कबूतर भी आता था। शायद दो बच्चों को झगड़ते, उड़ते, खाते, पीते देखकर हैरान था। कबूतरी सारा दिन बच्चों को खिलाने में लगी रहती। थोड़ी-थोड़ी देर बाद रसोई में चीं-चीं, फड़-फड़ का शोर-शराबा चलता। कबूतरी उड़ जाती, तो दोनों बच्चे अनुशासित सिपाहियों की तरह कोने में दुबक जाते। उनके पंख निकल गए थे। वे बॉक्स के किनारे तक आते, मेरे अन्दर घुसते ही कोने में एक-दूसरे से चिपक जाते। कबूतरी उन्हें उड़ने की ट्रेनिंग दे रही थी। इस बॉक्स से उस बॉक्स तक उड़-उड़कर बाकायदा उड़ना सिखा रही थी। रसोई उनकी हो चुकी थी और कामवाली बीट साफ करते-करते तंग आ चुकी थी। दूसरे टाइम तक रसोई उसी हालत में आ जाती थी। एक बच्चा कबूतरी के खाना खिलाने के समय देर तक चोंच उसकी चोंच से हटाता नहीं था। वह ज़्यादा खाना खाता था। तब तक दूसरा थोड़ा कमज़ोर बच्चा चीखता रहता था। कई बार कबूतरी खाना खत्म हो जाने के कारण बड़े को खिलाकर ही लौट जाती थी। फिर दोनों बच्चे कबूतरी के जाने के बाद डर से एक-दूसरे से चिपककर बैठ जाते थे। मुझे बड़े बच्चे की बदतमीजी पर गुस्सा भी आता था। कभी-कभी थोड़ा-सा दरवाज़ा खोलकर मैं उनकी हरकतें देखती रहती थी। दोनों बच्चे तेज़ी से बड़े हो रहे थे। उनकी उड़ान एग्ज़ॉस्ट तक हो चुकी थी। कबूतरी के बार-बार बाहर जाने के कारण वे बाहर की दुनिया देखने को उत्सुक थे। एक दिन मैंने देखा, बच्चे एग्ज़ॉस्ट के बाहर बैठे थे। जल्दी से इन्हें बुलवाकर मैंने गत्ते लगवा दिए। वे खिड़की के शीशे से, कभी गत्ते से भीतर आने की कोशिश में लगे रहे। मुझे रसोई खाली होने का सकून था तो उन्हें घर छिन जाने का दुख। अँधेरा होने पर मैंने ऊपर जाकर देखा, गत्ते के बाहर बैठे दोनों बच्चे शायद कहीं चले गए थे। कहीं उन्हें बिल्ली न खा गई हो? कहीं मेरी, कबूतरी की, कामवाली की मेहनत बेकार न चली गई हो? यह सोचकर मुझे नींद नहीं आ रही थी। मैंने भगवान् से प्रार्थना की कि मैंने अपना काम पूरा कर दिया। अब उनकी रक्षा की ज़िम्मेदारी तुम्हारी है और मैं सो गई। सुबह उठते ही छत पर गई तो देखकर बहुत खुशी हुई। दोनों बच्चे सही-सलामत थे। ऊपर छत पर बने कमरे में शायद छुप गए होंगे। वे एग्ज़ॉस्ट पर आकर अब भी बैठते हैं। मैंने एग्ज़ॉस्ट पर जाली लगवा दी है। उन्हें अपना घर याद आता है और मुझे खिड़की और एग्ज़ॉस्ट पर बैठा हर कबूतर अपना-सा लगता है। कबूतरों की शक्ल पहचान में नहीं आती, मगर मेरी आँखें अब भी दोनों बच्चे कौन से होंगे, अक्सर ढूँढ़ती हैं। मैंने छत पर पानी का टब रख दिया है। दूसरे-तीसरे दिन चावल भी डालकर आती हूँ। कबूतर व कबूतरी कहाँ गए, पता नहीं। परिन्दे बच्चों से परवरिश की कीमत पाने की उम्मीद नहीं रखते, उड़ना सिखाकर आज़ाद कर देते हैं। मैं उन बच्चों को पहचान नहीं सकती मगर अण्डे बाहर रखवाने के अपराध बोध से मुक्त हो चुकी हूँ और शायद बुढ़ापे में बच्चों से सेवा करवाने की उम्मीद से भी, क्योंकि वे परिन्दे मुझे बहुत कुछ सिखा गए हैं।

फ़ोन उठाती हूँ – ''हैलो!''

''मम्मी इसके बी.एड. के पेपर हैं। मोनी को सँभालने को कोई चाहिए। जल्दी आ जाओ।''

''एकदम कैसे आ जाऊँ। हम रसोई ठीक करवा रहे हैं।''

''मुझे कुछ नहीं पता, नहीं आई तो कभी बात नहीं करूँगा।''

''क्या कह रहा है?'' पति ने पूछा।

''सोनू है, आने के लिए कह रहा है। मीतू के बी.एड. के पेपर हैं।''

''जा, तू वहीं ठीक है'', थोड़ी देर पहले हमारी आपस में बहस हुई थी।

''हाँ मैं भी सोच रही हूँ चली जाऊँ। वैसे भी तुम्हें फूटी आँख नहीं भाती। दिन-रात जीना मुहाल किया है। बिना मतलब

लड़ते रहते हो।''

''हाँ, ठीक है वहीं रहना, आना भी मत।''

मेरी आँख से आँसू छलक गया था।

सारी ज़िन्दगी जिस पति के पास रहने को तड़पती रही, वह मिलिट्री से रिटायर्ड होकर पास रहा भी तो उसे अब वह ज़रा भी नहीं भाती। खुश होकर सामान बाँधने लगी। चलो वहाँ बच्चे के साथ मन लगा रहेगा।

तीन घंटे में बेटे के पास पहुँच गई थी।

सबने अच्छी तरह स्वागत किया। बहू पाँव छू, पानी देकर चाय बनाने चली गई।

''नोनी, देखो दादी आई है। अब तुम दादी के पास रहना, ठीक है।'' सोनू ने कहा।

नोनी ने 'हाँ' में गरदन हिला दी और पास खड़ा हो गया। मैंने उसका मुँह चूमकर गोद में बैठा लिया।

सुबह नाश्ता, दोपहर में लंच, और रात का खाना मैं खुशी-खुशी तैयार करती। बहू को वक्त नहीं मिलता था। उसके कपड़े भी धोकर रख देती। दिन भर नोनी के साथ खुश रहती। काम करते वक्त उसे खेल में लगाए रखती। जैसे खाना बनाते वक्त आटे की गोली दे देती ताकि वह इधर-उधर भटककर चोट न खा ले। कपड़े धोते वक्त एक छोटा कपड़ा थमा देती। वह खुद भी कहता - मैं भी धोऊँगा। एक महीना बीत गया। पेपर खत्म हो गए थे।

नाश्ता बना रही थी। पास खड़े नोनी को आटे की गोली दे दी।

बहू ने उसे डाँटकर कहा, ''ये क्या गन्दे-गन्दे खेल सीख गया है।'' आटा छीनकर फेंक दिया। नोनी रोने लगा।

''बच्चा है'', कहकर मैं कपड़े धोने लगी। वह छोटा रुमाल पानी में भिगो-भिगोकर धोने लगा।

सारा दिन उल्टे-सीधे काम करेगा। बहू ने उसके हाथ से रुमाल छीनकर फेंक दिया। वह फिर रोने लगा।

''बच्चा है, खेलने दो न।'' मैंने कहा।

''मम्मी आपने पता नहीं कैसी-कैसी आदतें सिखा दी हैं इसकी मम्मी आई थी। एक भी ऐसी आदत नहीं सीखी।'' बेटे ने कहा।

''अब क्या मुँह देख रहे हो? जाकर दूध-ब्रेड ले आओ।'' बहू ने झुँझलाते हुए सोनू से कहा। वह बाहर निकल गया।

बाहर जाने लगी। नोनी रोने लगा, ''मैं भी चलूँगा।''

बहू ने उसके मुँह पर चाँटा मारकर कहा, ''सारा दिन बाहर घूमने को चाहिए। बैठ अन्दर!'' उठाकर बैड पर पटक दिया।

''बच्चा है, क्यों बनावट दिखा रही है?'' मैंने कहा।

बहू हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। ''मम्मी, आप प्लीज़ चली जाओ यहाँ से! आप प्लीज़ चली जाओ यहाँ से।''

मैं सन्न खड़ी रह गई। न जाने भीतर क्या रेत की दीवार-सा दरक गया। आँखों से आँसू ढलते रहे। सामान बैग में रखने लगी।

''लो, पिताजी का फ़ोन है''- बहू ने फ़ोन सामने बैड पर पटककर कहा।

''हाँ!'' मेरा गला भर आया।

''ठीक हूँ'', मुश्किल से बोली।

''वहाँ आप कहते हो, चली जा! यहाँ बहू हाथ जोड़े खड़ी थी-चली जा। कहाँ जाऊँ?'', सिसकियाँ उभर रही थीं।

उधर खामोशी छाई थी।

''आ जा! आ जा!'' सुनकर इनके भीतर भी शायद कुछ दरक गया था।

सोनू हल्का सा बैग लेकर बस में बैठाने जा रहा था।

भारी मन के साथ मैं बेटे के पीछे-पीछे थी। बहू बाहर आकर खड़ी हो गई थी। 'मैं भी दादी के साथ जाऊँगा' - नोनी भागकर लिपट रहा था। गोद में उठाकर नोनी के हाथ में रुपये रख, मुँह चूमकर मैं आँसू पोंछती हुई चल दी। नोनी का हाथ बहू ने पकड़ लिया था। वह छुड़ाने की कोशिश में चिल्लाकर रो रहा था।

''मैं भी जाऊँगा, दादी के साथ। छोड़ो मुझे!'' मुड़कर नोनी का चेहरा देखती हूँ। आँसू ढलक गए हैं। तेज़ चलने लगी हूँ।

बस में बैठकर भरे गले से सोनू को इतना ही मुश्किल से कह पाई, ''ध्यान रखना अपना व नोनी का।''

सोनू की आँखें भीग गई थीं। बस चल दी। काफी देर आँसू उबलते-ढलते रहे। पोंछती रही। फिर सोचने लगी, क्यों दुखी हूँ? बेटे-पोते के साथ रहने के मोह में? उस कबूतरी ने भी तो इसी तरह जतन से पाले थे बच्चे। अब ममता शान्त हो गई थी।

***

फार्म IV

समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण (देखें नियम 8)।

पत्रिका का नाम : विभोम स्वर

1. प्रकाशन का स्थान : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

2. प्रकाशन की अवधि : त्रैमासिक

3. मुद्रक का नाम : जुबैर शेख़।

पता : शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. प्रकाशक का नाम : पंकज कुमार पुरोहित।

पता : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

5. संपादक का नाम : पंकज सुबीर।

पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. **उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं। स्वामी का नाम :** पंकज कुमार पुरोहित। **पता :** रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।

दिनांक 20 मार्च 2019

हस्ताक्षर पंकज कुमार पुरोहित

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

तुम नहीं समझोगे!

राजगोपाल सिंह वर्मा

''क्या बताऊँ, कैसे समझाऊँ तुमको। कुछ सुनती ही नहीं तो समझोगी कैसे अनन्या'',

भुनभुनाता हुआ प्रसनजीत अपना मोबाइल उसके हाथ से लेकर बाहर निकल आया। गुस्से में प्रसनजीत घर से निकल गया। क्या उसे इतना भी अधिकार नहीं था कि वह अपने पति के किसी पर-स्त्री से निकट संबंधों के विषय में पूछने का साहस कर सके? उसकी सासू माँ भी आ गई थी। वह उल्टे उसे ही नसीहत दे रही थी ''कितनी बार समझाया... ज़्यादा बंधन में न रखा कर उसे। मर्द है। थोड़ा बहुत भटकते हैं सभी, आदत होती है उनकी इधर-उधर मुँह मारने की, पर घूम-फिर कर तो यहीं आता है न वो?''

अनन्या ठीक से सुन नहीं पाती तो क्या, उसे हर इन्सान के होठों की बुदबुदाहट तक को भाषा में तब्दील करने की शक्ति भी तो उसी ईश्वर ने दी है, जिसने उसे उसके कानों से शक्तिविहीन कर दिया था।माँ है उसकी तो बुराई में भी अच्छाई का अंश ढूँढ़ ही लाती है। अब तो उसे समझ ही नहीं आता कि प्रसनजीत में कोई कमी है भी, या वही ज़्यादा सोचती है। शायद ज़माना इतना ही बदल चुका हो।

बमुश्किल तीन साल की रही होगी वह। अब तो ठीक से याद भी नहीं, पर न जाने कैसे हुआ। बताते हैं कि टाइफाइड के लगातार तेज़ बुखार की तीव्रता के प्रभाव से उसकी सुनने की इन्द्रियाँ शिथिल पड़ती गई, और अंत में वह समय भी आया जब आसपास के ही नहीं कोलकत्ता, मुंबई और नई दिल्ली के बड़े अस्पतालों के ई एन टी विभाग के जाने-माने डाक्टरों ने भी अपने हाथ खड़े कर दिए। ऐसी स्थिति पाँच लाख में से एक पेशेंट के साथ आती है, पर दुर्भाग्य भी तो देखिए कि यह पाँच लाखवाँ इंसान अनन्या को ही बनना था, बहुत कम सुन पाता था उसे, हियरिंग ऐड लगाने के बाद भी।

दिन छिपने के समय का गया जीत अभी तक लौटा नहीं था। ग्यारह बज गए थे। घर का काम, चौका-चूल्हा समेट कर वह दिन भर की थकान से चूर सोने के लिए बिस्तर लगा रही थी। कृष्ण, यानी उसका दो साल का नन्हा बेटा, जिसमें उसकी जान बसती थी, पहले ही सो चुका था।

उसकी आँखों के सामने सब चलचित्र-सा चलने लगा। कम सुनने के बावजूद उसका

राजगोपाल सिंह वर्मा, फ्लैट नंबर-103, रीगेल रेजीडेंसी, कामायनी अस्पताल के पीछे, आगरा एन्क्लेव, सिकंदरा, आगरा-282007
मोबाइल : 9897741150,
ईमेल: rgsverma.home@gmail.com

लाड़ घर में कुछ ज़्यादा ही था, ख़ास तौर से बड़ी बहन की अपेक्षा। उसे कोई दिक्कत नहीं थी, इसलिए माँ और पिता का सारा स्नेह अनन्या के ऊपर ही उड़ेला जाता। दोनों के जिगर का टुकड़ा थी वह। कृतिका ने भी कभी इस बात का मुद्दा नहीं बनाया कि अनन्या को ज़्यादा प्यार क्यों दिया जाता है।

उसने जम कर पढ़ाई की। मेधावी थी, सो ग्रेजुएशन तो किया ही, कम्प्यूटर एप्लीकेशन और वेब डिजाइनिंग में डिप्लोमा भी कर लिया। दिक्कतें? बहुत दिक्कतें आई। स्कूल से लेकर कॉलेज तक में, पर कुछ उसने अनदेखी की, कुछ उसने समझदारी से पार कर ली। केवल अपने अध्यापकों के हाव-भाव और नोट्स से पढ़कर उसने जब ग्रेजुएशन किया, वो भी अच्छे नंबरों से तो उसे स्वयं भी विश्वास नहीं हुआ था।

ऐसा नहीं था कि उसका इलाज असाध्य हो। पर डॉक्टर्स कहते थे कि यह 'अनप्रेडिक्टेबल' ज़रूर है। संभावनाएँ हैं भी और नहीं भी। आम भाषा में कहें तो उसका इलाज एक जुआ था। ऐसा जुआ जिसमें उसकी श्रवण धमनियाँ फिर से अपनी पूर्व अवस्था में आ सकती थी, पर यह उतना ही दुरूह था, जितनी यह बीमारी। उसके पिता कहने को तो अधिकारी थे, एक स्वशासी संस्थान में, पर उनके खर्च भी कम न थे।उनकी दो बेटियाँ और गाँव में परेंट्स भी उनके ही सहारे थे। ऐसे में क्या बचता होगा। यह भली भाँति समझा जा सकता है। उन्होंने हिम्मत कर एक बार कलकत्ता के एक विख्यात हॉस्पिटल में उसका इलाज कराया भी, पर बमुश्किल पाँच प्रतिशत रिकवरी हुई। खर्चा हुआ था साढ़े छह लाख, जिससे उनकी जी पी एफ़ की सारी बचत भेंट चढ़ गई थी।

कई डॉक्टर्स ने उन्हें हताश भी किया जब वह कहते थे कि वास्तव में इसका कोई इलाज ही नहीं। कानों की ये धमनियाँ वापिस सुनने लायक हो जाएँ तो यह मेडिकल विज्ञान का चमत्कार ही हो सकता है। बस इलाज के नाम पर खर्च करते जाओ, वो भी बेतहाशा।

वह आकर्षक थी। सिर से पैर तक नैसर्गिक आकर्षण की प्रतिमूर्ति, वह कोई विशेष शृंगार नहीं करती थी। पर सुंदरता शृंगार के बिना भी अपना आभामंडल बिखेर देती है। सौंदर्य प्रसाधन तो उसमें सिर्फ अतिरिक्त योगदान करते हैं। बड़ी-बड़ी गोल आँखें, लंबे, घने काले बाल बिल्कुल स्ट्रेट, छरहरा बदन और चेहरे पर हमेशा बनी रहने वाली स्वाभाविक स्मित।

दिल्ली में जब उसे एक निजी अस्पताल में दिखाना था, तो अनन्या ने स्वयं ही ज़िद पकड़ ली थी, कि उसे कोई इलाज नहीं कराना है। क्यों कराए वो इलाज, मृग मरीचिका के पीछे जाने से किसी की प्यास बुझी है कभी? वास्तविकता को जितना जल्दी समझ लिया जाए, बेहतर होता है, इतना वह समझती थी। हाई स्कूल में थी उस समय वह। पिता ने बहुत ज़ोर दिया, पर वह पाषाण हो गई थी। आँखों से आँसूओं की बूँदें एक-एक कर टपकती रही, मगर उसका निर्णय अटल रहा।

साढ़े तीन साल ही तो हुए होंगे जब प्रसनजीत ने उससे रिश्ते की पहल की थी। उसकी माँ-पिता और बहन सभी तो आए थे। एक बार नहीं, कई बार। तब उसने खुद कोई जल्दी नहीं दिखाई थी, पर यह पहल उसके मानवता में विश्वास को गहरा ज़रूर कर गई थी। फिर भी उसने समय लिया, और प्रसनजीत को, उसके परिवार को भी यह समझने का समय दिया भी कि कहीं उन लोगों को उसके सुनने की शक्ति के न होने से कोई असहजता तो नहीं।

जब वह सब अनुकूल जान गई, तो उसके ख्वाबों में भी रंग भरने लगे। उसका मन भी कुलांचे भरने लगा। भरमार और तितलियों की आँख-मिचौलियों के लम्हों में वह अपने राजकुमार को ढूँढ़ने लगी। आख़िरकार उसके सीने में भी एक नन्हा दिल था, स्पंदन थीं और आँखों में एक स्वर्णिम संसार बसने के स्वप्न तैरते थे।

नई गृहस्थी बसी और नए लोगों से प्रेम मिला तो वह तर गई। अनन्या के संशय के घनेरे मेघ न जाने कहाँ मटमैले बादलों की तरह हवा में उड़ गए। उसकी धड़कनों में अगर शेष था तो सिर्फ जीत के लिए प्रेम। उसकी आँखों में भी जो स्नेह दिखता तो वह धन्य हो उठती। कौन करता उस जैसी ऊँचा सुनने वाली लड़की से बात, कैसे कटती उसकी ज़िन्दगी। वह इंसान नहीं, देवता है, अनन्या सोचती।

पर स्वप्न सच हों, यह ज़रूरी नहीं। समय बीतते-बीतते संबंधों में उदासीनता आने लगी, फिर झुँझलाहट और अंततः संशय के साथ ही आक्रोश भी। अब पति को लगता कि अनन्या उसकी ज़िम्मेदारी है, पत्नी नहीं। उसका एक इशारा ठीक से न समझ पाना प्रसनजीत के आक्रोश में बदलने लगता। उसकी मुट्ठियाँ तन जाती, आवाज़ें तो वह साफ़ सुन नहीं सकती थी, इसलिए उसके गुस्से की तीव्रता का पैमाना तो भावों को पढ़ कर ही हो पाता था पर इतना साफ़ दिखता था कि पति को इस बेमेल रिश्ते से अरुचि होने लगी थी। कोई कारण नहीं था, पर बहाने कम भी न थे। उसे आवाजें नहीं सुनती पर टेलीविज़न चैनल्स के कार्यक्रमों और हिन्दी फिल्मों में वह उनके पात्रों के सुख-दुःख और उस सबको महसूस करने की शक्ति अवश्य रखती थी जिसे कोई और भी रखता हो। लेकिन उसके मनपसंद कार्यक्रमों को लेकर भी घर में तूफ़ान आ खड़ा होता। रोमांटिक कार्यक्रमों को म्यूट कर देखने भर से उसके चरित्र का आकलन किया जाने लगा तो अनन्या का मन जितना हाहाकार कर उठता होगा, उसे सिर्फ वह खुद ही जान सकती है।

बात तब बढ़ गई जब ममेरे भाई को लेकर उसे बुरा-भला सुनना पड़ा। सुशांत और वह बचपन से एक ही माहौल में पले-बढ़े थे। सब त्यौहार साथ मनाते और खुशियों को साझा करते, पर उसके आने से भी प्रसनजीत के तेवर बदलने लगे। अपनी बेबसी पर पहली बार जी भर कर रोना आया उसे और घर जाकर अपने पिता के सीने से लिपटकर बोली थी,

'इस घुटन में नहीं जी पाऊँगी मैं। आप अपनी बेटी को प्यार करते हो तो उसे रहने दो अपने पास ही। मैं हर दिन इम्तहान देते-देते थक चुकी हूँ।'

फिर पिता ने जो उसकी ससुराल पक्ष के लोगों से जो सख्ती दिखाई तो प्रसनजीत सहित पूरा परिवार शर्मिंदा हुआ। मान-मनौव्वल के बाद वह फिर लौट गई थी। उन दिनों वैसे भी उसके शरीर में एक नन्हीं ज़िन्दगी की आहट आ चुकी थी, इसलिए तनाव में नहीं रहना चाहती थी। एक दुःस्वप्न को विस्मृत कर खूबसूरत ख्वाब देखना किसे बुरा लगता है।

मुख्य द्वार पर लगी घंटी बजने के अहसास मात्र से उसने समय देखा। रात के 11: 42 बजे थे। दरवाज़ा खोला तो प्रसनजीत था। नशे में धुत। इतना नशा था उसे कि वह खुद ही संभल नहीं पा रहा था। बेड रूम में आते ही धड़ाम से गिरा। धीमी आवाज़ में बोला,

''सॉरी... पर मैं क्या करूँ। अमिता... मेरे दिमाग से निकलती ही नहीं।''

''मतलब?''

उसने दिमाग लगाया। सोचा कि शायद उसके समझने में कोई गलती हुई हो। वैसे भी उसे सुन कहाँ पाता है। भ्रम हो सकता है कोई। पर ऐसा नहीं था यह इसलिए समझ आ गया कि उसने नशे में ही जेब से अपना मोबाइल निकाल कर अमिता की मुस्कुराती फ़ोटो दिखाई।

वह बहक चुका था। पूरी तरह से। अफसोसजनक यह था कि वह जो सुन रही थी और देख रही थी, सब सच था।

प्रसनजीत की आँखें मुँदी जा रही थी। वह देखते ही देखते नींद के आगोश में चला गया, बिना यह जाने कि इस सब तनाव के बावजूद भी अनन्या आधी रात तक उसकी इंतज़ार में जागती रही है।

अनन्या पलंग के दूसरे किनारे बैठी थी। उसे अपने विवाह के दरकते बंधन का अफ़सोस नहीं था। अफ़सोस था तो इस बात का कि उसने ख्वाब देखने की हिम्मत क्यों की। क्या वह नहीं जानती कि ईश्वर ने ही उसके लिए कुछ वर्जनाओं का निर्धारण किया हुआ है। उनको तोड़ कर स्वतंत्र होने की सोच का फल तो उसे भुगतना ही था।

उसकी बात किसी को समझ नहीं आती थी, या उन लोगों को इसे समझने में कोई रुचि ही नहीं थी। सो उसने अपनी डायरी का एक कोरा पन्ना फाड़ा और उस पर प्रसनजीत को यूँ लिखा,

''प्रेम कोई मजबूरी नहीं, आत्मा से बंधने की अपरिहार्यता का ही नाम है। अगर आत्मा पर प्रेम का रंग नहीं चढ़ सका तो वह प्रेम का निषेध होगा, प्रेम तो नहीं। हम स्त्रियाँ न जाने क्यों ऐसे अनजान रंग को अपनी आत्मा पर चढ़ाने के ख्वाब क्यों बुना करती हैं। ख़ास तौर से उनके लिए जिनके लिए यह अर्थहीन है। सिर्फ बाहरी आकर्षण, देह और स्पर्श बस यही है स्त्री उनके लिए। और कुछ भी नहीं। शेष जो है वह उसी पुरुष के पास है जो स्त्री का सम्मान करना भी नहीं जानता और इस क्रिया में अपनी पूरी जाति के ऊपर भी प्रश्न चिह्न लगा देता है।

अगर देह या वाह्य आकर्षण ही इतना आवश्यक है, तो उसके लिए तुम अन्य बहुत से रास्ते बना सकते हो। बहुतों को फुसला सकते हो, अपना ज्ञान बखार सकते हो, पर तुम किसी स्त्री के मन की गहराइयों तक पहुँच सकते हो, इसमें मुझे संदेह है। मुझे अपने विषय में पहले भी भ्रम न था, न अब है। हाँ, इस मध्य अवश्य कुछ अहसासों को पंख लगे थे, जो टूट चुके हैं और नए पंख उग आएँ, उनसे पहले ही मैं उन्हें नोच दूँगी। अब मैं सिर्फ इसलिए जिऊँगी कि कृष्ण को एक ऐसा इंसान बनाना चाहती हूँ, जो कम से कम इतनी तो समझ विकसित कर सके।''

उसने उठकर खुद को फ्रेश किया। मुँह धोकर ताज़गी महसूस की, और नींद में कुनमुनाते बेटे को चूम कर सामान पैक करने लगी। ज़रूरी सामान पैक कर वह निश्चिन्त हो गई थी। अब तनाव की लकीरें भी प्रसनजीत के प्रेम-प्रसंग की सहमति के दायरे से अवमुक्त होकर वाष्पीकृत हो चुकी थी।

कल भोर सवेरे उसे अपनी नई ज़िन्दगी, नए सफर पर निकलना जो था। उसे यदि ईश्वर ने ही इस रूप में बनाया था, तो उसी रूप को अपनाकर ही उसे अपना रास्ता बनाना ही होगा। अगर वह किसी से इस संबंध में बात भी करती तो लोगों का वही संशय सामने होता। वे पूछ बैठते कि आख़िर ऐसा क्या हुआ कि प्रसनजीत का परिवार स्वयं रिश्ता लेकर आया, कई बार, पर संबंध निभ भी नहीं पाए। खुद उसके पास भी जवाब नहीं है कि क्यों? क्यों उसने आशाएँ जगाई थी उसमें। पर अब वह सब अतीत होने जा रहा था। आज से, अभी से ही। उसके पास जीने का मकसद है-- उसका कृष्ण।

प्रसनजीत, उसके पेरेंट्स या कोई भी उससे पूछेगा तो क्या कहेगी वो? उसके पास उत्तर है,

''तुम नहीं समझोगे।''

***

लघु कथा

अधूरा लेख

ज्योत्सना सिंह

सुख तो सिद्धार्थ हो कर सारे पा ही लिए थे आपने। राजपाट का सुख एशो-आराम का सुख और साथ ही दैहिक सुख! तभी तो आपका अंश आया इस धरा पर। सुजाता की बनाई खीर खा जीवन दर्शन के हर प्रश्न का उत्तर तलाश लिया था आप ने तभी तो बुद्ध हुए, किंतु हे तथागत! फिर क्यूँ आज भी अनुत्तरित है यशोधरा का प्रश्न, क्यूँ शून्य में तलाशता रहा वह अबोध अपने जनक को? आप का तो जन्म से ही तय था वैराग्य फिर क्यूँ बने आप गृहस्थ?

उसने ऊपर से नीचे तक कई बार अपने लिखे को पढ़ा और हर बार उसे उसमें अपने जीवन का सच तैरता नज़र आया किंतु फिर भी उसे उसमें अधूरे पन का एहसास बेचैन किए देता था। जाने कितनी ही पंक्तियाँ लिख कर वह मिटा चुका था। उस अधूरे लेख को परेशान हो वह माँ की तस्वीर निहारने लगा कि पत्नी ने आ कर अपने गर्भ धारण करने की डॉक्टरी जाँच उसके सामने रख दी। वह उसे पढ़ कर ख़ुशी से उछल पड़ा और बोला- ''अरे वाह! तुम माँ बनने वाली हो?''

उसने उसे ताज़ा गुलाब देते हुए कहा- ''जी नहीं, हम माता-पिता बनने वाले हैं।''

अब उसे अपने अधूरे लेख की अंतिम पंक्तियाँ मिल गईं थी।''सिद्धार्थ होने के मुक़ाबले शायद बुद्ध होना आसान था।''

उसने पास रखी माँ की तस्वीर के पास ही ताज़ा गुलाब और पत्नी के गर्भवती होने के प्रमाण का काग़ज़ रख दिया। पूरा कमरा गुलाब की भीनी सुगंध से भर गया।

***

ज्योत्सना सिंह, 5/422, विक्रम खण्ड,
गोमती नगर, लखनऊ 226010

एंटीक फिनिश

मूल तेलुगु कहानी : अरुणा पप्पु
अनुवाद : आर.शांता सुंदरी

अरुणा पप्पु का जन्म उत्तर आँध्रप्रदेश में हुआ। गणित में एम. एससी. करने के बाद भी अपनी मातृभाषा तेलुगु से प्रेम की वजह से पत्रकारिता को अपना पेशा बनाया। बारह साल हैदराबाद के अग्रणी दैनिक पत्रिकाओं में काम करने के बाद अब एक कार्पोरेट कंपनी में कम्यूनिकेशन विभाग में अधिकारी के पद पर कार्यरत हैं। अब तक 5 पुस्तकें प्रकाशित। एक कहानी संग्रह पुरस्कृत।

आर.शांता सुंदरी, 506, वेस्टेंड अपार्टमेंट्स,
मस्जिद बांदा कोंदापुर, हैदराबाद 500084
मोबाइल : 9409033043
ईमेल: arusat8@gmail.com

क्यों?

डॉ.आदिनारयणा जानता है कि साथी डॉक्टरों के इस सवाल का जवाब देना होगा। सबसे पहले सवाल करता है डॉ.वीरारेड्डी,फिर डॉ.चटर्जी,डॉ.केवीएन,फिर कोई और ... यह सिलसिला यूँ ही चलता रहता है। सभी डॉक्टर हैं। इंसान की नस पहचानने वाले। पर क्या ये मन की नस पहचान सकते हैं?

पूछने वाले पूछते रहते हैं पर वह कोई जवाब नहीं देता। उसे नहीं लगता कि बताने पर भी वे समझ पाएँगे। अब कहना बंद करके कुछ करने का वक्त आ गया, उसने मन ही मन सोचा। अगली सुबह पौ फटते ही वह उठ गया। अटैची में सामन रख लिया। सुधा और बेटे के साथ कभी लिया गया फ़ोटो भी रखना चाहा। कभी वे अरकु घाटी में घूमने गए थे, तब का फ़ोटो था वह। पीछे हरी पहाड़ियाँ, वहीं मंडराते बादल, जैसे माँ- बाप से दूर न जाना चाहते हों! बेटा सत्रह साल का था और उसे लगा शायद मैं भी उस उम्र में ऐसा ही दिखता था। फिर उसे अपने पिता याद आए और उसने ठंडी साँस भरी। फ़ोटो को पोंछकर अटैची में रख लिया। कमरे से निकला और हॉल में आ गया। हॉल के बीचों- बीच पीतल की हांडी थी जिसमें पानी भरा था। पानी में फूल तैर रहे थे। दोनों तरफ हंसों की नाक में जलते दीप। पीछे की ओर नंदगोपाल की प्रतिमा। न जाने ये सब कितने साल पुरानी चीज़ें हैं ! सभी एंटीक हैं। कर्णाटक के समुद्री तट के किसी गाँव में इन्हें कोई बेच रहा था तो सुधा खरीद लाई। दीवारों पर तंजावूर के पेंटिंग, लक्ष्मी, सरस्वती के चित्र। श्रीरंगम में किसी ने बाहर फेंक दिया तो लाकर उनपर फ्रेम चढ़वाया था सुधा ने। शिव,पार्वती और उनकी गोद में बैठे नन्हें गणेश के कलमकारी चित्र।

उसने वहीं पास पड़ी गाड़ी की चाभियाँ उठाईं। एक कदम आगे बढ़कर फिर पीछे मुड़ा। चाभियाँ वहीं नक़्क़ाशीदार मेज़ पर रखकर और दो कदम आगे बढ़ा। ऊपर जाने वाली सीढ़ियों पर करीने से रखे पीतल के बरतन और उनमें उगते इन डोर प्लांट्स। सुधा की निगरानी में सबकुछ करीने से रहना है। वह ऐसे ही रखती है भी। वह अस्तव्यस्तता को माफ नहीं करती। उसके सारे काम समयानुसार होते हैं। सुबह चार किलोमीटर टहलना। आठ बजे दो इड्ली, चार गाजर के टुकड़े। ग्यारह बजे फलों का रस। डेढ़ बजे दोपहर के खाने में पत्तों वाली दाल, एक मछली या दो चिकेन के टुकड़े और दो कटोरी चावल। शाम चार बजे ग्रीन टी, दो रागी के बिस्कुट, रात आठ बजे दो रोटियाँ और सब्जी। सब कुछ वक्त के मुताबिक होता है। वह भी उसका साथ देता रहा। इतने साल किसी तरह निभा लिया, पर अब लगा बहुत हो गया, अब और नहीं।

घर का मुख्य दरवाज़ा खोलकर फाटक को धीरे से बिना आहट किए खोला और अटैची के साथ बाहर आ गया। बाहर की ठंडी हवा और आसमान में तैरते बादल उसे सुकून देने लगे। फिर बस स्टॉप की ओर निकल पड़ा। सालों बाद बस का सफर कर रहा था। अपने मन में हलचल मचाते विचारों के आगे बस का सफर उतना असुविधाजनक नहीं लगा। अपने गाँव को जाने वाली सड़क, बस में बैठना, सब कुछ अच्छा ही लगा।

बस से उतरकर घर पहुँचने तक कोई जान-पहचान वाला नहीं दिखाई दिया। ज़रूर कुछ लोग तो अभी वहीं होंगे, पर वहाँ बिजली नहीं थी और शाम ढल चुकी थी। अँधेरे में किसी को पहचानना भी आसान नहीं था। घर पहुँचकर देखा तो माँ दरवाज़े के दोनों ओर बने आलों में दिये जलाकर रख रही थी। अगर सुधा यह दृश्य देखती तो कहती, 'यह कैसा सनकी काम है?' और आगे भी कुछ कहती जाती। वह जवाब नहीं देता। बचपन में दादा जी के मुँह से सुनी बात जैसे खून में बस गई थी कि बहस मत करो, इससे बात बढ़ती है।

चबूतरे पर कोई बैठा पिता से बात कर रहा था। वह भी जाकर बगल में बैठ गया।

''अरे बेटा, न चिट्ठी न खबर ? घर पर सब ठीक तो है ना?'' पिता ने हैरान होते हुए पूछा।

''हाँ सब ठीक है बाबूजी।''

''अच्छा, तेरी गाड़ी कहाँ है?''

''वहीं छोड़ दी। बस में आया।''

''बस में?''उस सवाल में जो हैरानी थी, वह पिता के चेहरे पर नहीं दिखी। उससे आगे करने को कोई बात ही नहीं सूझी। फिर भी वहीं बैठा रहा। चबूतरे पर बैठे आदमी ने पिता से पूछा, ''क्या यह आपका बेटा है?''

''हाँ,'' कहा पिता ने।

उसने और कुछ पूछना चाहा शायद, पर पिता को 'हाँ या ना' में जवाब देते सुनकर चुप रह गया। फिर पहले जिस बारे में बात कर रहा था, उसी को दोहराने लगा।

आदिनारायणा अंदर गया और खाट ले आया, बाहर आँगन में उसे बिछाकर लेट गया। रसोई में माँ शायद दाल भून रही थी, उसकी महक बाहर तक आने लगी। कुछ देर बाद रसम उबालने की खुशबू आई।

लेटकर उसने ऊपर की ओर देखा तो आसमान में तारे चमकने लगे थे। दादाजी कहते थे कि भले लोग मरकर तारे बन जाते हैं। कहते थे कि उनके बीच दादी को ढूँढ़ो। कभी कोई तारा छूटता तो कहते फिर से कोई धरती पर जन्म लेने आया है।

यह बात सुधा को बताई तो बोली, ''सब फ़िज़ूल की बातें हैं। बुज़ुर्ग ऐसी ही पुरानी कहानियाँ गढ़ते रहते हैं। बचपन में उनपर यकीन करना ठीक था। नामी सर्जन होकर ऐसी बातों पर यकीन करोगे तो लोग हँसेगे।''

तो क्या वह जो चीज़ें इकट्ठी करती है, क्या वे फ़िज़ूल की नहीं? वैसे कौन सी चीज़ ऐसी है जो फ़िज़ूल की नहीं होती? वक्त बीतने पर हर चीज़ को फ़िज़ूल हो जाना चाहिए, ऐसा नहीं होना तो अस्वाभाविक होगा। उसे घर याद आया। सुधा घर को अजायबघर जैसा बनाती है। सभी चीज़ें सुंदर, पर एक भी इस्तेमाल के लायक नहीं।

एक हाथ में लालटेन और दूसरे में भुनी दाल लेकर माँ आँगन में आई। खाट पर लेटे बेटे को देखा और पूछा, ''क्यों बेटे, कब आए? इस वक्त ऐसे क्यों लेटे हो?क्या हुआ? ठीक तो हो? बहू कैसी है?'' एक साथ बीसियों सवाल। अचानक आए बेटे को देखने की खुशी और चिंता भी कि ऐसे बिना बताए क्यों आ गया? माँ का दिल है ना !

सभी सवालों का एक ही जवाब,''सब ठीक है।''

''कुछ पियोगे, चाय, कॉफ़ी ?''

''ना, खाना खा लेंगे, चावल बनाया ना?''

''रात को चावल? तू तो रात को रोटी खाता है ना?''

''वह तो वहाँ की बात है। तुम मुझे दाल की चटनी और रसम खिलाओ माँ।''

''चलो वही खा लेना।''

उसने सिल पर चटनी कूटती माँ को देखा। कितनी उम्र होगी माँ की? पचहत्तर के करीब शायद। उसे दादी याद आ गई। वह भी वहीं बैठकर चटनी बनाती थी। पर याद धुँधली थी। पीतल के बरतन में उबलता चावल, अंगीठी पर मोटे से बरतन में बनती दाल, लोहे की कढ़ाई में तलने वाली भिंडी या बैंगन की सब्जी की खुशबू। वह पीढ़ा जिस पर दादा जी बैठकर खाना खाते थे। हर शाम मुलायम कपड़े से पोंछकर जलाई जाने वाली लालटेन। सबको देखते हुए वह बचपन की यादों में खो गया।

उसे नहाने की इच्छा हुई। घर के पीछे जाकर खूँटी पर रखा तौलिया ले लिया। पिता बाहर से आते तो कमीज़ और धोती उसी खूँटी पर लटकाते हैं। जब वह छोटा था तो पिता की कमीज़ और चप्पल पहनकर बड़ा बनाने की कोशिश करता था। माँ बहुत हँसती थी। उसे अब वह हँसी याद आई। पिता से पहले उस खूँटी को किसने इस्तेमाल किया होगा? किन लोगों ने अपनी यादें उसपर लटकाई होंगी?

घर के पीछे जाकर कुँए से पानी खींचकर नहाने लगा तो माँ ने कहा,''अरे, बगल में ही नल है ना?'' पर उसे कुँए के पानी से ही नहाना था। बाल्टी से निकालकर कुएँ का पानी सिर पर उंडेलने लगा तो हक्का बक्का हो गया।

सुधा कहती,''उस देहात में तो मेरा मन बिलकुल नहीं लगता, साँस घुटने लगती है।''

पर वह जो चीज़ें खरीदकर उनसे घर भर देती है, उनके बीच आदिनारायणा को भी घुटन महसूस होती है। उनके बीच ऐसा लगता है कि वह भी एक चीज़ बनकर रह गया है। सुधा ने जो पुरानी चीज़ें इकट्ठी की, उनके दाम ही दिखाई देते हैं, उनसे कोई भी याद नहीं जुड़ती। दाम और कीमत ... बस ! और फिर वह खुद को चीज़ महसूस करने लगता है जैसे उसे भी सुधा ने दाम देकर खरीदा हो। पर क्या कीमत चुकाई थी उसने?

अपनी जवानी और खूबसूरती देकर तो नहीं। मृदुला की तुलना में तो वह कुछ ख़ास नहीं। फिर पैसा, ओहदा?आदिनारायणा तो गाँव का गरीब लड़का था। डॉक्टर आदिनारायणा बनने के लिए उसके पास जो ज़रूरी आर्थिक साधन था और अस्पताल खोलकर आस-पास के छह जिलों में 'बेस्ट हार्ट सर्जन' का नाम पाने के लिए लगाई गई पूँजी थी, सब उसकी अकलमंदी ही थी। उसी के बूते पर उसने नाम, पहचान, पैसा, सब कुछ कमाया।

हर चीज़ की कीमत लगाई जा सकती है, पर क्या हर इंसान की भी कीमत होती है? फिर वह कैसे बिक गया?

वह छोटी उम्र से मृदुला को चाहता था। वह अचानक, बेवक़्त दिल की बीमारी से चल बसी, तो वह दु:ख से पागल हो गया था। तब से वह किताबी कीड़ा बन गया।पढ़ाई में, काम में पूरी तरह डूब गया। मशीन की तरह काम करने लगा। दूसरों के प्राण बचाने की लत सी लग गई। किसी को मृदुला की तरह जवानी में मरने नहीं दूँगा।

... बस यही एक सनक सवार थी।

नहाकर वह रसोई में आया। तब तक बिजली भी आ गई। चारों ओर नज़र घुमाई। कई पुरानी चीज़ें दिखाई दीं। इसी घर में चार पीढ़ियों ने ज़िन्दगी गुज़ारी। अपनी ज़िन्दगी में उन्होंने भी कुछ चाहा होगा। कुछ इच्छाएँ पूरी हुई होंगी और कुछ नहीं हुई होंगी। जितनी पुरानी इंसान की ज़िन्दगी है, उतनी ही पुरानी उसकी इच्छाएँ भी हैं। एक पूरी होती तो दूसरी सर उठाती। अगर कोई भी इच्छा पूरी न हो तो क्या तब वे सब पुरानी चीज़ों की फेहरिस्त में शामिल हो जाती हैं?

''पुरानी चीज़ें इकट्ठा करने में तुम्हें कैसी खुशी मिलती है?'' कभी उसने सुधा से पूछा।

''तुम्हारे घर में जो कचरा है ना, ऐसी चीज़ें नहीं हैं ये। ये एंटीक हैं। ये अनोखी चीज़ें हैं। एक-एक की कीमत लाखों, करोड़ों में होती है। और इन्हें इकट्ठा करना नहीं कहते, कलेक्शन करना कहते हैं। इन्हें चुनना तो मुश्किल है ही, इनका संग्रह करना तो बहुत ही मुश्किल है। यह सब तुम गँवार लोग क्या जानो?'' सुधा ने मुँह बनाते हुए कहा।

पर इतना मुश्किल काम, इतना प्रयास क्यों करना है ? क्या पैसों के लिए? या लोगों में पहचान बनाने के लिए? सुधा अमीर घर से है। पढ़ने लिखने में तेज़ नहीं थी। नाक नक्श ठीक हैं। किसी बात में कोई ख़ास हुनर नहीं है। बचपन में प्रोफ़ेसर रंगाराव की बेटी और शादी के बाद डॉ .आदिनारायणा की बीवी। फिर वह अपने लिए नाम कैसे कमाती? किसी कला में एक हद तक सफलता पाना हो तो मेहनत करनी पड़ेगी। पर उन्हें वे लोग करते हैं जो किसी काम के नहीं होते। कुछ ऐसे भी काम हैं जो समाज में इंसान को ऊँचा पद दिलाते हैं। इन बेशकीमती पुरानी चीज़ों के ज़रिए वह ओहदा पाना सुधा को आसान लगा। उसके पास पैसा था। बस वह इसी काम में लग गई। उन्हें खरीदने वह कभी राजस्थान जाती, कभी केरल तो कभी कश्मीर। जगह-जगह से उन्हें खरीद लाती। उन एंटीक चीज़ों में वह, सुधा का पति खुद भी शामिल है।

छह महीने पहले किसी रिश्तेदार की बेटी की शादी में विशाखापट्नम गए थे। वैसे अपने अस्पताल के काम को छोड़कर वह कम ही बाहर जाता है। हर रोज़ कोई न कोई एमरजेंसी केस आ जाता है। पर विशाखापट्नम का नाम सुनते ही जाने का मन किया। अगली सुबह को शादी ख़त्म हो गई। रात के फ़्लाइट से वापस जाना था। इसलिए दोपहर को समुद्र तट की ओर चला। उस कॉलेज को भी देखना था जहाँ उसने पढ़ाई की थी। बाकी सब बदल गए, बस समंदर वही था। अब भी तब जैसा, उठती, गिरती लहरें वैसी ही थीं। वहाँ की भीड़ को देखते हुए अनायास उसके कदम मृदुला के घर की ओर मुड़ गए। गलियाँ वैसी ही थीं, खपरैल की जगह कांक्रीट से बनी छतें आ गईं, और वही छोटे, सटे हुए - से मकान। मृदुला का घर पहचानने में वक्त लगा।

मन में पुरानी बातें, यादें तेज़ी से शोर मचाने लगीं।

'फिर कभी इस तरफ आया तो टाँगें तोड़कर रख दूँगा, समझे? भले घर का लड़का समझकर अब तक चुप रहा...हमारी बेटी से तुझे क्या लेना देना? इधर मत आना। ..जा...' मृदुला के पिता के शब्द याद आए।

'गरीब हो आदि। ..पढ़ाई पर ध्यान दो। मेडिसिन में सीट मिलना ही मुश्किल है। मन लगाकर पढ़ो। अच्छा डॉक्टर बनो और लोगों की मदद करो। मेरे जैसा कोई और जानलेवा बीमारी का शिकार न हो...' मृदुला ने बहुत दुखी होते हुए कहा था।

यह सब याद आने पर आदिनारायणा के दिल की धड़कन मानों एक पल के लिए रुक गई। गला सूखने लगा।

अब शायद वहाँ मृदुला का परिवार नहीं था। अंदर से एक छोटा लड़का आया और पूछा,''किससे मिलना है अंकल ?''

''ज़रा पानी पिला दोगे ?'' उसने खुद को सँभालते हुए धीरे से कहा।

जैसे ही वह लड़का अंदर गया, आदिनारायणा वहाँ से जल्दी निकल गया। यादें अब भी उसके साथ थीं। मन के अंदर से ऊपर उठ रही थीं।

घर पहुँचा तो सुधा के सवाल शुरू हो गए-

''कब से ढूँढ़ रही हूँ तुम्हें ? कहाँ चले गए ? फ़ोन साथ ले जाने के लिए कितनी बार बोला था मैंने? सुनते तब ना? क्या हुआ, मुँह क्यों उतरा हुआ है?'' कितने सारे सवाल पूछती है सुधा ! 'पुरानी यादों को ढूँढ़ने चला,' यह कहने पर शायद वह हँसेगी।

''कुछ नहीं, मैं ठीक हूँ।''

सुधा के पिता रंगाराव डर्मेटोलॉजी के प्रोफ़ेसर थे। उन्हें लगा आदिनारायणा पढ़ाई में बहुत होशियार है। गरीब है। प्रोफ़ेसर साहब इंसानों को झट से पहचान लेते थे। मन ही मन हिसाब लगाया। 'मदद करने पर यह लड़का कुछ ज़रूर बनेगा। नाम करेगा। लड़के का स्वभाव अच्छा है। समझदार है। आर्थिक रूप से मदद करूँगा तो वह मेरा आभारी रहेगा। बेटी का रिश्ता उससे करूँगा उसकी ज़िन्दगी ठिकाने लग जाएगी। '

हर साल आदिनारायणा सोने का पदक पा लेता तो रंगाराव स्टाफ रूम में सबको चाय बिस्कुट खिलाते। मेडिसिन के तीसरे साल से ही सब आदिनारायणा को रंगाराव का दामाद कहने लगे।

मृदुला के चले जाने के बाद उसे समंदर की ओर जाने की ज़रूरत ही महसूस नहीं हुई। कॉलेज, हॉस्टल, लाइब्रेरी, पढ़ाई और अस्पताल, बस। डॉक्टर की पढ़ाई पूरी होने तक यही उसकी ज़िन्दगी थी ...

विशाखापट्नम से वापिस आने के बाद न जाने क्यों सुधा को आदिनारायणा का कमरा ठीक करने की इच्छा हुई। अलमारी से चीज़ें निकालने लगी तो कोने में रखे पुराने फ़ाइल पर हाथ गया। उसे बाहर निकालकर देखने लगी। तरह-तरह के सर्टिफिकेट, प्रशंसा पत्र, और उन सबके बीच में एक ब्लैक एंड व्हाइट फ़ोटो ... एक लड़की का। वह सोच में पड़ गई।

''यह फ़ोटो किसका हो सकता है? सास का नहीं, और तुम्हारे कोई बहन तो है नहीं। इतना पुराना फ़ोटो किसका है?'' सुधा ने ऊँची आवाज़ में पूछा।

वह हॉल में बैठा था, समझ में नहीं आया सुधा किस फ़ोटो के बारे में पूछ रही है। फिर अचानक उठकर तेज़ी से कमरे में गया। सुधा के हाथ में मृदुला का फ़ोटो था।

''इधर देना, ज़रा देखूँ..'' वह सकपका गया।

''इसमें देखने को क्या है ? होगी कोई दिल की मरीज़। पता नहीं तुम्हारी फ़ाइल में कैसे आ गई। पर तुम्हें तो पुरानी चीज़ें पसंद

नहीं है ना? जब तुम्हें याद ही नहीं तो फिर इसका फ़ोटो फ़ाइल में किसलिए?'' कहते कहते सुधा ने फ़ोटो फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दिए।

''सुधा ... !''

''इस बेकार के फ़ोटो का क्या करोगे?'' सुधा ने कहा और टुकड़े उठाकर कूड़ेदान में फेंक दिए।

आदिनारायणा समझ गया सुधा यह सब क्यों कर रही है। यह तो जान बूझकर मुझे दुखी करना चाहती है। कितने प्यार से उस फ़ोटो को बचाकर रखा था उसने। बस मृदुला की यादों की खुशबू की एकमात्र निशानी थी वह फ़ोटो। उसे फाड़कर सुधा ने जैसे उसके पेट में छुरा भोंक दिया, ऐसे तड़पने लगा वह। घर के हर कोने को पुरानी चीज़ों से भर देनेवाली सुधा को सिर्फ एक छोटा सा पुराना फ़ोटो फ़ालतू लगा... भारी लगा ! उसकी एक ही मीठी याद थी, उसे भी सुधा ने मिटा दिया।

उसने नहीं सोचा था कि बहुत पहले इस दुनिया को छोड़कर जानेवाली मृदुला की फिर से इस तरह मौत होगी। उसी की यादों के सहारे वह अब तक जीता रहा। उसकी हँसी को याद करके अपना काम करता, बीमारों को देखता, उसकी आँखों को याद करते हुए सुधा के बचकाने बर्ताव को, घमंड को सह लेता। अब वह चेहरा... उस चेहरे की एकमात्र निशानी... वह फ़ोटो फटकर टुकड़े-टुकड़े हो गया।

सुधा से क्या कहे यह समझ में नहीं आया। इतने साल उसकी हर बात को सहता रहा, उसके हर काम को चुपचाप स्वीकार करता रहा। अब एक ही झटके में वह सब बिखर गया। अब और नहीं सहा जाता। अब सुधा के साथ रहना, उसका साथ निभाना नामुमकिन है। किसी से कुछ नहीं कहूँगा। कहने से भी कोई मेरे दु:ख को नहीं समझेगा, फिर क्यों कहूँ?' ऐसा सोचकर उसने पक्का फैसला कर लिया।

माँ और पिता के साथ बैठकर उसने खाना खाया। हाथ धोकर बाहर निकला तो ठंडी हवा चल रही थी। उसके दहकते दिल को आराम महसूस हुआ। फिर से आँगन में पड़ी खाट पर लेट गया। बहुत दिनों बाद वह गहरी नींद सो सका।

***

लघु कथा

भीड़

पुखराज सोलंकी

'हे भगवान् ! इस खटारा स्कूटर को इतनी भीड़ में यहीं बन्द होना था।' स्कूटर पर पीछे सवार पत्नी बोली तो सामने इशारा करते हुए पति ने जबाब दिया- 'बन्द हुआ नहीं, बन्द किया हैं मैंने, वो सामने किसी का झगड़ा चल रहा हैं न।'

'मुझे नहीं देखना झगड़ा-वगड़ा तुम बस घर चलो जल्दी से, यहाँ इस चिल्ल-पों में मेरा दम घुट रहा है।' खिसियाते हुए पत्नी बोली तो प्रत्युतर में पति बोला- 'पाँच मिनट रुको तो सही, पता तो करने दो किसका झगड़ा चल रहा हैं और क्यों चल रहा हैं।'

आदत से मजबूर वे महाशय अपने स्तर से जानकारी जुटाने की जुगत में थे कि तभी झगड़ रहे लोगों के हाथों फेंका गया एक पत्थर का टुकड़ा धड़ाम से महिला के सर पे आ गिरा, महिला दर्द से कराह उठीं, गनीमत रही खुन नहीं निकला। अपनी पत्नी को इस हालत में देख पति ने घबराहट में स्कूटर स्टार्ट कर उसे हॉस्पिटल ले जाना चाहा। तभी दर्द से कराहती पत्नी ने तंज कसते हुए कहा- 'अजी रुको तो ! पहले पता तो करो आख़िर मसला क्या हैं, यहाँ झगड़ा क्यों चल रहा हैं।' पति ने आव देखा न ताव अपनी पत्नी की बात को अनसुना किया और भीड़ को चिरते हुए यह सोचकर वहाँ से अपना स्कूटर दौड़ने में ही अपनी भलाई समझी, कि कहीं लेने का देने न पड़ जाएँ।

***

जनगणना

पुखराज सोलंकी

जनगणना करने वाले अधिकारी एक बस्ती में पहुँचते ही अपनी नाक भौं सिकोड़ने लगे, तभी उनमें से एक अपने सहकर्मी से बोला- 'सर, यहाँ तो अभी से ही साँस लेना दुर्लभ हो रहा है, इस बदबूदार बस्ती के अन्दर जाकर आगे का काम कैसे कर पाएँगे ?' हथेली की जीवन रेखा पर तम्बाकू रगड़ रहे दूसरे अधिकारी ने एक चुटकी होंठ के नीचे दबाई और अपने हिसाब से हाथों में थाम रखे कागज़ों पर कुछ देर कलम घसीटी और बोला- 'चलो हो गई यहाँ की जनगणना, अगला एरिया कौन सा हैं?' कुटिल मुस्कान के साथ दोनों अधिकारी वहाँ से चलते बनें।

***

संपर्क: पुखराज सोलंकी, हनुमान जी मंदिर के पीछे, किसमीदेसर, पोस्ट भीनासर, बीकानेर, (राजस्थान) -334403
मोबाइल: 9251431947
ईमेल: pukhrajsolanki.1947@gmail.com

यह दूध तुम्हारा

मूल पंजाबी कहानी- कुलवंत सिंह विर्क
अनुवाद- डॉ. अमरजीत कौंके

कुलवंत सिंह विर्क का जन्म 1921 में पंजाब के फूलरवन गाँव में हुआ। उन्होंने अंग्रेज़ी से एम.ए की और पंजाब में अनेक प्रशासनिक पदों पर काम किया। उनके पंजाबी में वेला, तूड़ी दी पंड, एक्स के हम बारिक, दुध दा छप्पड़, गोलां, नवें लोक, द्वादशी, अस्बाजी, कहानी संग्रह प्रकाशित। पंजाबी में बेहद मनोविज्ञानक विषयों पर कहानियाँ लिखने वाले कहानीकार। उनकी कहानियों का रूसी और जापानी सहित कई अन्य भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित। नवें लोक कहानी संग्रह के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। निधन 24 दिसम्बर 1987।

जिन्होंने उसे देखा हुआ था उन का ख़याल था कि कमला बीस पचीस वर्ष से ज़्यादा नहीं थी। असल में वह तीस चालीस के करीब थी। उम्र का यह भुलेखा उसके गुँथे हुए जिस्म की वजह से लगता था। वह न तो मोटी थी और न नाटी। उसके गोरे रंग पर सफ़ेद कपड़े बहुत जँचते थे और इसी रंग के कपड़े ही वह सदा पहनती। पूरी जवान तो भले ही वह न हो लेकिन फिर भी सामने से आता शर्मीले से भी शर्मिला व्यक्ति भी उसे देखने से नहीं रह सकता था।

दफ़्तरों में काम करने वाले लोगों के पास रौब डालने के लिए बहुत कम बातें होती हैं। उन के साथ कुछ ऐसा घटता ही नहीं। पन्नों पर नियमों के मुताबिक कुछ लिख देना भला क्या बात हुई! लेकिन कमला के पति मनमोहन अपनी बीवी की सुंदरता का रौब डाल सकते थे। जब कभी किसी पार्टी पर, किसी तबादला हुए अफ़सर को गाड़ी पर बैठाने के वक्त या फिर किसी के शोक अवसर पर जब औरत मर्द इकठे होते तो उसकी बीवी सब से सुन्दर होती और मनमोहन लाल जैसे ख़ुशी में फूल कर कुप्पा हो जाता।

अपनी बीवी पर उसका यह गर्व था भी सच्चा। सुन्दर और नेक स्वभाव की होने के इलावा वह चरित्र की भी अच्छी थी। ख़बरें रखने वाले और लोगों की बीविओं की बातें करते लेकिन कमला की किसी ने कोई बात कभी नहीं की थी। होती तो करते।

बाबू मनमोहन लाल कभी दौरे पर जाते, बाहर के दफ़्तरों का हिसाब किताब देखने के लिए तो कमला पीछे बहुत उदास हो जाती। अपने पति के बिना बीवी का क्या जीना। घर इस तरह लगता जैसे हाथी के बिना सर्कस या दुल्हे के बिना बारात। मनमोहन लाल को गए आज चार पाँच दिन हो गए थे। तीन दिन अभी और उनके आने में बाकी थे। पहाड़ जैसे रूखे से दिन।घर, पड़ोस, खाना-पीना तो सब वैसा ही होता लेकिन मनमोहन लाल के वहाँ न होने से लगता जैसे दूध में से करीम निकाल ली गई हो। और फिर एक बहुत अजीब बात हुई और इन रूखे से दिनों में एक दिन रोचक बन गया।

एक बूढ़ा दोधी सुबह शाम उनके घर में दूध डालने आता था। वह अपनी बाल्टी ला कर बरामदे में रखता जहाँ रसोई का दरवाज़ा था। बाल्टी के खड़े कुंडे को जब वह छोड़ता तो कुंडा टन की आवाज़ करता बाल्टी के किनारों पर गिरता। यह उसके आने का अलार्म होता। ''दूध लो जी'' वह आवाज़ देता। नौकरानी बर्तन ले कर रसोई से निकलती और वह माप कर दूध बर्तन में डाल देता। फिर लौट रहे उस बूढ़े की चप्पल की खपर खपर होती और यह सिलसिला खत्म हो जाता।

आज सुबह इस खेल में एक नया पात्र आ घुसा। ''दूध लो जी ''की आवाज़ बहुत शोख और तीखी सी आई। बूढ़े ने अपना कोई लड़का भेजा होगा।कमला ने चारपाई पर लेटे-लेटे सोचा। सोचने के लिए उस के पास बहुत कुछ नहीं था, और यह बात भी आख़िर क्या थी! बूढ़ा दूध न देकर गया तो लड़का दे गया इस में क्या फर्क था। इस समय वह बाहर नहीं निकली होती थी। अगर जागती भी रहती तो भी चारपाई पर ही लेटी होती। संध्या को जब वह लड़का दूध देने आया तो नौकरानी घर पर नहीं थी।''दूध लो जी'' लड़के ने आवाज़

डॉ. अमरजीत कौंके, 718, रणजीत नगर ए, भादसों रोड, पटियाला147001, पंजाब
मोबाइल: 098142 31698
ईमेल: pratimaan@yahoo.co.in

दी। कमला बाहर आई। लड़का काफी सुन्दर था। उसने बाबुओं की तरह वाल कतरे हुए थे और कँघी से चीर निकाला हुआ था। आँखें भी उसकी वैसे ही रास्ता देखने के लिए छेद मात्र नहीं थीं बल्कि वह सचमुच इधर-उधर देखती थीं....। ''आज कल के लड़कों का अपने बुज़ुर्गों से कितना फ़र्क है।'' कमला ने सोचा और बर्तन में दूध डलवा लिया। लड़का चला गया और कमला को भूल भी गया।

अगली सुबह वह लड़का फिर आया। अब नौकरानी घर थी। लेटी-लेटी कमला को लगा जैसे वह और नौकरानी आपस में बातें कर रहे हों। ''क्या बातें कर रहे हैं ?'' कमला का पता लगाने का मन हुआ। ''घर में हर बात पर गौर रखना चाहिए।'' उठ कर वह अपने कमरे के दरवाज़े के पास खड़ी हो गई जो रसोई के पास ही था...

''ले आठ पाव हो गए... .दो किलो पूरा...'' लड़के ने अंतिम पाव उल्टाते हुए कहा।

''और डाल दे'' नौकरानी ने लाड़ से कहा। वे काफी घुले मिले लगते थे।

''ले यह दूध तेरा'' लड़के के दो पाव दूध और डालने की आवाज़ आई। और फिर धीरे से उसने नौकरानी से कुछ कहा। आगे से नौकरानी ने बात को कुछ लमकाते हुए कहा..''न यह काम नहीं करते कपड़े गंदे हो जाते हैं..।'' इस डर से कि उनकी घुसुर-मुसुर से साथ में लेटी मालकिन को कोई शक्क न हो जाए नौकरानी ने ऊँची आवाज़ में कहा..''ज़रा सुबह लाया करो दूध..बच्चों को पिलाना होता है..'' आवाज़ से लगता था कि यह ताड़ना करते हुए वह मुस्करा भी रही है...

कमला अपनी चारपाई पर आ कर लेट गई..''या तो इस नौकरानी को हटाना पड़ेगा या दूध वाले को...घर में ऐसा कैसे हो सकता है ? कल को नौकरानी सारा घर उठा कर इस लड़के को दे देगी...'' उस ने सोचा। और फिर वह अपने कमरे में चक्र काटती इस के बारे में और भी सोचने लगी...

''यह लोग कितना मज़ा लेते हैं... उसने चारपाई पर बैठते हुए निर्णय लिया। लड़का सुन्दर था। उस दिन उस ने देखा था जिस दिन नौकरानी बाहर गई हुई थी। और यह सुन्दर कुँवारा लड़का अब उसकी नौकरानी कि उँगली के इर्द गिर्द लिपटा पड़ा था..वह खुद क्या इस नौकरानी से कम थी..नौकरानी उम्र में ज़रा छोटी थी पर वह खुद तो उस नौकरानी से कहीं ज़्यादा सुन्दर थी और घर की मालिक थी। चाहे तो वह अपने कमरों में उस लड़के को घुमा सकती है। कुर्सियों सोफे पर उसे अपने साथ बिठा सकती है.... अपने शीशे वाले पलंघ पर उसे सुला भी सकती है...उफ़ कितना सुन्दर भोला-भाला लड़का था...और वह करवट ले कर पलँग पर लेट गई। कितनी ग़लती हुई थी उस से...कितना चूक गई वह कल...आज उनका अंतिम दिन था..संध्या को क्या पता किस वक्त लौट आएँ.... कल ही मौका था...मैं भीतर से ही आवाज़ दे देती, ''यहीं ले आ''।

वह दूध रख कर बैठ जाता और मैं पलँग पर टाँगे लमका कर बैठ जाती.... पाँव थोड़े -थोड़े हिलाती रहती..... और कभी-कभी उसे छेड़ देती..... उँगली पर दूध लगा कर देखती और कहती ''यह तो पतला है'' और फिर उँगली उसके माथे पर लगा देती और फिर उस के गाल पर और फिर उस के होंठों पर..... फिर उसके दोनों गालों को अपने हाथों से झिंझोड़ देती..... इतना कौन सा कोई मुर्ख होता है..... समझ ही जाता..... फिर मैं उसे अपने साथ पलँग पर सुला लेती..... नहीं-नहीं पहले तो मैं उसे अपने सामने आराम कुर्सी पर बिठा कर खुद पलँग पर लेट कर उस से बातें करती....कमला को अपनी सोच की इस उड़ान पर बहुत स्वाद आ रहा था। उस का दिल धक्-धक् बज रहा था जैसे वह लड़का सचमुच उसके साथ लेटा हो...उसे इस बात पर हैरानी हुई....। ''नहीं मुझे ऐसे ही लगता है...सिर्फ ख़यालों से ही इस ने क्या धड़कना है..'' परखने के लिए उस ने हाथ लगा कर देखा..दिल सचमुच बहुत ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था जितना सारी उम्र पहले कभी नहीं धड़का था। अपने समूचे वजूद में इस ख़याल को तैरता देख कर उसे और भी आनंद आने लगा। और वह इसी तरफ बढ़ती चली गई।

''अगर कोई आ जाता तो?'' तो क्या था। कमरे के कितने द्वार हैं। अगर कोई बाहर से द्वार खटखटाता तो मैं दूसरे द्वार से उसे बाहर भेज देती..... अगर द्वार खटखटाने वाली मेरी कोई सहेली होती तो मैं उसे अपने पलँग के नीचे छिपा कर दरवाज़ा खोल देती और फिर हँसे जाती..... वह पूछती- ''हँसती क्यों है?'' मैं कहती ''बूझो'' उसे कोई पता न चलता और मैं फिर हँस पड़ती...लड़का पलँग के नीचे पड़ा सब सुनता रहता। अगर कोई और आता तो मैं उसे दूसरे द्वार से निकाल आँखें मसलती। उबासी लेती इस तरह बाहर आती जैसे अभी सो कर उठी हूँ। और उस का दिल और भी ज़ोर से धक् धक् करने लगा जैसे सचमुच उस पर कोई खतरा आ गया हो....

वह एक अजीब से अहसास की ग्रिफ्त में आई हुई थी। हैरान थी कि वह करे तो क्या करे। इस ख़याल से मुक्ति कैसे ले! उसने कुछ पढ़ने का यत्न किया लेकिन लिखी हुई बातें उस के मन में घुसती नहीं थीं....

उसने रेडियो लगाया। इस में गाने उसके उस स्वाद से कितने नीचे थे जिस से उसका दिल धक् धक् कर रहा था, जो गीत एक दिन पहले उसके दिल को चीरते जाते थे। जिन के एक बोल के बाद वह दूसरे का बेसब्री से इंतज़ार करती वह उसे बेगाने से लग रहे थे। इन को सुनने का भी उसका मन नहीं था..? क्या बात है यह..? उसने रेडियो बंद कर दिया।

संध्या को फिर बाल्टी रखने का शोर हुआ। कमला भाग कर द्वार पर गई। इस समय बात करने का तो कोई सवाल ही नहीं था। क्या पता वो कब आ जाएँ ..? लेकिन फिर भी वह दरवाज़े की ओर खिंची गई। वह तो बस उस लड़के को देखना चाहती थी। उस का दिल आँखों के रास्ते से अपने ऊपर उस लड़के की परछाईं माँगता था....और वह उसे देखने और देखते रहने के लिए मजबूर थी।

उस ने दरवाज़ा खोला। लड़का नहीं था...सामने उसका बाप रोज़ की तरह दूध देने के लिए खड़ा था। तपती कमला ठण्डी हो गई जैसे जलती अग्नि पर रेत पड़ जाती है। उसका सारा बुखार उतर गया और वह वही पुरानी कमला बन गई...मनमोहन लाल के घर वाली कमला.....

***

एक्स इंस्पैक्टर मातादीन टेंशन में

अशोक गौतम

उन सुनहरी दिनों को रोते-रोते प्याज़ के सूखे छिलके काट रहा था जब सलाद में प्याज़ ही प्याज़ होता था कि तभी कहीं से आते फ़ोन की घंटी बजी तो सोचा शायद पड़ोसी का फ़ोन होगा यह बताने के लिए कि बाज़ार में प्याज़ सस्ता हो गया है। आँसू पोंछते-पोंछते फ़ोन उठाया तो दूसरी ओर से कड़क आवाज़ ने चौंका दिया, 'कौन? रिटायर्ड एक्स इंस्पैक्टर मातादीन? पीपीओ नंबर 111811867567?'

'जी सर! हूँ सेम टू सेम पीपीओ नंबर वाला रिटायर्ड इंस्पैक्टर मातादीन ही, पर मातादीन के आगे एक्स रिटायर्ड दोनों लगाना ज़रूरी है क्या?' मैंने हल्का सा सानुनय ऑब्जेक्शन किया। इसलिए कि रस्सी जल चुकी थी पर उसके बट अभी भी बाकी थे। जाते-जाते ही जाएँगे ये बट भाई साहब! कई बार तो जाते भी नहीं। मरते-मरते भी आदमी अपने नाम के साथ अपना पद लगा ही यमराज को अपना परिचय देता है। आह! समय मिलने पर जब-जब ऑफ़िस में बीते उन दिनों की याद करता हूँ तो कलेजा मुँह को आ जाता है। उन दिनों जो सच्ची के सर भी होते थे कि उनका भी मुझे भरे मुँह सर सर कहते मुँह का थूक सूख जाता था पर वे फिर भी मेरे आगे पीछे मंडराते सर सर कहते रहते थे। सच कहूँ तो जो आज भी अंग्रेज़ों का राज होता तो वे भी मुझे सर कह कर ही बुलाया करते। सर इंस्पैक्टर मातादीन हाउ आर यू? अब तो कई बार रिटायरी होने के चलते औपचारिक आदर सहित इतनी फजीहत झेलनी पड़ती है कि मन करता है कहीं से सल्फास की गोलियाँ खाकर आत्महत्या कर लूँ। बाद में मिलती रहे जिसको फैमिली पेंशन मिलनी हों। लड़ती रहे ज्ञात अज्ञात घरवालियाँ मेरे मरने के बाद मेरी पैंशन को।

'मैं बैंक से बोल रहा हूँ।' दूसरी ओर से फिर आवाज़ आई।

'ओह भाई साहब आप? कौन से बैंक से? बंद होने वाले बैंक से या....कहो, कैसे हो आप? बैंक ठीक चल रहा है न? घर में सब कुशल तो हैं? इंटरेस्ट सॉरी, प्याज़ का इन दिनों क्या रेट चला है? आपने तो मेरी जान ही निकाल दी थी। मैं तो सोचा था कि... नमस्कार भाई जी! कोई डीए का पुराना एरिअर आ गया मेरे खाते में कहीं से या...' नौकरी के वक्त की ग़लत आदतें रिटायर होने के बाद आदमी को इतना परेशान रखती हैं कि पूछो ही मत! पैसे कट कटाकर आधे हो जाते हैं और पुरानी लतें दुगनी। पहले तो जब सरकारी नौकरी में था तो सारे वाहियात खर्चे तो इधर-उधर से ही निकल जाया करते थे और पूरी सैलरी बीवी के श्री चरणों में। बस, वर्दी पहनने भर की देर होती थी।

'नहीं! तुम्हारा ज़िंदा होने का प्रमाणपत्र चाहिए था।'

'ज़िंदा होने का?? ऐसा न कहो भाई साहब! रिटायर होने के बाद वैसे ही आधा ही ज़िंदा रह गया हूँ और अब आप फरमा रहे हैं कि....'

'हाँ! देखो एक्स इंस्पैक्टर मातादीन! तुम्हारी इस महीने की पेंशन हम तभी दे पाएँगे जो कल तक तुम अपना ज़िंदा होने का प्रमाणपत्र हमारे बैंक में जमा करवा दो... वर्ना...'

अशोक गौतम, गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड़, नजदीक मेन वाटर टैंक, सोलन-173212 हि.प्र
मोबाइल: 9418070089
ईमेल: ashokgautam001@gmail.com

'वर्ना क्या सर?' देखो तो, दो महीने में ही कितने अजीब दिन आ गए इंस्पैक्टर मातादीन के! कल तक जिस मातादीन को सब सर सर कहते नहीं थकते थे आज उसी मातादीन को बैंक के क्लर्क को भी सर सर कहना पड़ रहा है?'

'हम यह मान लेंगे कि अब तुम सब कुछ हो, पर मात्र ज़िंदा नहीं हो।'

'मतलब??' यह सुनकर लगा ज्यों कोई मेरा गला घोंट मेरे प्राण लेने की कोशिश कर रहा हो। जैसे कैसे मैंने उस अज्ञात से अपना गला छुड़वा राहत की साँस ली तो वे आगे बोले,'मतलब ये कि तुम मर चुके हो और तुम्हारी बीवी ने तुम्हारा डेथ सर्टिफिकेट बैंक में जमा नहीं करवाया है। तुम मरने के बाद भी बैंक से धोखा करना चाहते हो।'

'सर! बैंक से धोखा करने वाले तो विदेशों में मज़े लूट रहे हैं आपकी दया से पर... ऐसे कैसे हो सकता है सर? मैं आपसे फ़ोन टू फ़ोन जब बात कर रहा हूँ तो मैं मरा कैसे हो सकता हूँ?'

'ज़िंदा तो आजकल नून तेल के चक्कर में उलझे हुए हैं बंधु! अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के दौर में ज़िंदों की ज़ुबानें पता नहीं क्यों सीली रहती हैं? स्वतंत्र होने के बावजूद भी पता नहीं हम सच बोलने से क्यों डरते हैं? अब तो आदमी मरने के बाद कब्र से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बनाए रख पाता है। देखो डियर, रिटायरियों को वैसे भी हम अधिक मुँह नहीं लगाते। जो इनसे एकबार बात कर ही लो तो तब तक फ़ोन ही नहीं छोड़ते जब तक बेशरम बन खुद फ़ोन न काटो या फिर इनके फ़ोन की बैटरी खत्म न हो जाए। इसलिए जितनी जल्दी हो सके अपना ज़िंदा होने का प्रमाणपत्र लेकर बैंक आ जाओ ताकि इस महीने की तुम्हारी पेंशन बनाई जा सके। देखो, मुझे अभी और भी ज़िंदों को ज़िंदा होने के प्रमाणपत्र देने को संपर्क करना है। वर्ना माफ कीजिएगा, मुझे यह कहते हुए दुख तो बहुत हो रहा है कि बैंक तुम्हारे ज़िंदा होने के बाद भी कागज़ी तौर पर मान लेगा कि तुम भगवान् को प्यारे हो गए हो....'

ज़िंदा आदमी को उसके ज़िंदा होने के प्रमाणपत्र कौन देता है भाई साहब?

***

लघु कथा

बस अपने लिए

डॉ. संगीता गांधी

''मम्मी ये क्या कह रही हो! इस उम्र में क्या ये सब अच्छा लगता है। कुछ हमारे बारे में भी सोचो! समाज क्या कहेगा? आपकी बहू के मायके वाले हम पर हँसेंगे।'' ऋषभ ने एक साथ बहुत से उलाहने माँ पर दाग दिए। राखी ने एक नज़र ऋषभ व उसकी पत्नी को देखा फिर बेटी से बोली- ''रितिका, तुम्हें मम्मी से कोई शिकायत नहीं है क्या?''

''मम्मी, भैया ने जो सब कहा वो मेरी ओर से भी है। आप खुद सोचिए मेरे ससुराल वाले क्या कहेंगे! आपके दामाद और मैं कहीं मुँह नहीं दिखा पाएँगे !'' रितिका ने भी भाई वाली शिकायतों पर मुहर लगा दी।

राखी ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया - ''मेरे बच्चों तुम बहुत छोटे थे, जब तुम्हारे पिता चल बसे। तब कोई समाज नहीं आया मेरी मदद करने। स्वयं मैंने नौकरी की। तुम लोगों को पढ़ाया, शादियाँ की। पर मुझे जीवन में क्या मिला?'' राखी उठकर खिड़की के पास आ गई। ढलती शाम की गहराई सी राखी की सोच उसके शब्दों में साकार होने लगी।

''तुम दोनों अपने जीवन में आगे बढ़ गए। मैं आज रिटायर हो चुकी हूँ। सारा दिन अकेले कमरे में पड़ी रहती हूँ। रितिका, तुम कभी-कभी फ़ोन करती हो। पर क्या कभी तुमने मेरे पास बिना मतलब के बैठ कर मेरा अकेलापन बाँटने की कोशिश की।''

''मम्मी, अब मैं अपने बच्चों, पति को छोड़कर आपके पास कैसे आ जाऊँ! मेरी अपनी ज़िम्मेदारियाँ हैं।''

राखी हँस पड़ी। ''ज़िम्मेदारियाँ ! हाँ सही है। जब तुम्हारा बेटा, बेटी हुए, तब तुम दो - दो महीने मेरे पास रहीं। दामाद जी आराम से अकेले रह लिए। पर अब एक दिन भी मम्मी के पास बैठने की फ़ुरसत नहीं।''

ऋषभ बोला ''मैं और गरिमा तो आपके साथ रहते हैं, क्या कमी है, नौकर भी है।''

''बेटा, दो समय खाना मिल जाना ही इंसान की ज़रूरत नहीं होती। जीवन से और भी आकांक्षा होती है। तुम और बहू सुबह जाते हो, शाम को आते हो फिर तुम लोगों की अपनी पार्टियाँ, फ्रेंड सर्कल सब। बस रविवार को दो मिनट पूछ लेते हो - मम्मी कुछ चाहिए तो नहीं ! क्या मेरा जीवन नौकर से मिले खाने, कमरे में लगे टीवी, मोबाइल और रविवार को तुमसे मिले दो बोल तक सीमित है।'' राखी ने आँसुओं को रोकते हुए आगे कहा ''मेरी उम्र 58 साल है। तुम सब व समाज की नज़र में बूढ़ी औरत! जिसे बस भजन करना चाहिए, बच्चों, पोते-पोतियों में ख़ुशी ढूँढ़नी चाहिए। लेकिन मेरी आकांक्षा कुछ अलग है।''

राखी कुछ रुकी फिर बोली-'' मैंने यह घर बेच दिया है। इससे मिला सारा पैसा मैं रखूँगी। रितिका, सारे ज़ेवर तुम्हारे। जो फ्लैट किराए पर दिया हुआ था, वो खाली करवा लिया है। ऋषभ वो तुम्हारा है। तुम जल्दी ही वहाँ शिफ्ट हो जाओ।''

ऋषभ, रितिका अवाक् से मम्मी को देख रहे थे। राखी ने अंतिम फैसला सुनाया। ''कल मैं और नवीन जी विवाह कर रहे हैं। उसके बाद हम दोनों विश्व भ्रमण पर जा रहे हैं। तुम लोग विवाह में आओगे तो अच्छा लगेगा। नहीं भी आओगे तो कोई बात नहीं। मुझे बचा हुआ जीवन अब अपने लिए जीना है।'' ये कहते हुए राखी अपने कमरे में चली गई। कमरे में लाल साड़ी टंगी हुई थी। मेज़ पर पासपोर्ट रखा था। बस अपने लिए जीने के सुंदर सपने के साथ राखी बिस्तर पर लेट गई।

***

डॉ. संगीता गांधी, डब्ल्यू ज़ेड-76, लेन-4, प्रथम तल, शिव नगर, नई दिल्ली -110058
ईमेल : rozybeta@gmail.com

पांडेय जी मौसम और मौसिकी

लालित्य ललित

पांडेय जी सुबह दफ़्तर पहुँचे ही थे। पता चला कि लल्लू भैया का कमरा आज बदल गया। सोचा चाय वही पी जाए। पूछा तो कहने लगे कि भाई साहब मैं तो चाय पी बैठा। तभी कुछ याद आया तो पांडेय जी लल्लू भैया से शेयर कर बैठे।

आप भी आनंद लीजिए-अंग्रेज़ी के प्रोफ़ेसर से एक स्टूडेंट ने पूछा कि सर नेटुरे का अर्थ क्या होगा? प्रोफ़ेसर साहब हैरान! टालने के लिए कह दिया कि कल बता दूँगा। उन्होंने पूरी डिक्शनरी छान मारी, किन्तु उन्हें नेटुरे शब्द नहीं मिला। अगले दिन स्टूडेंट ने फिर से पूछा कि सर नेटुरे का मतलब क्या होता है? उस दिन भी उन्होंने बात टाल दी। अब तो वह रोज़ पूछने लगा। प्रोफ़ेसर साहब उससे इतना घबराने लगे कि उस लड़के को देखते ही रास्ता बदल देते, किन्तु वह रोज़ आकर उनको टेंशन देकर चला जाता। अंत में झुँझला कर उन्होंने उस लड़के से कहा कि मुझे नेटुरे की स्पेलिंग बताओ। लड़के ने कहा NATURE। अब तो प्रोफ़ेसर साहब का ख़ून खौल गया। उन्होंने उस लड़के से कहा कि मुझे बेवकूफ बनाते हो, नेचर को नेटुरे कह कह कर तुमने मेरा जीना मुश्किल कर दिया था। मैं तुम्हें कॉलेज से निकलवा दूँगा। लड़के ने झट से प्रोफ़ेसर साहब के पैर पकड़ लिए और रोते-रोते कहा कि सर ऐसा अनर्थ मत कीजिएगा नहीं तो मेरा ''फुटुरे'' ख़राब हो जाएगा।

एक दिन दफ़्तर न जाओ तो ऐसे लगता है कि प्रेमिका के संग आज पींग नहीं बढ़ाई। ये तो नए ज़माने का फलसफा है साहब। पांडेय जी पूछ बैठे कि लल्लू भैया और सुनाओ कल का क्या हाल था! लल्लू भैया ने कहा कि क्या बताएँ! आपमें से कोई नहीं था। कल का दिन बकवास रहा, किसी काम में मन न लगा ऐसे लगा कि कुछ अपना है जो कहीं छूट रहा है। पांडेय जी ने कहा कि ओ भैया काहे सेंटी हो रहे हो मियां! इतना प्रेम तो मिस शैफाली ने भी नहीं किया और तुम तो टिप्सी मुटरेजा के कलेजवा की बात करते हो!

अब लल्लू भैया पूछ बैठे कि हमारी आपकी बातचीत में ये टिप्सी मुटरेजा और शेफाली कौन है! पांडेय जी ने कहा कि छोड़िए! आप न समझेंगे। ये ज़रा लम्बी बातें है, चाय के प्याले में काहे पूरी होंगी!

इसमें खर्चा लगता है। जाने दीजिए फिलहाल। फिर कभी देखेंगे। क्या! समझे!

लल्लू भैया ने कहा कि जैसी पांडेय जी की इच्छा। जब मन होवे तो बतियाए। हमें कौन सी जल्दी है !

रामप्यारी ने फॉइल में दो सैंडविच दे दिए थे कि पांडेय जी दफ़्तर का सड़ा गला खाकर अपनी तबियत का बंटाधार न कर लें। पांडेय जी खुद भी कैंटीन के भोज्य पदार्थों से परहेज़ करने लगे है जैसे एक उम्र के बाद लपकुराम जी अधेड़ उम्र की महिलाओं से। वे भी क्या करें, वे खुद ही लपकतीं हुई आती है और हैरी माँ तो प्रेम दीवानी हुई बनकर अग्रसर हुई जाती है। लपकुराम जी की इसमें कोई ग़लती नहीं, बल्कि वे तो कहते है जहाँ शहद होगा

लालित्य ललित, बी 3/43,ग्राउंड फ्लोर,शकुंतला भवन,पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063
मोबाइल: 9873525397
ईमेल: lalitmandora@gmail.com

वहाँ आकर्षण तो होगा ही। बेचारे राधेलाल जी सारी उम्र शहद के चक्कर में लगे रहे, पर पा न सकें। हरि ओम का जाप करने में दिन व्यतीत कर रहे है। चिलमन ने कहा उन्हें कि इस उम्र में आप भगवान् के ध्यान में मन लगाओ। अब कुछ होने वाला नहीं है। नाम आप का हो गया। बच्चे सेट हो गए। अब क्या करोगे ज़्यादा सोच कर। ईज़ी मैन, ईज़ी। अचानक से राधेलालजी सोचने लगे कि चिलमन एकदम से इतना मननशील कैसे हो गया!

इसे तो किसी पुरस्कार की चयन समिति में होना चाहिए। पर जी जो लिखा होता है वह हो कर रहता है। क्या समझे! पांडेय जी इधर परेशान थे कि चिलमन कहाँ रह गया! और चिलमन था कि वह राधेलालजी की फिरकी ले रहा था। क्या ज़माना आ गया है। कोई फिरकी ले रहा है तो कोई फिरकी बन रहा है। इधर पांडेय जी सोच रहे है कि हफ़्ते बाद नवरात्रि शुरू हो जाएगी तो उसके आने का उद्घोष तो कायदे से होना चाहिए। उनका मन प्रेस क्लब में जाने को उत्साहित है लेकिन घरेलू कामों की बाय गॉड की कसम ऐसी बाढ़ सी आई हुई है कि क्या बताए!

इधर पांडेय जी के नए घर को बने साल भर ही हुआ है कि रामप्यारी ने कहा कि एक मुसीबत खत्म होती नहीं कि दूसरी आ खड़ी होती है। पांडेय जी पूछ बैठे कि हुआ क्या देवी! बिफर पड़ी। पहले घर में नहीं थी, दीमक। अब आपके पिताजी हर घड़ी में बाथरूम में हाथ धोते हैं। पता नहीं इस उम्र में आने पर खोपड़ी में क्या अंकगणित चला करता है। चुंनाचे कहीं से इत्ती नमी हो गई कि दीमक का प्रवेश हो गया। अब बुलवाना पड़ेगा, पेस्ट कंट्रोल वालों को। तब कहीं जा कर मामला सेटल होगा।

पांडेय जी ऑफ़िस में। सर पर एसी चल रहा है। चपरासी चाय पिला गया। उधर पांडेय जी सोच रहे है कि घरवाली केवल अन्नपूर्णा ही नहीं होती बल्कि वह मिशाल होती है जो पूरे घर को बाँधे रखती है। अकेले अपने ही दम पर घर भर में पेस्ट कंट्रोल करवा लेना भी कोई छोटा काम नहीं है।

पांडेय जी सोचने लगे कि इस दीवाली पर रामप्यारी जी को कोई गिफ्ट देना पड़ेगा। सोचते-सोचते कब चाय पी गए और चपरासी को कहने लगे कि क्या हुआ भाई!

मेरी चाय नहीं लाए अभी तक! उधर चपरासी सोच रहा है कि पांडेय जी को आजकल हुआ क्या है! जब देखो बातें भूलने लगे है। ये अच्छे संकेत नहीं है। राम जाने क्या होगा!

जो होगा, अपन को क्या होगा! साहब को होगा। चपरासी ने साहब के नाम पर अपनी चाय और दो समोसे भी रगड़ डाले। इस बात का फायदा उठाना चपरासियों का जन्मसिद्ध अधिकार है। पांडेय जी उनकी आदतों को भली भाँति जानते समझते है।

पांडेय जी को लगा कि जीवन में यदि प्रेम है तो सब कुछ है। फिर से अचानक वे रचनात्मक हो गए। किसी को नहीं पता कि आजकल किसे वे इम्प्रेस करने में लगे हैं।

दफ़्तर में पांडेय जी ने अपनी स्टेनो को कहा कि मुझे कुछ भी दिखाने से पहले टाइप किया हुआ पेपर खुद चेक किया करो। आजकल बड़ी ग़लतियाँ कर रही हो, लगता है जैसे केंद्र सरकार का पंगा दिल्ली सरकार से यथावत् है। स्टेनो भी सुनकर चकरा गई। पांडेय जी दुबारा गुस्सा दिखाई दें, उससे पहले ही वह नो दो ग्यारह हो गई। पांडेय जी को क्यूँ लगता है कि ग़लतियाँ स्टेनो के द्वारा क्यों हो रही हैं! क्या वह जान बूझ कर कर रही हैं?

क्या उसका काम में मन नहीं हैं? क्या वह घर की समस्याओं से पीड़ित है! काहे वह दिमाग की दही बनाने पर तुली हुई है। भैये अगर काम में मन नहीं तो लम्बी छुट्टी पर चली जाओ ताकि कुछ दिन ग़लतियों से मुक्ति मिल सकें। हये ओ राम। कित्थे गया चिलमन काका।

इधर पिछले दिनों पांडेय जी के मन में है कि भागती दौड़ती दुनिया में से कुछ पल आराम व सकून के मित्रों संग प्रेस क्लब में बिताए जाएँ। ऐसा करने से दो लाभ होते हैं, एक तो एक ही जगह आप मुलाकात कर सकते है और दूसरी जगह आपको दूसरे पक्ष की वैचारिक सम्पदा का पता भी लग सकता है। अंतर्मन कुमार ने कहा कि सही जा रहे हो गुरु! पिछले दिनों पांडेय जी ने राधेलालजी से कहा कि रामकिशन पुनिया को समझना बेहद टेढ़ी रकम है। राधेलालजी ने कहा कि सही कहा,पांडेय जी वास्तव में पुनिया को खर्च करने वाला अभी पैदा नहीं हुआ। ग़लती से आप ने कुछ खर्च करवा भी दिया तो ऐसा मुँह लेकर बताने लगेगा कि जो भी खाया होगा आपने वह खुद ही बाहर आकर कहेगा, ग़लती हो गई यार, कि नाहक आपके पैसे खर्च करवाए।

बहरहाल पांडेय जी ने सोचा कि दुनिया में अजीब किसम के घोंचू करेक्टर है। एक को तलाश करो तो अनेक मिल जाएँगे। इसलिए तफ्तीश स्तर पर देखना होगा कि आज के दौर में योग्य पात्र कौन सा है! सोचो, सोचो।

दूसरा पांडेय जी महसूस कर रहे हैं कि यदि आप बड़े पद पर काम रहे है तो कई लोग तो केवल ये ही कहने आ जाएँगे, यहाँ बगल में आया था सोचा कि आपको नमस्ते करता चलूँ। या दर्शन करता चलूँ। अजब हाल है फुरसतियाजी का जो मौके पे चौका लगाने का अवसर तलाशते है।

खैर पांडेय जी को लोगों के इस तरह के टंटे मालूम हैं। उन्हें यह भी मालूम है कि ये वह प्रजाति है जिसका काम है कि कुर्सी पर बैठे हुए अधिकारी को कितना ग्राम मक्खन लगाया जाए जिससे वह पिघल जाए और हमारे पाले में गेंद आ जाए।

इस तरह के घाघ प्राणी अक्सर अधिकारियों से मिलने के लिए लोचदार महिलाओं को साथ रखते है कि काम हो ही जाएगा। बड़े पॉजिटिव एटीट्यूड के लोग होते है।

वास्तव में हमारा देश सकारात्मक एनर्जी से भरा पड़ा है।

पांडेय जी सोच रहे है कि अभी कुछ दिनों बाद दीवाली आने वाली है,उस समय मुलाकातियों की संख्या में आशातीत वृद्धि होने की संभावना बनी रहती है कि सबसे पहले साहब को कौन खुश करेगा! दुनिया के खेल निराले। सबको बटर चाहिए। छोटे अधिकारी को सौ ग्राम लगेगा और बड़े अधिकारी को किलो।

आख़िर वज़न की बात है। चिलमन आजकल बड़ा ख़ुश रहता है। रोज़ाना किलो के हिसाब से बटर घर ले जाता था। आख़िर कितना मक्खन खाएँगे अपने विलायती राम पांडेय जी। वैसे भी एफ एम चिल्ला रहा है कि वसायुक्त चीज़ों का सेवन कम से कम

करें। हार्ट अटैक की संभावना से बचें। पांडेय जी अक्सर इस तरह के एड आते ही वॉल्यूम स्लो कर देते है कि निकम्मों ने डराने का ठेका लिया है। जब ठेका शब्द आया तो दिमाग का फ्यूज़ चिलमन का क्यों जल गया। अब ये तो वह जानें।

पांडेय जी ने कहा कि बेटे दिमाग से और दिल से बात को समझा करो। उतना ही सेवन करो जितना सेहत अलाउ करें। आई बात समझ में। आख़िर इस वित्तीय वर्ष में तेरी शादी भी तो करानी है। अगर शादी से पहले ही कंडेंसर खराब हुआ तो कौन शादी करेगी बे!

चिलमन ने उसी समय से दारू से तौबा कर ली। कंडेंसर ही फूँक गया तो क्या रहेगा! न बजेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। शशि उसकी बोतल ले गया। कल और परसों छुट्टी जो है।

पांडेय जी अपने घर में महोम्मद रफी के गीत सुन रहे है। अपने छज्जे पर बैठे हुए। पार्क में मिस शैफाली घूम रही है। जिम जाने से कितना परफेक्ट हो गई है। रामप्यारी ने आते ही कहा कि महाराज आप भी आजकल सैर के चक्कर बढ़ाओ। क्या तीन में ही आत्मसर्पण कर देते हो! जी,जी। कल से आप के कथन की सुनवाई होगी, देवी अन्नपूर्णा जी। पत्नी से जो डर गया उसका विकास हो गया। जो डरा नहीं वह आजकल अदालत में मुकद्दमा हारने की तैयारी में है।

पांडेय जी को सेब पसंद है कहते है कि कहीं पढ़ा है कि रोज़ाना सेब खाने से बीमारी नज़दीक नहीं आतीं। पर प्यारे पांडेय जी को कौन बताए कि सेब महंगा है रोज़ नहीं खाना चाहिए, पर समझाए कौन!

अगर जिसने समझाया वही पिटा। इसलिए सब को साँप सूँघ गया है कि हम न कुछ कहेंगे। अब चाहे पांडेय जी सेब खाएँ या खाएँ अपनों का दिमाग!

अजी सुनते हो! तुम्हें ही तो सुन रहा हूँ,पच्चीस साल होने को आए। क्या खाक सुनते हो! एक क्रेटा लेने को कहीं तो साँप सूँघ गया। मुँह से कुछ बोलते नहीं। क्रेटा माँगी है काश! कोल्डड्रिंक का क्रेट माँग लेती रामप्यारी काहे मेरी जान लेने पर तुली है चीकू की माँ।

***

लघु कथा

गिनीपिग्स

संतोष सुपेकर

ट्रेन में चढ़ते ही मैंने जगह की आस में नज़र दौड़ाई, भीड़ तो थी पर फिर भी कोने वाले केबिन में सीट मिल गई। गाड़ी चली और साथ ही ठंडी हवा भी, तो राहत की साँस लेते हुए मैंने चारों तरफ नज़र दौड़ाई, सामने कुछ ग्रामीण फर्श पर ही बैठे हुए बातें कर रहे थे। 'कहाँ जाना है?' मैंने समय काटने के उद्देश्य से पूछा। 'जेपुर साब, वाँ हमको हज़ार रुपे की दिहाड़ी मिल री हे, एक जगा।' बोलते स्वर में उल्लास था।

'एक हज़ार रुपये रोज़ ? कौनसी कंपनी दे रही है ?' मैंने प्रश्न किया।

'नी साहब, कंपनी नी, कोई हस्पताल हे, हमार गाँव का मनकू बता रा था एक बार, काम कराने के पेले वो कोई गोली-वोली खिलाते हें, उससे ताकत आती हे काम करने की।'

'गोली ? गोली खिलाकर काम कराते हैं ? ऐसा कौन सा काम है ? तुम्हारे उस मनकू ने और क्या बताया ?' मेरा माथा ठनका।

'नी साब, उसका तो भोत दिन से कुछ पता नी।'

'गोली खिलाते हैं, हस्पताल जैसी जगह ? एक हज़ार रुपये रोज़ देंगे इन लोगों को ?' सवाल मेरे दिमाग में चक्कर खाने लगे, आत्मा काँप उठी, कहीं ये वो चक्कर तो नहीं? इन भोले भाले लोगों को गिनीपिग तो नही बनाया जा रहा ? गिनीपिग, वो चूहे, सुअर जिन पर नई दवा का ट्रायल किया जाता है। तो ये सब क्या चूहे बनने जा रहे हैं ? कैसे समझाऊँ इन लोगों को कि .... इन पर तो हज़ार रुपये का लालच सवार है।' मैंने सामने देखा तो मुझे वहाँ वे ग्रामीण नहीं, चूहे ही चूहे दिखाई देने लगे, हँसते मुस्कुराते, तम्बाकू मसलते, अज्ञान के अंधकार में या लालच में आकर मौत के पिंजरे की तरफ जाते चूहे, गिनीपिग्स।

***

ड्रॉबैक

पार्टी से लौटे तो कुछ अनमने से थे केशवजी, किसी उधेड़बुन में खोए से। चेहरा पढ़ते हुए पत्नी ने सशंक स्वर में पूछा- 'क्या हुआ? खाना ठीक नहीं था क्या? या किसी ने कुछ कह दिया? 'न, नहीं ऐसा कुछ नहीं, वो...वो बबली थी न, जो अपने सामने वाली लाइन में रहती थी, वो आई थी, पार्टी में अपने पति के साथ.....।'

'तो, आई थी तो? उसने आपसे कुछ कहा क्या ऐसा वैसा?'

'अरे नहीं, वो बात भी नहीं' झुँझुलाते केशवजी की कसक अब पूरी तरह बाहर आई, 'वो.... वो क्या है कि उसने मेरे आसपास खड़े सभी बुज़ुर्गों के पैर छुए, पति सहित, पर मुझे देखकर सिर्फ मुस्कुराकर आगे बढ़ गई.....भई ऑफ्टरऑल, मैं भी सिक्सटी प्लस में चल रहा हूँ, उसे मेरे पैर नहीं छूना चाहिए?'

'ओऽऽह' केशवजी का मंतव्य जान जोरों से हँसती उनपर आसक्तिपूर्ण निगाह डालंती रेखाजी बोली, 'तो ये बात चुभ रही है आपको? अरे आप लगते कहाँ हो बासठ साल के? हमेशा टी-शर्ट जींस पहनते हो, सिर पर अब भी घने बाल हैं, हर हफ़्ते डाई करते हो, आपको बुज़ुर्ग मानेगा कौन?'

'हाँ... यह तो है' आईने में खुद को देखते हुए केशवजी पहले मुस्कुराए फिर नर्वस होते हुए सोचने लगे, 'आज पता चला, बुढ़ापा छिपाने का ड्रॉबैक'!

***

संतोष सुपेकर, 31, सुदामा नगर, उज्जैन, मोबाइल 94248-16096
ईमेल: santoshsupekar29@gmail.com

मनभावन शहर सिडनी की कुछ गलियाँ

रेखा राजवंशी
चित्र-राजेश कुमार

Rekha Rajvanshi, 1, Leigh Place, West Pennant Hills, Sydney, New South Wales, 2125, AUSTRALIA
मोबाइल: +61403116301
ईमेल: rekha_rajvanshi@yahoo.com.au

दुनिया के खूबसूरत शहरों की बात हो और ऑस्ट्रेलिया के सिडनी शहर का उल्लेख न हो, यह हो नहीं सकता। एबोरीजनल आदिवासियों का देश ऑस्ट्रेलिया, जिसे ब्रिटिश अफ़सरों के निर्देशन में ब्रिटिश अपराधियों द्वारा बसाया गया। जहाँ सुनहरे दिन और रुपहली रातें होती हैं। सारे मौसम जहाँ अपना खूबसूरत दामन फैलाकर सबका मन लुभा लेते हैं। उसी का सुन्दर शहर सिडनी, जहाँ साफ़ सुथरे समुद्र तट अपनी तरफ बुलाते हैं, खुला, स्वच्छ आसमान जिसमें पक्षी बन उड़ जाने को निमंत्रित करते हैं और हर ओर बिखरी हरियाली पायल सी छमछम करती रिझाती है। कभी बसंत की दुल्हन खिलखिलाती है, तो कभी पतझड़ में मेपल पत्तियाँ ताली बजा-बजा कर सबको बुलाती हैं। सूर्यास्त के समय जब सागर अपनी बाहें फैलाए सूरज को अपने आगोश में बाँध लेता है तो मन मुग्ध हुए बिना नहीं रहता। रात को सितारों का जमघट इकट्ठा होकर ताश की बाजी लगाता है तो चाँद की रौशनी भी फीकी लगती है।

ऑस्ट्रेलिया अन्य देशों की अपेक्षा नया देश है, इसे प्रकृति ने जैसे अपने हाथों से संवारा है। यहाँ एक जगह गर्मी, सर्दी, बसंत और पतझड़ सारी ऋतुएँ एक खास सुंदरता लिए आती

हैं। यहाँ के पशु पक्षी भी अनूठे हैं। सिर्फ कंगारू ही नहीं अन्य भी ऐसे मार्सुपियल पशु हैं जिनके शरीर से थैली जुड़ी हुई है जैसे कोआला, पोसम, वोम्बैट आदि। ऑस्ट्रेलिया की जनसँख्या दिनों दिन बढ़ रही है। अब यहाँ की जनसँख्या पच्चीस मिलियन से अधिक हो गई है जिनमें दूसरे देशों से आए प्रवासी भी हैं।

पर आज हम सिर्फ सिडनी की बात करेंगे। सिडनी की स्थापना 1788 में हुई थी जब पहला बेड़ा इंग्लैंड से ऑस्ट्रेलिया पहुँचा था। इंग्लैंड की जेल छोटे-मोटे अपराधियों से भर चुकी थीं, ऐसे में यह निर्णय लिया गया कि उन्हें नई ब्रिटिश कॉलोनी ऑस्ट्रेलिया भेज कर बसाया जाए। इसी के चलते 13 मई 1787 को, पोर्ट्समाउथ, इंग्लैंड से 11 जहाज़ों का एक बेड़ा रवाना हुआ। इसमें 759 अपराधी थे, जिनमें से अधिकांश नाविकों के साथ थे और कैदियों की सुरक्षा के तैनात कर्मचारी थे। अपने साथ, वे बीज, खेत की जुताई, पशु जैसे मवेशी, भेड़, सुअर, बकरी, घोड़े और मुर्गियाँ लाए थे और 2 साल तक भोजन की आपूर्ति की व्यवस्था भी की थी। 26 जनवरी 1788 को यह जहाज़ी बेड़ा पोर्ट जैक्सन में पहुँचा। कमांडर आर्थर फिलिप को इस जहाज़ी बेड़े की कमान सौंपी गई।

सिडनी का नाम थॉमस टाउनशेंड - लॉर्ड सिडनी (1733-1800) के नाम पर रखा गया था। वे 1783 में ब्रिटिश सेक्रेटरी ऑफ स्टेट बने थे और अंग्रेज़ों ने उनसे ऑस्ट्रेलिया में एक कॉलोनी स्थापित करने की सिफारिश की थी। पहले तो कॉलोनीवासियों के लिए यहाँ काफी मुश्किलें थीं, भोजन कम था, स्वच्छ पानी की खोज करनी थी आदि आदि। धीरे-धीरे चीज़ें बेहतर हुईं।

ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासी एबोरीजनल आदिवासी थे। उनके अनेक समुदाय थे और वे सम्पूर्ण ऑस्ट्रेलिया में अलग-अलग कबीलों, प्रजातियों में बंटे हुए थे। उनकी बोलियाँ भी अलग थीं। ब्रिटिश सैनिकों और ऑस्ट्रेलिया के आदिवासियों के बीच काफी वर्ष संघर्ष चला और इसमें बहुत सी प्रजातियाँ समाप्त हो गईं। उनके उस इतिहास की चर्चा बाद में करेंगे।

आज सिडनी एक बहुसांस्कृतिक शहर है जिसमें यूरोप और एशिया दोनों के कई अप्रवासी हैं। यह आसानी से ऑस्ट्रेलिया का सबसे बड़ा शहर है। आज सिडनी की आबादी 4.6 मिलियन है।

सिडनी को बसाने में इंग्लैंड के अपराधियों ने बहुत बड़ी भूमिका निभाई। सिडनी के कई हिस्सों में वो जेलें आज भी देखी जा सकती हैं जिनमें उन्हें रखा गया और उनसे मज़दूरी करवाई गई।

आइए, अब आपको सिडनी के पर्यटक स्थलों की सैर कराई जाए और साथ ही साथ सिडनी की प्रसिद्ध गलियों में भी घुमाया जाए। तो चलिए.....चलें शहर की तरफ। यहाँ शहर में लंदन की तरह लाल रंग की डबल डेकर पर्यटक बसें चलती हैं, जिनमें बैठकर सिटी के विभिन्न स्थानों पर पहुँचा जा सकता है। ओपेरा हाउस के समीपस्थ स्टेशन 'सर्कुलर की' है, वहाँ उतरिए और फिर सिडनी की गलियों (सड़कों) में पदयात्रा करते हुए अनेकों प्रसिद्ध पर्यटक स्थलों के दर्शन करिए। आप शहर में ओपेरा हाउस, हार्बर ब्रिज, डार्लिंग हार्बर, स्टार कसीनों और सिडनी टावर को देख सकते हैं।

सिडनी ओपेरा हाऊस-सिडनी ही नहीं ऑस्ट्रेलिया के प्रतीक के रूप में जाना जाता है। ओपेरा हाउस का क्वीन एलिज़ाबेथ द्वितीय ने 20 अक्टूबर 1973 में विमोचन किया। इसके निर्माण में 14 साल का समय लगा, 2007 में यूनेस्को ने सिडनी ओपेरा हाउस को विश्व विरासत स्थल के रूप में

मान्यता दी। इस विशालकाय इमारत में कई थिएटर कक्ष हैं जिनमें साल में करीब 1500 कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, यहाँ दुनिया भर के कलाकार कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं। वहाँ जाकर कोई अच्छा सा ओपेरा सुन सकते हैं।

ओपेरा हाउस के सामने ही सिडनी का सुप्रसिद्ध हार्बर ब्रिज भी देखा जा सकता है। सिडनी हार्बर ब्रिज दुनिया में सबसे लंबा और सबसे बड़ा स्टील आर्च ब्रिज है, और गिनीज़ वर्ल्ड रिकॉर्ड के अनुसार 5 वां सबसे लंबा फैले-आर्च ब्रिज है। 1998 के बाद से, ब्रिजक्लब ने पर्यटकों को पुल के दक्षिणी आधे हिस्से पर चढ़ने की अनुमति दिलवा दी है। यहाँ आपको पुल पर चढ़ते लोग भी दिखाई दे सकते हैं, ये पर्यटन मौसम अनुरूप होने पर पूरे दिन, रात से रात तक चलते हैं।

थक जाएँ तो घूमते-फिरते रॉक्स मार्केट्स जाएँ, ताज़ा बनती हुई कॉफी की खुशबू आपको तरोताज़ा कर देगी। रॉक्स की गलियों में जब आप घूमेंगे तो कुछ ऐतिहासिक चीज़ें आपको देखने को मिलेंगी।

सिडनी टॉवर 1981 में बनाया गया था, सिडनी टॉवर सिडनी की सबसे ऊँची संरचना और दक्षिणी गोलार्ध में दूसरा सबसे लंबा टॉवर है। यहाँ के रिवॉल्विंग रेस्त्राँ में शहर का नज़ारा देखते-देखते आप खाना भी खा सकते हैं।

क्वीन विक्टोरिया बिल्डिंग - प्राय: पर्यटक सिडनी के टाउन हॉल स्टेशन पर ही स्थित क्वीन विक्टोरिया बिल्डिंग की सुंदरता पर मुग्ध हुए बिना नहीं रहते। पियरे कार्डिन ने क्वीन विक्टोरिया बिल्डिंग (QVB) को 'दुनिया में सबसे सुंदर शॉपिंग सेंटर' के रूप में वर्णित किया है। यह बिल्डिंग वास्तुकला का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो आपको पूरे शहर से जोड़ता है। यह शहर की मुख्य सड़कों - जॉर्ज

स्ट्रीट, मार्केट स्ट्रीट, यॉर्क स्ट्रीट और ड्रिट स्ट्रीट से घिरा हुआ है, यहाँ एक कॉन्सर्ट हॉल की स्थापना की गई थी, जो अब सिटी लाइब्रेरी बन गया है। क्यू वी बी बिडिंग का मुख्य आकर्षण है गुंबदों की शृंखला, यहाँ रंगीन काँच की खिड़कियाँ और दरवाज़े इसे भव्य बनाते हैं।

डार्लिंग हार्बर भी सिडनी शहर में पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र है। अगर आप वहाँ जा रहे हैं तो आपको पूरा दिन चाहिए, क्योंकि वहाँ कई म्यूज़ियम हैं जिन्हें आप देखना चाहेंगे। 1988 से डार्लिंग हार्बर जिले का पुनर्विकास किया गया था और अब इसे अपनी दुकानों, रेस्त्राँ और मनोरंजन के लिए जाना जाता है। यहाँ मैडम टुसाड वैक्स म्यूज़ियम, सी लाइफ (समुद्री जीव जंतु), और वाइल्ड लाइफ (जंगी जीव जंतु) भी देखे जा सकते हैं। वैक्स म्यूज़ियम में गांधी जी के साथ-साथ कुछ बॉलीवुड हस्तियों की भी मूर्तियाँ हैं।

डार्लिंग हार्बर के पास ही सिडनी का प्रसिद्ध स्टार कसीनो है। आप वहाँ चल कर जा सकते हैं। आप स्टार सिटी कैसीनो कॉम्प्लेक्स में जा सकते हैं और जुआ खेलकर अपनी किस्मत आजमा सकते हैं और वहाँ के रेस्त्राँ में खाना भी खा सकते हैं। हर हफ्ते डार्लिंग हार्बर में आतिशबाजी भी चलाई जाती है, ये रंग बिरंगे चमकीले फायर वर्क्स आकाश में उड़ते हुए सुन्दर नज़ारा बनाते हैं।

समय हो तो बस पकड़ कर आप लूना पार्क, टरोंगा ज़ू भी जा सकते हैं। टारोंगा ज़ू 350 प्रजातियों के 4,000 से अधिक जानवरों का घर है। इसमें एक चिड़ियाघर की दुकान, एक कैफे और सूचना केंद्र है। लूना पार्क एक मनोरंजक (एम्यूज़मेंट) पार्क है जिसमें अनेक प्रकार के झूले हैं। अगर आपके बच्चे साथ हों तो उन्हें वहाँ आनंद आएगा।

आइए अब बात करें कुछ प्रसिद्ध गलियों की, जहाँ भटकते हुए बहुत कुछ देख और सीख पाएँगे।

जॉर्ज स्ट्रीट, सिडनी

जॉर्ज स्ट्रीट, सिडनी की सबसे महत्त्वपूर्ण सड़कों में से एक है, जो सेंट्रल स्टेशन के केंद्र से शुरू होती है और 'सर्कुलर की' में सिडनी हार्बर तक जाती है, जहाँ सिडनी ओपेरा हाउस और हार्बर ब्रिज स्थित हैं।

ऑक्सफोर्ड स्ट्रीट, पैडिंगटन

ऑक्सफोर्ड स्ट्रीट ने ऑस्ट्रेलिया की प्रमुख शॉपिंग सड़कों में से एक है। यह सड़क शहर से सुप्रसिद्ध समुद्र तट बोन्डाई जंक्शन की ओर आती है, आप आसानी से एक दिन ऑस्ट्रेलियाई डिज़ाइनर स्टोर में विंडो शॉपिंग करते हुए बिता सकते हैं। इस सड़क पर बहुत सारे भोजनालय भी हैं, यहाँ एक वाइन लाइब्रेरी भी स्थित है, जहाँ रुककर आप वाइन का एक गिलास भी पी सकते हैं।

किंग स्ट्रीट, न्यूटाउन

न्यूटाउन की किंग स्ट्रीट फैशनेबल उपनगर का केंद्र है, सिडनी विश्वविद्यालय के पास स्थित होने के कारण यहाँ अक्सर युवा विद्यार्थी दिखाई देते है। इस सड़क पर घूमते हुए आप शहर के कुछ सर्वश्रेष्ठ रेस्त्राँ, बार और बुटीक भी देख सकते हैं।

ग्लीब प्वाइंट रोड

क्या आप कॉफ़ी के शौक़ीन हैं? एक किताबी कीड़े हैं? तब आप शहर के भीतरी-पश्चिम में स्थित ग्लीब प्वाइंट रोड में घूमने में आनंद महसूस करेंगे। सिडनी की कुछ सर्वश्रेष्ठ पुस्तकें यहाँ मिल सकती हैं, जिसमें कॉर्नस्टॉक बुकशॉप भी शामिल है, जिसमें चार हज़ार के करीब अपराध पुस्तकों का संकलन है। यदि आपको कॉफी चाय की तलब लगे तो आप यहाँ के रेस्त्राँ में जा सकते हैं।

डार्लिंग स्ट्रीट, बालमेन

बालमेन की डार्लिंग स्ट्रीट बालमेन उपनगर के ऊपरी हिस्से से शुरू होती है और चलते-चलते हम नदी के ठीक नीचे पहुँच सकते हैं। मौसम अच्छा हो तो आप यहाँ की ट्रेंडी दुकानों में विंडो शॉपिग कर सकते हैं।

द कोरसो, मैनली

खूबसूरत सबर्ब मैनली में स्थित कोरसो सड़क पूरी तरह से कार मुक्त है और यहाँ पैदल चलते हुए अद्भुत आनंद आता है। मैनली में बंदरगाह और समुद्र तट के बीच चलते हुए ख़रीदारी भी की जा सकती है।

यदि हम भारत के लिटिल इंडिया की सैर करना चाहें तो पैरामैटा स्टेशन पर उतर कर हैरिस पार्क तक पैदल जाएँ और विग्रम स्ट्रीट पर पंक्तिबद्ध भारतीय रेस्त्राँ में से किसी रेस्त्राँ में खाना खाएँ। पिछले पंद्रह साल में यह सड़क भारतीय रेस्त्राँ और व्यवसायों के लिए चर्चा में आई है।

इसके अतिरिक्त सिडनी के पश्चिम में दो प्राकृतिक आकर्षण हैं - ब्लू माउंटेंस और जेनोलिन केव्स (गुफाएँ)। जिन्हें देखे बिना आप सिडनी से जा नहीं पाएँगे। ब्लू माउंटेंस में तीन पर्वतों की शृंखला 'थ्री सिस्टर्स' नाम से जानी जाती है। अगर आपके पास एक दिन और है तो आप जेनोलिन केव्स ज़रूर जाइए। जेनोलन गुफाएँ लाइम स्टोन (चूने पत्थर की) गुफाएँ हैं, जो न्यू साउथ वेल्स में ब्लू माउंटेंस के पश्चिम में स्थित हैं।

लोग कुछ भी कहें पर सिडनी की इन गलियों और स्थलों में सैर करने का आनंद ही कुछ और है। तो आइए सिडनी, देर किस बात की है।

जाने कितनी सदियों का इतिहास समेटे हैं,

इन गलियों में उनको जीना अच्छा लगता है।

***

दर्रों की घाटी लद्दाख

संतोष श्रीवास्तव

अक्टूबर का खुशनुमा महीना और श्रीनगर से कारगिल की ओर रवाना होती हमारी मिनी बस। बड़ा ही रोमांचक लगता है दुर्गम रास्तों का सफ़र। ऊँचे-ऊँचे भयानक खूबसूरती को समेटे पर्वत और अँधकार को गले लगाए गहरी-गहरी घाटियाँ। मिनी बस के ड्राइवर का नाम हैदर था। हँसमुख पठानी मर्द। मैंने उससे रास्ते की जानकारी चाही तो तपाक से बोला ''ओ जी चल रहे हैं वुहान कैंप। जहाँ से मिलिट्री एरिया शुरू होता है।''

मैंने देखा छल-छल बहते पारदर्शी पानी को चढ़ाई उतराई में संग-संग बहते। वह सिंधु नदी थी। हमारी बस श्रीनगर से लेह राष्ट्रीय राजमार्ग पर थी। रास्ते के दोनों ओर चिनार के पेड़ ही पेड़। चिनार के तांबे या हरे या हल्के लाल पत्ते पतझड़ में सड़क को ढंक देते हैं। तब पत्रविहीन चिनार की डालियाँ सूनी-सूनी निर्निमेष सामने के ऊँचे- ऊँचे पहाड़ों को बस देखती रहती हैं। पहाड़ कहीं-कहीं बर्फ़ से ढके थे। रास्ते में चुने हुए पत्थरों के ढेर, नदी के किनारे भी गोलाकार सफेद पत्थर जैसे पत्थरों की नुमाइश लगी हो। नदी के ऊपर लकड़ी के हरे पेंट से रंगे पुल पर से जब बस गुज़रती तो वह तेज़ आवाज़ कर खामोश वादियों को चौंका देता। सामने जोजिला पास। जोजिला पास से गुज़रते हुए युद्ध के दिन याद आ गए। यहीं बहा होगा पाकिस्तानी सैनिकों से मुकाबला करते हुए भारतीय सैनिकों का लहू। उनकी स्मृति में जोजिला वार मेमोरियल बना है। लाल सफेद रंगों वाला स्मारक देखते ही दाहिना हाथ सेल्यूट की मुद्रा में माथे तक पहुँच गया। रास्ते में पड़ने वाले सभी गाँव बहुत कम आबादी वाले गाँव थे। टीन के शेड वाले बस 20 या 25 मकान होंगे। चाहे डुमरी एरिया हो या मीणा मार्ग सभी एक जैसे गाँव। समझ में नहीं आ रहा था कि पर्वत सड़क की दाहिनी ओर हैं या सामने या वैली से निकल रहे हैं, क्योंकि रास्ता घुमावदार था। पर्वतों पर वनस्पति नहीं के बराबर लेकिन मिट्टी के विविध रंग जैसे प्रकृति ने होली खेली हो इन पर्वतों के संग। हरे, भूरे, गेरू रंग के पीले कहीं गुलाबी भी। पर्वतों के पीछे से झाँकते बर्फीले पहाड़ उन्हीं में से एक टाइगर हिल है जिसका आधा हिस्सा पाकिस्तान में है और आधा हिंदुस्तान में। कारगिल युद्ध के दौरान टाइगर हिल पर बने सैनिक बंकरों ने भारी तबाही मचाई थी। इन बंकरों को पाकिस्तान के चंगुल से छुड़ाने के लिए भारतीय सेना को असाधारण नीति से काम लेना पड़ा था।

थोड़ी ही देर में हम द्रास पहुँच गए। द्रास विश्व का दूसरा सबसे अधिक ठंडा आबादी वाला स्थान है। सर्दी के मौसम में यहाँ तापमान शून्य से 50 डिग्री सेल्सियस नीचे तक पहुँच जाता है। अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि इस तरह की भीषण सर्दी में जीवन निर्वाह कितना मुश्किल होगा। गर्मी के चार, पाँच महीनों में ही खाद्य सामग्री, ईंधन, पेट्रोल तथा ज़रूरत की सभी चीज़ों का स्टॉक करना पड़ता है। बता रहे थे रेस्त्राँ के मालिक जगजीत जिनके रेस्त्राँ में

संतोष श्रीवास्तव, 505, सुरेन्द्र रेज़िडेंसी, दाना पानी रेस्टोरेंट के सामने, बावड़ियाँ कलाँ, भोपाल- 462039 (मध्य प्रदेश)
मोबाइल: 09769023188
ईमेल: Kalamkar.santosh@gmail.com

हम ठंड से टकराते हुए उबलती चाय बिना फूँक मारे पी रहे थे।

जगजीत ने बताया- ''मैं तो यहाँ स्कूल में शिक्षक हूँ और यह रेस्त्राँ भी चलाता हूँ। अभी तो ऑफ सीज़न है वरना यहाँ देशी-विदेशी पर्यटकों की भीड़ रहती है। द्रास में खूबानी खूब पैदा होती हैं। बाकी सामान जम्मू से आता है। सब सामान गर्मियों में ही स्टोर कर लेना पड़ता है। क्योंकि श्रीनगर लेह राजपथ और लद्दाख मनाली मार्ग दोनों बर्फ की ऊँची- ऊँची परतों से ढक जाते हैं। कृषि और उद्योग तो यहाँ नहीं के बराबर है।'' एकाएक जगजीत के चेहरे पर पीड़ा झलक आई-''रह -रह कर पाकिस्तान की तरफ से अकारण गोलीबारी होती रहती है। कभी कोई जवान शहीद हो जाता है तो कभी कोई। कारगिल युद्ध की मार तो हम अभी तक नहीं भूल पाए हैं। 1999 से लगभग दो महीनों तक कारगिल, मुश्की, द्रास बटालिक नूबरा आदि क्षेत्रों में सेना और आतंकवादियों की झड़पें चलती रहीं। उस वक्त हम सबने मिलकर उनका सामना किया। हालाँकि कइयों को घर छोड़ने पड़े और परिवारजनों को मुश्किलों का सामना करना पड़ा। लेकिन उससे क्या? पाकिस्तान हमें जीने नहीं देगा तो क्या हम उसे जीने देंगे ?''

जगजीत के रेस्त्राँ की दीवारों पर लद्दाख की हसीन वादियों की, नक्शे की और शहीदों की तस्वीरें उसके देश प्रेम को प्रकट कर रही थीं। विदा लेते वक्त मैंने उसे ''जय हिंद'' कहा उसने भी तपाक से सैल्यूट किया-'' जय हिंद मेरा भारत महान्।''

कारगिल की ओर बढ़ते हुए हैदर ने बताया लद्दाख में बरसात द्रास तक ही होती है। इसके बाद पानी की बूँदे बर्फ बनकर गिरती है। कारगिल में प्रवेश करते ही मन कई तरह के रोमाँच से भर गया।

हमें जिस होटल ''कारवाँ सराय '' में रात बितानी थी वह बहुत ऊँचाई पर ढेरों सीढ़ियाँ चढ़कर था। यहाँ कमरा तापमान की तुलना में गर्म नहीं था लेकिन नीचे उतर कर जो डाइनिंग रूम था वह अपेक्षाकृत गर्म था। खाना पंजाबी तरीके से पकाया हुआ ज़ायकेदार था। जम्मू के बाद अब अच्छा खाना नसीब हुआ। होटल के मैनेजर सरदार जी थे। बेहद सीधे एकदम किसान जैसे लग

रहे थे। हमने खाने की तारीफ की तो खुश होकर गरम रोटियाँ मंगवाने लगे।

''बहन जी अभी तो ऑफ सीजन है। आपके लिए ही होटल खुला रखा है। कल तो बंद करके हम भी पंजाब चले जाएँगे।''

''यहाँ पर्यटक कब आते हैं?''

''जनवरी से लेकर जुलाई महीने तक तो कम भीड़ रहती है। अगस्त सितंबर में घाटियाँ और पेड़ों पर बसन्त आ जाता है। उस वक्त यहाँ की सुंदरता देखने बहुत पर्यटक आते हैं।''

यानी कि हम एक महीना लेट हो गए यहाँ आने में। खाना खाकर कमरे में आए तो नल खुल ही नहीं रहा था। वही सरदारजी छेनी हथौड़ी लिए नमूदार।

''अरे आप?''

''क्या करें सब छुट्टी पर चले गए।''

जब हम बालकनी में खड़े थे तो देखा सरदार जी इस कमरे से उस कमरे भाग रहे हैं छेनी हथौड़ी लिए गर्म पानी के नल को ठीक करने। सामने घाटी रात के अँधेरे में बेहद खूबसूरत दिख रही थी। वैली के घरों में बत्तियाँ जगमगा रही थीं।

लद्दाख के दो जिले हैं। कारगिल और लेह। कारगिल की आबादी 25 हज़ार है। पर्यटन ही मुख्य व्यवसाय है। बाकी मिलिट्री एरिया होने के कारण अन्य माल की खपत जम्मू से होती है। यहाँ इस्लाम धर्म के अनुयायी अधिक हैं। खासकर शिया धर्मावलंबी। ईरान से भी इनके लिए फंड आता है। चीन से भी माल आता है। लद्दाख प्रदेश सदियों से एशिया के साथ व्यापार संबंधों का द्वार रहा है। अपनी अद्भुत सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित रखते हुए आधुनिकीकरण की ओर बढ़ते कदम अनूठी मिसाल पेश कर रहे हैं। क्योंकि यहाँ जीवन बहुत अधिक विषम है। महंगाई बहुत अधिक है। क्योंकि 80' माल तो बाहर का ही होता है। रात हमने कारवाँ सराय में ठिठुरते हुए गुज़ारी।

सुबह नाश्ते के बाद लगभग 11 बजे हम लेह की ओर रवाना हुए। लेह कारगिल से 240 किलोमीटर की दूरी पर है और जम्मू से 800 किलोमीटर की दूरी पर। हैदर ने कारगिल फिलिंग स्टेशन से पेट्रोल भरवाया। ठंड अधिक थी। कारगिल में 40 फुट तक बर्फ गिर जाती है। इतनी ठंड में पाकिस्तानी सैनिकों ने जिनमें आतंकवादी भी शामिल थे कारगिल के टाइगर वैली में हथगोले, गोलियाँ और सारे युद्ध के हथियारों की वर्षा कर दी थी। कारगिल के सिविलियन भी सड़कों पर उतर आए थे। पूरा कारगिल युद्ध के मैदान में तब्दील हो गया था। भारी मन से मैं कारगिल की सड़कों को निहार रही थी और उन शहीदों को सलाम कर रही थी जो हमारी रक्षा करते-करते कुर्बान हो गए थे। लेकिन समय सबसे बड़ा मलहम है। मेरे भर आए मन पर यहाँ की अद्भुत प्रकृति ने फाहा फेरा। लिंक रोड पर पीले पत्तों वाले पेड़ों ने मन मोह लिया। सामने सिंधु और जन्सकर नदी का खूबसूरत संगम था। जन्सकर नदी जनवरी-फरवरी में जम जाती है। पूरी नदी पर बर्फ की चादर बिछ जाती है। यही वह समय होता है, जब यहाँ पर्यटकों की बाढ़-सी आ जाती है। गाँव के लोग घर का पूरा सामान खरीदने निकलते हैं।

मुलबक से आगे खरबू गाँव में बौद्ध विहार हैं। गौतम बुद्ध की आदमकद मूर्ति और धम्मचक्र है। सफेद रंग से पुते चौकोन स्थल पर कलश जैसे रखे हैं। लाल सुनहरे कंगूरेदार स्थापत्य कतारबद्ध। घाटी में भी सफेद कँगूरे दार मकान हैं। पक्की सड़क जो लगभग 50 किलोमीटर तक चली गई है। बाईं तरफ रंग-बिरंगे अद्भुत पर्वत और दाहिनी ओर संग-संग चलती सिंधु चुपके-चुपके न जाने कब से मेरी हमसफर।

द्रास,मुलबक, मठाईयाँ गाँव से गुज़रते हुए नमकीला पास आया। जहाँ नमक के पहाड़ सूरज की रोशनी में चमक रहे थे। मुंबई में समुद्र से नमक बनता है।यहाँ नमकीला ग्लेशियर की धार से। इस नमकीन धार को क्यारियों में इकट्ठा कर नमक बनाया जाता है। काँगरिल गाँव में कुछ तिब्बती बच्चे पत्थरों पर बैठे थे। हमने उनकी फ़ोटो खींची तो खुश होकर बोले ''थैंक यू'' यानी

शिक्षा वैली में बसे इस छोटे से गाँव तक पहुँच चुकी है।

सफेद ईंटों से सजा और बीच में लाल हरे सफेद रंगों से 1 -105 लिखा शहीद स्मृति स्थल था। सब जगह शहीदों की स्मृतियाँ।

बड़ी अद्भुत निराली प्रकृति दिखी यहाँ। ऊँचे पर्वतों को देखकर लग रहा था न जाने कितने रहस्य अपने में समेटे ये निर्विकार शांत खड़े हैं और तभी सिलसिला शुरू हो जाता है बर्फ़विहीन,रंग बिरंगी मिट्टी वाले पर्वतों का। आबादी छिटपुट..... नहीं के बराबर। तभी अचानक बीच में छोटी सी हरी-भरी घाटी दिखाई पड़ जाती है। जहाँ ज़िन्दगी बड़ी ही सुस्त रफ्तार से चलती नज़र आती है। कच्चे मकान इक्का-दुक्का, चरते हुए जानवर, खुबानी के हरे पेड़, हवाएँ तेज़ और ठंडी कँटीली सी। पिछले मौसम में झुरमुट में उगी वनस्पति सूखकर गहरी लाल, काली सी दिख रही थी। मानों किसी ने गोबर के कंडे(उपले) बनाकर चिपकाए हों।

रात घिर आई थी। अँधे मोड़, खतरनाक पहाड़ी रास्ते, आसमान में पूर्णिमा के बाद वाली चतुर्थी का चाँद चमक रहा था। शुभ्र ज्योत्सना बिखरी थी। लिहाजा टेंशन क्यों ? रास्ता पार हो ही जाएगा। मैग्नेट हिल्स पर गाड़ी रोककर हमने अद्भुत दो मैग्नेट पर्वत देखे। साउथ और नॉर्थ हिल्स। इनकी मैग्नेट पहले गाड़ियों को खींचे रखती थी।अब भी गति में रुकावट आ ही जाती है। दोनों के बीच में पक्की सड़क बनी है और सफेद स्क्वायर बनाकर यह बताया गया है कि सँभालकर गाड़ी चलाना। उतना एरिया मैग्नेटिक है। पास ही बोर्ड पर यह बात अंग्रेज़ी में लिखी है। हमें पत्थरसाहिब गुरुद्वारा भी देखना था। लेकिन वह बंद हो चुका था। प्रार्थना की तो सरदार जी ने अंदर आने दिया।1517 ईस्वी में गुरु गोविंद सिंह तिब्बत से होते हुए लेह आए थे उसके बाद यह गुरुद्वारा बना।

लेह पहुँचते-पहुँचते रात हो गई थी। डाइनिंग रूम में गर्मागर्म डिनर हमारा इंतज़ार कर रहा था और बिस्तर पर पानी की गर्म थैलियाँ। नींद कब आई पता ही नहीं चला।

इस बार लेह के दर्शनीय स्थलों को देखने के लिए बड़ी तवेरा गाड़ी मिली। ड्राइवर नीमा स्वयं लद्दाखी था और काफी जानकारियाँ रखता था। वैसे तो पूरा लद्दाख 96.701 वर्ग किलोमीटर तक फैला है और आबादी 2 लाख है। अकेले लेह की आबादी 25 हज़ार है। यहाँ बौद्ध धर्म के अनुयायी सबसे अधिक हैं। ईसाई, मुसलमान भी हैं लेकिन सबसे कम संख्या हिंदू धर्मावलंबियों की है। ज़्यादातर हिंदू होटल बिजनेस से जुड़े हैं। यहाँ लोहा, स्टील और पर्यटन आय के प्रमुख स्रोत हैं। लद्दाख जम्मू कश्मीर का हिस्सा है। सरकार लद्दाख के विकास के लिए जो करती है उससे कहीं अधिक इन्हें मिलिट्री हेल्प मिलती है। यही वजह है कि कारगिल युद्ध के समय इन्होंने सैनिकों की हर तरह से मदद की थी। यहाँ सूरज सुबह 7:30 बजे उदित होता है और शाम 6:00 बजे तक भरपूर चमकता है। धूप लद्दाख के बर्फ़ीले पर्वतों को शीशे सा चमकाती रहती है। इतनी ठंड के बावजूद धूप तीखी और त्वचा को जलाने वाली होती है। मई से अगस्त तक यहाँ की प्रकृति पूरे यौवन पर रहती है। खूबानिओं से पेड़ लद जाते हैं। खेतों में गेहूँ की फसल लहलहाती है। सभी तरह की सब्जियाँ, फल, सेव, अखरोट की पैदावार होती है। केला यहाँ नहीं होता इसलिए बहुत महंगा है। 40 से 50 दर्जन केला श्रीनगर और चीन से आता है और महंगे दामों में बेचा जाता है। हम यहाँ के सबसे बड़े बौद्ध मठ हेमिस जा रहे थे। हेमिस में कई ऊँची- ऊँची सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं जो एक प्रांगण में जाकर खुलती हैं। खूबसूरत पच्चीकारी और सुनहले रंग से सजा गेट प्रांगण में कुछ स्तंभ। पाँच मंजिल वाली पत्थरों पर बनी इमारत है। जो सफेद और गेरू रंग से रंगी है। ऊपर चढ़कर गौतम बुद्ध की विशाल मूर्ति है। उनके बाजू में जबोपेकार देवता हैं जो उनकी रक्षा करता है। सीढ़ियों पर धम्मचक्र बने हैं। जिन्हें

घुमाते हुए मंदिर तक जाना होता है। दीवारों पर गौतम बुद्ध के जीवन की झाँकी चित्रित है। म्यूज़ियम हम देख नहीं पाए। ऑफ़ सीजन के कारण बंद था। लामा बाल्यावस्था से ही बौद्ध धर्म में दीक्षित होकर विवाह नहीं करने, घर-घर जाकर बौद्ध धर्म का प्रचार करने और गरीबों की मदद करने का संकल्प लेते हैं। घुटे सिर और कत्थई कपड़ों में लामा बहुत अच्छे दिख रहे थे। खासकर छोटे छोटे बच्चे।

हेमिस खूबसूरत पहाड़ी जगह पर ऊँचे -ऊँचे यूलक वृक्षों के जंगल से घिरा है। चारों ओर पहाड़। वहीं एक गुफा में मेडिटेशन केंद्र भी है। हेमस में हर साल जून या जुलाई में पदमा संभवा की स्मृति में मेला भरता है। तब यहाँ बौद्ध अनुयायियों तथा स्थानीय लोगों के अलावा विदेशी पर्यटकों की भारी भीड़ गुंपा पूजा स्थान में इकट्ठी होती है। श्रद्धालु पारंपरिक रूप से नृत्य गायन द्वारा ईश्वर को प्रसन्न करते हैं। इस अवसर पर महान् लामा के सम्मान में विशेष कार्यक्रम भी आयोजित होते हैं।

त्रिशूल हिल के सामने लंबा चौड़ा मैदान है। जहाँ आर्मी को ड्राइविंग सिखाई जाती है। खारू मिलिट्री एरिया भी है। एक पूरी कॉलोनी सैनिकों की है। ठिकसे गाँव के बीच से सुनहले पेड़ों से घिरी सड़क से गुज़रते हुए अद्भुत पर्वतीय सौंदर्य दिखाई देता है। ठिकसे मठ में पहुँचकर ऊपर तक निगाह गई। पत्थरों पर बसा अद्भुत शे पैलेस था। बड़े से गेट पर वही चित्रकारी, सुनहला रंग। पत्थर की 120 सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर गौतम बुद्ध की विशाल मूर्ति का मंदिर है और सामने प्रार्थना स्थल है। वहाँ लामा ज़ोर-ज़ोर से मंत्रोच्चारण कर रहे थे। उसके निचली मंजिल में भी बौद्ध मंदिर हैं। सामने पंच धातु से बने दो बड़े दीप काँच के शोकेस में जल रहे थे। थोड़ी सीढ़ियाँ चढ़कर गौतम बुद्ध की 7 .5 मीटर ऊँची

मूर्ति है जो तांबा सोना और चाँदी से बनी है। मूर्ति के सामने चाँदी के दीपक लाइन से रखे थे। बाजू में सांख्यमुनि की मूर्ति है। छोटे-छोटे बच्चे सीढ़ियों पर धमाचौकड़ी मचा रहे थे। ऊपर से लेह सिटी का व्यू देखते ही बनता था। इसी में तीन मंज़िल का शे पैलेस है जो लेह मनाली रोड पर सोलवीं सदी में राजा डेलदन नामग्याल ने बनवाया था। जिसकी ऊपरी मंज़िल का कलश सोने का बना है। राजकीय परिवार 1834 में स्टोक महल में आ गया। स्टोक महल में राजपरिवार गर्मियों में रहता था और शे महल में सर्दियों में। शे महल में अब नूतन स्थापत्य का बौद्ध मठ है।

हम सिंधु दर्शन के लिए रवाना हुए। पहले लोग सिंधु दर्शन के लिए पाकिस्तान जाते थे। सिंधु नदी हिमालय से निकलकर लद्दाख से बहती हुई पाकिस्तान जाती है और वहाँ से फिर भारत लौटती है। ऐसा भूगोल समझ आते ही लोग लेह में सिंधु दर्शन करने लगे। 1 जून 2001 को लालकृष्ण आडवाणी के हाथों सिंधु दर्शन का उद्घाटन हुआ। खूब लंबे चौड़े पक्के चबूतरे पर 12 छतरियाँ गेरू के रंग की हैं। दो-तीन सीढ़ी उतरकर मैंने सिंधु जल अँजुली में भरकर होठों से लगाया तो खारा लगा। पहाड़ी पानी खारा और भारी होता है। पानी की लापरवाही से हिल डायरिया हो जाता है। यहाँ की हवा भी सूखी है। अगर शरीर में पर्याप्त गर्माहट नहीं पहुँची तो बुखार की चपेट में आ जाते हैं। हवा भी तेज़ थी धूप भी तीखी। अनोखा प्रदेश है लद्दाख। साल में करीब 300 दिन सूर्य पूरी आबताब के साथ चमकता है और रात होते ही बर्फीली ठंड अपनी करामात दिखाती है।

झक्क सफेद शांति स्तूप अधिक ऊँचाई पर स्थित गोल गुंबद पगोडा है जो बौद्ध अध्यापन का प्रतीक है। इसे 1983 में भिक्षु ग्योम्यो नाकामूरा ने जापानी आर्थिक सहायता से बनवाया। 1985 में दलाई लामा ने इससे संलग्न बौद्ध मंदिर बनवाया। विशाल प्रांगण में स्थित शांति स्तूप में तेज़ हवा ने धर दबोचा। दर्शन के बाद सभी गाड़ी में आ बैठे।

सड़क पर काफी चहल-पहल थी। सूर्य अस्त हो चुका था। नीले निरभ्र आकाश पर तारे टिमटिमाने लगे थे।

आज हम मनाली चाइना बॉर्डर रोड पर हैं और समुद्र सतह से 17586 फीट की ऊँचाई तय करने वाले हैं। वहाँ से 13900 फीट पर स्थित 134 किलोमीटर लंबी पैंगोंग झील तक जाएँगे।

चांगथांग कोल्ड डेजर्ट वाइल्ड लाइफ सेंचुरी से लगा टँग्स स्ट्रीम था। धूप में झिलमिलाता। आगे गढ़वाल बटालियन का सफेद हरा लाल चिह्न लगा था। गढ़वाल बटालियन 1962 में हुए भारत चाइना युद्ध में काफी सक्रिय रही। अब त्रिशूल में एयरपोर्ट भी बन गया है। यह एयरपोर्ट केवल मिलिट्री ही उपयोग में लाती है। सिविलियन नहीं।

चांगला दर्रा 17586 फीट ऊँचा है। बर्फ़ीले पहाड़ की चोटी पर जब हम पहुँचे तो बर्फ़ानी विरल हवा में साँस भरना मुश्किल हो गया। हवा का दबाव काफी कम था। कपूर सूँघते रहने से साँस नॉर्मल हुई। जो पर्वत दूर से बर्फ़ से ढका दिखता था अब वह सड़क के किनारे था। यानी हम 17586 फीट की ऊँचाई पर पहुँच चुके थे। तभी तो हवा का दबाव कम था। ऐसा लग रहा था जैसे आसमान ने बाहों में भर लिया है। धरती नीचे छूटी जा रही है।

आज मैं ऊपर, आसमाँ नीचे।

अब हमें 3586 फीट उतरना था जब 14 फीट की ऊँचाई पर पहुँचे। झील के दर्शन हुए। मोरपंखी रंगों वाली झील देखकर मंत्रमुग्ध जैसी स्थिति हो गई। नीला, हरा, बैंगनी, पीला, गाढ़ा नीला रंग का पानी कैसे है यहाँ ! पीछे पर्वतों का सौंदर्य भी अद्भुत था। दो तीन रंग के पर्वत झील को अपनी गोद में समेटे थे। दूर चुशूल था .....वह लैंड जिसके इस पार भारत और उस पार चीन है। यही रंग बिरंगा पानी बहता हुआ चीन तक गया है। सर्दियों में झील जम जाती है। 5 फीट तक का पानी ठोस बर्फ बन जाता है। तब उस पर फौजी गाड़ियाँ

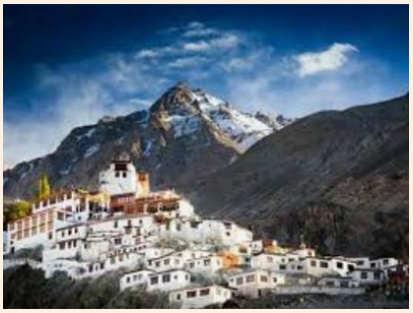

चलती हैं। जो सीमा पर सैनिक शिविर में सामान पहुँचाती हैं।

झील के किनारे सीजन के समय टैंट लग जाते हैं जिनमें देशी-विदेशी पर्यटकों को थ्री स्टार होटल जैसी सुविधा दी जाती है। पास ही रेस्टोरेंट और सोविनियर शॉप भी है। इक्का-दुक्का फौजी गश्त लगा रहे थे। सोविनियर शॉप में भी वे बैठे दिखे। इतने ठंडे सुनसान एरिया में सैनिक हमारे देश की रक्षा के लिए डटे रहते हैं।

पैक्ड लंच लेकर हम दूर तक झील के किनारे-किनारे गाड़ी से गए और अथाह सौंदर्यवान झील को सलाम कर लेह की ओर लौटने लगे।

''यहाँ 2 थिएटर हैं। एक मिलिट्री का एक सिविलियन का। हिन्दी फिल्में काफी पसंद की जाती है लेकिन इन थियेटरों की बड़ी दुर्दशा है। केवल मज़दूर वर्ग ही जाता है वहाँ।

लद्दाख डिग्री कॉलेज, केंद्रीय विद्यालय, लद्दाख मिशन स्कूल, लद्दाख पब्लिक स्कूल, दिल्ली पब्लिक स्कूल, टेन प्लस टू स्कूल, आदि कई स्कूल हैं। जहाँ उच्च शिक्षा प्रदान की जाती है लेकिन टेक्नीशियन शिक्षा के लिए बाहर जाना पड़ता है। प्रकाशन के क्षेत्र में लद्दाख पीछे है। वैसे यहाँ बौद्ध अखबार निकलता है। बस एक इकलौता दैनिक अखबार। बाकी के उर्दू, अंग्रेज़ी, हिन्दी अखबार श्रीनगर, जम्मू, दिल्ली से आते हैं। हिन्दी की पत्रिकाएँ नहीं के बराबर आती हैं। लेकिन डिस्ट्रिक्ट लाइब्रेरी में हिन्दी, उर्दू, अंग्रेज़ी और बौद्ध संस्कृति पर लिखी पुस्तकें उपलब्ध हैं। इन पुस्तकों को बड़े चाव से पढ़ा जाता है। तिब्बती बौद्ध परम्पराएँ यहाँ की समस्त परम्पराओं की केंद्र बिंदु हैं। बौद्ध धर्म के प्रति इतनी आस्था है कि 10 वर्ष के बालक को यह मठ को सौंप देते हैं। उन्हें पता है कि उसका बचपन छिन रहा है और वह सांसारिक सुखों से वंचित किया जा रहा

है। अब उसे सारा जीवन वरिष्ठ लामा की देखभाल में बिताना है और बौद्ध भिक्षु बनना है। इसमें कहीं भी उसकी मर्ज़ी को कोई स्थान नहीं है। बौद्ध धर्मावलंबियों का मानना है कि वे निर्माण धम्मचक्र घुमाएँगे और जीवन मरण के चक्र से मुक्ति पा लेंगे। वे शामया नामक लामा को अवतारी लामा मानते हैं। साथ ही प्रखर विद्वान भी।

सुबह खिलखिलाती चमकदार थी। आसमान में एक भी बादल का टुकड़ा नहीं था। हम लेह से सुबह 9:00 बजे खरदुंगला टॉप के लिए रवाना हुए। खरदुंगला टॉप दुनिया की सबसे ऊँची सड़क है जो अत्यंत दुर्गम बर्फ़ीले पर्वतों पर 18380 फीट की ऊँचाई पर बनाई गई है। प्रकृति पर विजय के इस एहसास को कौन अपनी स्मृति में संजोकर नहीं रखना चाहेगा। इस सड़क तक गाड़ियाँ आती हैं। यानी कि ट्रैकिंग नहीं करना पड़ता। कुछ साहसी नौजवान तो मोटरसाइकिल से भी जाते हैं।

इस बार हमारी गाड़ी काफी आरामदायक थी। जैसे-जैसे हम ऊँचाई पर चढ़ते गए, पर्वत नीचे होते गए। सभी बर्फ़ीले मोड़दार रास्तों के किनारे भी बर्फ़ कंगूरे की रेलिंग के रूप में मौजूद थी। मात्र 49 किलोमीटर दूर है लेह से खारदुंगला टॉप। फिसलन भरे रास्ते पर कार ड्राइव करना काफी जोखिम भरा था। ऊँचाई पर हवा का दबाव कम होने के कारण हमें लगातार कपूर सूँघना पड़ रहा था। खरदुंगला टॉप पहुँचते ही बर्फ़ीली हवा ने हमें कँपा डाला। सिर से पैर तक ऊनी कपड़ों और विंडचीटर के बावजूद बदन काँप रहा था। गाड़ी से उतरते ही चारों ओर बर्फ़ के सिवा कुछ दिखाई नहीं दिया। बर्फ़ीली धरती, बर्फ़ीले पहाड़। इतनी ऊँचाई पर पक्की सड़क बनाना काबिले तारीफ है। माइनस 5 तापमान के बावजूद हम बर्फ पर खूब खेले, खूब फ़ोटो खिंचवाई। कई जगह फिसले, गिरे। लेकिन बहुत रोमांचक था सब कुछ। छः सात मिलिट्री के ट्रक जिन पर व्हीकल फैक्ट्री जबलपुर लिखा था लाइन से खड़े थे। सामान से लदे ट्रकों पर फौजी जवान सवार थे। नीचे उतर कर वे ट्रक के चकों में लोहे की चेन बाँधने लगे। क्योंकि रास्ता फिसलन भरा था। दो-चार दिन पहले गिरी बर्फ़ पर पैर फिसलने लगता है। ताज़ी बर्फ़ भुरभुरी

थी। पैर को आहिस्ता से अपने में समेट लेती थी।

फौजी ने बताया कि यह सभी ट्रक लेकर हम सियाचिन जा रहे हैं। जो चाइना बॉर्डर पर है। वहाँ माइनस 45 से 60 तक तापमान हो जाता है। इन ट्रकों में 6 महीने की रसद भरी है। मैंने मन ही मन उन्हें सलाम किया। देश की रक्षा करते ये जवान जमा देने वाली ठंड में दुनिया के सुखों से वंचित रहते हैं।

जब ट्रक चले गए तब हम भी लेह की ओर रवाना हुए। होटल में लौट कर थोड़ा सुस्ता कर हम बाज़ार घूमने गए। छोटा सा बाज़ार, तिब्बती बाज़ार अलग। ऐसा कुछ भी नहीं था जो आकर्षित करता। अधिकतर गर्म कपड़े और ख़ूबानियाँ बिक रही थीं। कुछ स्कूली लड़कियों को देख कर मन खुश हो गया। सिलेटी फ्रॉक, सलवार, लालकोट। शायद यहाँ की यूनिफार्म थी।

लद्दाख के विषय में अधिक जानकारी के लिए मैंने होटल के मालिक निसार से संपर्क किया। उन्होंने अपने केबिन में मुझे सम्मान पूर्वक बैठाया और यह जानकर कि मैं पत्रकार और लेखिका हूँ वे बहुत चाव से हमें जानकारी देने लगे।

''सबसे पहले तो मैं यह बता दूँ कि लद्दाख का अर्थ है दर्रों की घाटी। यहाँ दर्रे यानी पास बहुत अधिक हैं। इसीलिए इसका नाम लद्दाख पड़ा। उत्तर में काराकोरम और दक्षिण में हिमालय रेंजेज से घिरा लद्दाख विश्व के सबसे ऊँचे प्रदेशों में से एक है। यहाँ नुन, कुन, वाइट नीडल, पिनेकल, जेड वन चोटियाँ हैं। जो समुद्र सतह से हज़ारों फीट ऊँची हैं।नुब्रा घाटी में ऊँटों पर सवारी की जाती है। सीजन के समय वहाँ पर्यटकों की भीड़ रहती है। अच्छा हुआ आप नहीं गई। इस वक्त तो वहाँ ऊँट भी नहीं मिलते। वैसे नुब्रा से काराकोरम की सभी चोटियाँ, पेड़-पौधे, ग्लेशियर देख सकते हैं। अद्भुत पर्वतीय सौंदर्य और बौद्ध संस्कृति से पूर्ण लद्दाख को लिटिल तिब्बत भी कहते हैं। बौद्ध धर्म के अलावा यहाँ तिब्बती संस्कृति भी है। लेह लद्दाख की राजधानी है जो समुद्र सतह से 3505 मीटर ऊँचाई पर स्थित है। जिसके पूर्व में जम्मू-कश्मीर है।

पूरे लद्दाख में साल भर में 90 मिलीमीटर वर्षा होती है। आप यहाँ तक आई है तो कुल्लू मनाली भी घूम लें। मनाली यहाँ से 473 किलोमीटर है। भारी हिमपात में यह रास्ता बंद हो जाता है। लेह में अक्सर फिल्मों की शूटिंग होती है। फिल्मी यूनिट से होटल भरे रहते हैं। ''

''यहाँ के आदिवासी क्या कल्चरड हो गए हैं ?''

''हाँ अब वैसे नहीं रहे जैसे आज से 20-25 साल पहले रहा करते थे। यहाँ के आदिवासी नॉमेट्स कहलाते हैं जो खरनक गाँव में रहते हैं। पहले इनके तंबू यॉक के बालों से बने होते थे। अब उनके घर आधे ज़मीन के अंदर आधे ऊपर होते हैं। जैसे उत्तरी ध्रुव में बर्फ़ के होते हैं। ये पश्मीना ऊन वाली भेड़ें यॉक और बकरियाँ पालते हैं। हर पशमीना भेड़ से 200 ग्राम पशमीना बनता है। जिनसे वैभव की प्रतीक पशमीना शॉल बनाई जाती है। अब तो ये हिन्दी भी बोलने लगे हैं और शहरी तौर तरीके को अपनाने लगे हैं।''

''और जनजाति?''

''दाह और बियामा गाँव में मूल आर्य नस्ल के डूकृपा जनजाति के लोग रहते हैं। बड़ा कठिन जीवन है इन धरती पुत्रों का।''

निसार से बातचीत करना अच्छा लग रहा था लेकिन हमारे पास समय नहीं था। सुबह लेह से दिल्ली 9:00 बजे की फ्लाइट थी। सामान पैक करना था और ठंड बढ़ती जा रही थी। लिहाजा निसार को अलविदा कहना पड़ा।

सुबह 8:00 बजे एयरपोर्ट केबीआर पहुँच गए। केबीआर तिब्बती गुरु कुशोबा बाकुला रिंपोचे हैं। उन्हीं के नाम से इस एयरपोर्ट को पहचाना जाता है। शार्ट में केबीआर एयरपोर्ट कहते हैं। हवाई जहाज़ में बैठते ही मैंने खिड़की के शीशे के उस पार लेह के बर्फ़ीले पर्वत देखे। विदा लेह। ये पाँच दिन मेरी यादों में अद्भुत दिनों के रूप में बसे रहेंगे।

***

शादी.....मेरी गुड्डी की

शशि पाधा

उस दिन अमेरिका की एक बड़ी सी मॉल के एक बड़े से स्टोर में अपनी तीन वर्षीय पोती आर्या के साथ गई थी। इस देश का यह नामी स्टोर था--अमेरिकन डॉल। आर्या का जन्मदिन आने वाला था और मैं उसे उसकी पसंद की गुड़िया भेंट में देने की सोच रही थी। एक कोने से दूसरे कोने तक, फर्श से छत तक शीशे की अलमारियों में विभिन्न पश्चिमी पोशाकों में सुंदर-सुंदर गुड़ियाँ सजी हुई थीं। भूरे बाल, सुनहरी बाल, लाल बाल, स्कर्ट, ऑफ़िस ड्रेस, लम्बी ड्रेस--इतनी सारी गुड़ियाँ ! क्यूँ नहीं पसंद कर लेती हूँ मैं उनमें से एक। मैं कब से अपने से प्रश्न कर रही थी। लेकिन कैसे ख़रीदती? मैं तो वहाँ थी ही नहीं। मैं तो उम्र की कई सीढ़ियाँ उतर कर, कई पगडंडियाँ पार कर के पहुँच गई थी अपने बचपन वाले घर में और खेल रही थी अपनी गुड़िया के साथ।

ना...ना... ना। मेरी गुड़िया बिलकुल ऐसी नहीं थी जैसी मैं आज इतने बड़े-भव्य स्टोर में देख रही थी। मेरी गुड़िया तो बहुत सादी सी थी। शायद इसलिए कि उसे बनाती थी मेरी सादी सी दादी अपने हाथ से। और दादी जैसी मुझे देखना चाहती थी वैसी ही तो गुड़िया भी बनाती थी। सफ़ेद पॉपलीन या लट्ठे के झकझक कपड़े को काट कर गुड़िया की नन्हीं सी देह बनती थी। उसे सी कर अपने हाथों से दादी उसमें रुई के फ़ाहे भरती जाती थी। लो जी, गुड़िया तो बन गई लेकिन अभी बहुत सी कारीगिरी बाकी थी। काले रंग के धागे से बनती थी उसकी आँखें, भवें। लाल रंग के धागे से बनते थे नन्हें से होंठ और फिर काले रंग की ऊन से बनते थे उसके लहराते हुए बाल। और फिर लाल रंग से माथे पर बिंदिया, हाथ-पाँव के नाखून। मैं बड़े चाव से यह सब देखती रहती थी। गुड़िया लेने की हड़बड़ी में जब दादी से माँगती तो वो हल्का सा डाँट कर कह देती, ''ऐसे थोड़ी दूँगी।'' कल इसके कपड़े बनेंगे, गहने बनेंगे। जा अब सो जा। मैं सो जाती थी लेकिन सपने लेती थी अपनी नन्हीं गुड़िया के।

सुबह उठती तो मेरी प्यारी सी गुड़िया की तीन पोशाकें तैयार। अब कुछ-कुछ याद आता है कि दादी पास वाले दर्जी मामा की दूकान पर राजू भैया को भेज कर कपड़ों की बची हुई कतरन मंगवा के रखती थी। उसी से बनते थे गुड़िया के कपड़े। एक बार मेरे मामा हरिद्वार से मेरी गुड़िया के लिए छोटी सी खटोली, लकड़ी से बने गुड़िया की रसोई के बर्तन और छोटा सा शृंगार का बक्सा भी ले आए थे। मैंने यह सारे चीज़ें सँभाल के रखी थीं। माँ को देखा था न जीजी के लिए दहेज का सामान इकट्ठा करते। मैं भी बिलकुल वैसे ही सामान सँभालती रहती। मेरे मामा एक बार राजस्थान गए थे। वहाँ से घर में विराजमान ठाकुर जी के लिए हार आदि आए थे। मेरी गुड़िया के लिए भी जड़ाऊ सेट आया था। पतली सी नथ भी थी। सब सामान तैयार तो कमी थी तो दूल्हे को ढूँढ़ने की।

Shashi Padha, 10804, Sunset hills Rd, Reston Virginia 20190
मोबाइल: 203-589-6668
ईमेल: shashipadha@gmail.com

हाँ, अब कुछ याद आता है। दादी तीन घर छोड़ कर सत्तू मौसी के घर, उनकी बिटिया रानो के गुड्डे के साथ मेरी गुड्डी का रिश्ता भी पक्का कर आई थी। दादी ने ही तुलसी माता के विवाह के दिन मेरी गुड्डी के विवाह का मुहूर्त भी निकाल लिया। तुलसी माता की लाल चुनरी पर पीली किनारी लग रही थी और मेरी गुड़िया का विवाह का जोड़ा भी तैयार हो रहा था। तुलसी चबूतरे पर मैया को सजाया जा रहा था और मैं अपनी गुड़िया को गहने- कपड़ों से सजाने में लगी रही।

विवाह ऐसे थोड़ी न हो जाता है ? कितनी तैयारी करनी पड़ती है। मैंने अपनी सारी सहेलियों को दोपहर को छत पर आने का न्योता दे दिया। बस रानो को नहीं दिया क्यूँकि वो तो अपने गुड्डे की बारात लेकर आएगी न। घर की छत पर दो चारपाइयाँ खड़ी करके उन पर चादर डाल दी। इस तरह हमारा शादी का हॉल तैयार हो गया। पिछले सप्ताह मोहल्ले में एक शादी हुई थी। राजू भैया के पास उस शादी की कागज़ की रंग बिरंगी झंडियाँ रखी थी। उन्होंने बड़े चाव से चारपाइयों के इर्द-गिर्द वो झंडियाँ बाँध दीं। लो जी पूरी तैयारी हो गई।

रानो और उसकी दो चचेरी बहनें अपने गुड्डे को एक कश्मीरी टोकरी में बिठा कर लाईं। आनन-फानन में उसने किनारी और मोतियों से उसका सेहरा भी बना लिया था। हमने गुड्डे की अगवानी की और फिर शुरू हो गया मेरी गुड्डी और रानो के गुड्डे का विवाह। मन्त्र तो ज़्यादा आते नहीं थे, हमने माता की भेंटे ही गाईं, पुष्पवर्षा की और शुभमुहूर्त में शादी संपन्न हो गई। कुछ खाने की चीज़ें दादी ने नीचे से भिजवा दी थी, सो प्रीति भोज भी हो गया।

रानो मेरे से आयु में बड़ी थी। उसे रीति रिवाज़ ज़्यादा आते थे। शाम होने से पहले कहने लगी, ''गुड्डी! (मेरा घर का नाम) अब यह गुड्डी मेरी है। मैं इसे इसी टोकरी में डाल कर ले जाऊँगी।''

हे मेरे प्रभु ! यह तो मैंने सोचा ही नहीं था कि गुड्डी की विदाई भी होगी। मैंने झट से अपने गुड्डी उठा ली और कहा, ''ना, ना। मैं अपनी गुड्डी तो नहीं दूँगी। मैं इसके बिना किससे खेलूँगी?'' और मैं ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

एक तरफ़ रानो की ज़िद और दूसरी तरफ मेरा रोना। हम दोनों थोड़े झगड़ भी पड़े। अब बीच बचाव भी दादी ने ही किया। आकर बोलीं, ''अभी ले जाने दे, एक घंटे में तुलसी विवाह के समय हम अपनी गुड्डी को लिवा लाएँगे और फिर कुछ दिन हमारे पास ही रहेगी।''

मैंने सोचा, देखा तो ऐसे ही है। लड़कियाँ ससुराल जाती हैं और फिर माँ के घर भी आ जाती हैं। रोते हुए मैंने अपनी गुड्डी को विदा किया। विदा क्या किया, खुद ही उसकी टोकरी उठा कर रानों के दरवाज़े तक चली आई। दो तीन बार उससे कहा,''जल्दी आना, नहीं तो तेरी-मेरी कुट्टी।'' और मैंने अपने दाहिनें हाथ के अँगूठे को दाँत तले दबा दिया। पूरा नहीं दबाया, नहीं तो कुट्टी हो जाती तो शायद रानो मेरी गुड्डी कभी नहीं लौटाती। तुलसी का विवाह हुआ, मेरी गुड़िया भी लौट आई। और मैं इतनी खुश कि मानों मैंने कितना बड़ा कारज निभा लिया था।

उम्र की जो सीढ़ियाँ उतर कर मैं अपने बचपन में लौट गई थी। अब जीवन के इस पड़ाव पर जिस धरातल पर मैं खड़ी थी वहाँ मेरे शहर, मेरे देश जैसी गुड्डी ढूँढ़ना तो कठिन था। लेकिन जैसा देश वैसा खेल.....। यहाँ कहाँ मिलेगी वो गुड्डी जो मैं सात समन्दर पार साथ कई साल पहले ही छोड़ आई थी। मन को समझाया और मैं आर्या को उसकी पसंद की गुड़िया दिलवा के घर आ गई।

लेकिन मेरे मन मस्तिष्क में तो मेरे बचपन में गुड्डे-गुड्डी की शादी की स्मृतियाँ मुझे सोने नहीं दे रही थीं। मैं अपने से ही तर्क करती रही, गुड़िया तो यहाँ भी बिकती हैं और उनके साथ खेलने का कितना सामान भी मिलता है। पर आज तक मैंने अमेरिका में किसी गुड़िया की शादी जैसा कोई खेल नहीं देखा था। क्या यहाँ यह सांस्कृतिक परम्परा नहीं है ? इस विषय में जानने की बहुत उत्सुकता हुई।

उस शाम मैंने अपनी 13 वर्ष की पोती सौम्या से पूछा, ''सोमी ! आपके पास इतनी बार्बी गुड़िया हैं, क्या आपने कभी अपनी गुड़िया की शादी की बात सोची ?'' सोमी ने हैरानी से मेरी और देखा। शायद सोचा होगा कि दादी क्या अजीब सी बात पूछ रही है। जब मेरी उत्सुकता का समाधान नहीं हुआ तो मैंने बात को सीधा पूछा, ''क्या यहाँ बार्बी का कोई दोस्त भी है खिलौनों की दूकान में ? I mean does Barbi doll has a boyfriend ? जिसके साथ बार्बी शादी करना चाहती हो।''

ऐसा इसलिए पूछा क्यूँकि हर अमेरिकन लड़की का कोई न कोई दोस्त होता है। पहले यह युवा डेट करते हैं फिर शादी का फैसला।

अब हँसने की बारी सोमी की थी। कुछ सोच के बोली, ''नो! नो! यहाँ ऐसा नहीं होता है। कोई अपनी बार्बी की शादी नहीं रचाता। पर हाँ दादी ! बार्बी का एक love interest है। उसका नाम है 'केन'। कई बार स्टोर में बार्बी और केन की जोड़ी भी बिकती है। बस दोनों दोस्त हैं।'' बात तो साधारण सी थी पर मेरे गले नहीं उतर रही थी। भई मैंने भी मान लिया कि जैसा देश, वैसी ही इनकी संस्कृति और रीति-रिवाज़। और फिर समय के साथ हर समाज में भी तो परिवर्तन आता है। चिंता मुझे केवल इस बात की सता रही थी कि क्या भारत में भी यह खेल प्रथा जीवित है कि लुप्त हो गई है। सोचा कल किसी को फ़ोन करके पूछूँगी। पूछा तो पता चला कि भारत में भी अब लड़कियाँ गुड्डी-गुड्डे की शादी नहीं रचाती। आज जो 30 वर्ष की आयु से ऊपर की लड़कियाँ हैं, बस उन्होंने ही यह खेल रचाया था। उसके बाद लड़कियों के खेल बदल गए। वे गुड्डियों से खेलती अवश्य हैं पर उनकी गुड़िया शादी-ब्याह के बंधन में नहीं बंधती।

रात भर मैं अपनी गुड्डी के विवाह के सपने ही लेती रही। इतना सुंदर खेल और वो भी अतीत की गर्त में कहीं गुम हो गया। पता नहीं दोष किसको दूँ। सुबह तक मैंने एक दृढ़ निर्णय ले लिया था। सोमी तो अब बड़ी हो गई है, मेरी बात पर हँसेगी। लेकिन मैं अपनी तीन वर्ष की पोती आर्या की गुड्डी का विवाह रचाऊँगी। दूल्हा भी ढूँढ़ लूँगी। ठीक वैसे ही जैसे आज से साठ वर्ष पहले मेरी दादी ने रचाया था.... और मैं मन ही मन शादी की तैयारियाँ करने लगी।

आप सब भी आना आर्या की गुड़िया की शादी पर।

***

राम की शक्ति पूजा

महाकवि निराला

नाट्य रूपांतरण : डॉ. कुमार संजय

राम की शक्ति पूजा महाकवि निराला की श्रेष्ठतम रचनाओं में से एक है। यह 312 पंक्तियों की एक लंबी कविता है। इस अनूठी कविता की रचना उन्होंने 1936 में की थी। इसके सृजन के 8 दशक से ज़्यादा हो चुके हैं। 8 दशक के बाद अब यह रचना यूनिवर्सिटी के क्लासों और चंद जागरूक साहित्य प्रेमियों तक सिमट कर रह गई है।

मेरा प्रयास है, इस कालजयी रचना को सहज, सरल भाषा में आम पाठकों और दर्शकों तक पहुँचाना। मेरी समझ में इसे समझने, आम पाठकों-दर्शकों तक पहुँचाने में नाटक काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसलिए मैंने नृत्य नाटिका का सहारा लिया है।

कुछ जगह निरालाजी की पंक्तियाँ ज्यों की त्यों ली गई हैं, कुछ जगह मैंने नरेशन का सहारा लिया है और कुछ जगह बोलचाल वाले संवादों का। हर नाटक की एक समय-सीमा होनी चाहिए। आज के समय में एक से डेढ़ घंटे का नाटक सबके लिए सुविधाजनक होता है। इससे बड़ा नाटक आम दर्शक देखना पसंद नहीं करते। इस नृत्य नाटिका को लगभग सवा घंटे में खेला जा सकता है।

मैंने कविता के मूल मंत्र पर पूर्ण रूप से ध्यान देते हुए वे सारे प्रसंग लिए हैं जो नाटक को नाटकीय बनाने और गति प्रदान करने के लिए ज़रूरी हैं। उन पंक्तियों/प्रसंगों को छोड़ा भी है जो नाटक को नाटकीय दृष्टिकोण से बड़ा और बोझिल बना सकते थे।

कथानक

यह कविता राम-रावण युद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखी गई है। आज के युद्ध में अपने प्रदर्शन से राम बिलकुल संतुष्ट नहीं हैं। वे अचूक निशाना लगाने में असफल रहे हैं। रावण उनके सभी बाणों को काटने में सफल रहा है। इससे राम और उनकी सेना बहुत खिन्न और मायूस है। राम, सीता को हर हाल में रावण की क़ैद से मुक्त कराना चाहते हैं, लेकिन आज के युद्ध से उन्हें लगने लगता है कि वह यह युद्ध जीत नहीं पाएँगे। इसका कारण वह अपने सहयोगियों को बताते हुए कहते हैं कि साक्षात् शक्ति माँ दुर्गा आज रावण के पक्ष में लड़ रही थीं। जब शक्ति रावण के पक्ष में हैं तो उनके जीतने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस बात पर जाम्बवान उन्हें एक अच्छी सलाह देते हैं। वे कहते हैं कि उन्हें भी रावण की तरह शक्ति की पूजा-अराधना करनी चाहिए। श्री राम इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेते हैं। वह हनुमान से 108 कमल के फूल लाने का अनुरोध करते हैं ताकि वे शक्ति की अराधना कर सकें। जब उनकी पूजा अंतिम चरण में रहती है तो शक्ति (माँ दुर्गा) उनका अंतिम फूल चुरा लेती हैं। वह श्री राम की परीक्षा लेना चाहती हैं। श्री राम बहुत निराश हो जाते हैं। लेकिन फिर उन्हें एक उपाय नज़र आता है। वह विभीषण से कहते हैं कि उनकी माँ उन्हें कमल नयन कहा करती थीं। वह खोए हुए कमल के स्थान पर अपना एक नयन देवी को अर्पित कर देंगे। जैसे ही वह देवी को अपनी आँख चढ़ाने को होते हैं, देवी प्रकट होती हैं। वह उन्हें आँख दान देने से रोक देती हैं। देवी प्रसन्न हो श्री राम को विजयी होने का आशीर्वाद देती हैं और राम के शरीर में विलीन हो जाती हैं।

डॉ. कुमार संजय, स्पेनिन, हेसल, रातू रोड
रांची - 834005 झारखंड
मोबाइल : 9939361988
ईमेल : spenin@rediffmail.com

राम की शक्ति पूजा

नाट्य रूपांतरण

(मंच पर अँधेरा। युद्धसूचक संगीत। संगीत के बीच दो अलग-अलग सेनाओं के नारे गूँजते हैं।)

सेना 1 : श्री रामचंद्र की जय। (कई बार)

सेना 2 : लंकापति रावण की जय। (कई बार)

(संगीत के बीच दो सूत्रधारों का प्रवेश। प्रकाश दोनों सूत्रधारों पर केंद्रित।

बाद में यही सूत्रधार नैरेटर 1 और नैरेटर 2 की भूमिका निभाते हैं।)

सूत्रधार 1: युद्ध चल रहा है - भंयकर युद्ध। राम और रावण का महायुद्ध। प्रत्यंचा से प्रतिक्षण अगणित बाण छूट रहे हैं। तीक्ष्ण बाणों की झड़ी लगी हुई है। उनकी भीषण ध्वनि से नीला आकाश गूँज रहा है। सेनाओं की व्यूह रचना होती है, और शत्रुओं द्वारा उसका खण्डन हो जाता है।

सूत्रधार 2 : आज का तीक्ष्ण शरविधृत क्षिप्रकर, वेगप्रखर, शतशेल सम्वरणशील, नील-नभ गर्जित स्वर, प्रतिपल परिवर्तित व्यूह भेद कौशल-समूह, राक्षस विरूद्ध प्रत्यूह, क्रुद्ध कपि विषम हूह।

सूत्रधार 1 : एक ओर राम की सेना है - लक्ष्मण, सुग्रीव, अंगद, जाम्बवान, नल-नील के नेतृत्व में वानरों और भालूओं की सेना है, दूसरी ओर रावण की विशाल राक्षसी सेना। दोनों ओर के वीर अपना पराक्रम दिखा रहे हैं, कोई पीछे हटने के लिए तैयार नहीं।

(युद्ध की ध्वनियाँ तेज़ होती जाती हैं और मंच अँधेरे में डूब जाता है ।)

नैरेटर 1 : (पार्श्व से आवाज़) आज का युद्ध अन्य दिनों से भिन्न है। भिन्न इसलिए कि राम जैसे निपुण धनुर्धर के अचूक निशाने एक के बाद एक विफल हो रहे हैं। उनके सभी बाण लक्ष्यभ्रष्ट हो रहे हैं। राजीव-नयन राम की आँखों से चिनगारियाँ फूट रही हैं, वे रावण के मद का विनाश करना चाहते हैं, लेकिन लंकापति रावण आज उनके सभी बाणों को अपने कौशल से काटता जा रहा है- राम के बाणों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। विश्व को भी जीत लेने वाले दिव्य बाण आज स्वयं खंडित हो रहे हैं। उद्धत रावण राम की सेना को ध्वस्त करता जा रहा है। रावण का अट्टाहास।

(मंच पर तेज़ होता प्रकाश पार्श्व गायन/पाठन के बीच राम का अपने मुख्य अनुचरों के साथ प्रवेश। नृत्य।)

विच्छुरित-वह्नि-राजीवनयन-हत-लक्ष्य-बाण, लोहित-लोचन-रावण-मदमोचन-महीयान, राघव-लाघव-रावण-वारण-गत-युग्म-प्रहर, उद्धत-लंकापति-मर्दित-कपि-दल-बल-विस्तर, अनिमेष-राम-विश्वजिद्दिव्य-शर-भंग-भाव,-विद्धांग-बद्ध-कोदण्ड-मुष्टि-खर-रुधिर-स्त्राव.....

(मंच पर अँधेरा। प्रकाश वृत्त सूत्रधार 1 और 2 पर केंद्रित।)

सूत्रधार 1: रवि हुआ अस्त, ज्योति के पत्र पर लिखा अमर रह गया राम-रावण का अपराजेय समय आज का।

सूत्रधार 2 : रवि अस्त हो गया है। युद्ध अनिर्णीत रह गया है, लेकिन आज के युद्ध में रावण अधिक शक्तिशाली साबित हुआ है। इसीलिए तो युद्ध-क्षेत्र से लौटती हुई राक्षस सेना उमंग-उल्लास से भरी हुई है- उसकी जयध्वनि से आकाश गूँजता है, चलने से धरती काँपती है।

(नेपथ्य से रावण की सेना की कई बार आवाज़-लंकापति महाबली रावण की जय)

(क्षण भर के लिए मंच पर अँधेरा।)

(प्रकाश आने पर एक तरफ से रावण की सेना रावण के साथ बहुत जोश-उल्लास के साथ प्रवेश करती है।)

नेपथ्य से कविता के ये बोल सुनाई देते हैं- लौटे युग-दल। राक्षस-पद-तल पृथ्वी टलमल, बिंध महोल्लास से बार-बार आकाश विकल।

(लंकापति महाबली रावण की जय (कई बार) रावण की सेना दूसरी तरफ से निकल जाती है।)

(मंच पर पुन: अँधेरा।)

नैरेटर 1 : (अँधेरे से नैरेटर 1 की आवाज़) - वानर सेना खिन्न मन से राम और लक्ष्मण के पीछे-पीछे चल रही है। राम के धनुष की प्रत्यंचा आज ढीली पड़ गई है, जटा-मुकुट अस्त-व्यस्त हो गया है।

(मंच पर प्रकाश। राम की सेना धीमी, हतोत्साहित सी इन पंक्तियों पर नृत्य करते प्रवेश करती है।)

नेपथ्य से कविता के बोल - वानर-वाहिनी खिन्न, लख निज-पति-चरण-चिह्न चल रही शिविर की ओर स्थविरदल ज्यों विभिन्न प्रशमित है वातावरण, नमित-मुखसान्ध्य कमल लक्ष्मण चिन्ता-पल पीछे वानर-वीर सकल, रघुनायक आगे अवनी पर नवनीत चरण, भलध धनु-गुण है, कटि-बन्ध त्रस्त-तूणीर-धरण दृढ़ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त, प्रतिलट से खुल फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल।

(मंच धीरे-धीरे अँधेरे में डूबता है।)

नैरेटर 2 : (नेपथ्य से) रात्रि ने सभी को अपने आंलिगन में ले लिया है। वातावरण शांत है, लेकिन पीछे समुद्र गर्जन कर रहा है।

(समुद्र गर्जन की ध्वनि। हल्की रोशनी में नर्तकों का समूह धीमी रफ़्तार में नृत्य करता प्रवेश करता है।)

नेपथ्य से कविता की इन पंक्तियों का गायन सुनाई पड़ता है- है अमा-निशा, उगलता गगन घन अंधकार, खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन-चार, अप्रतिहत गरज रहा पीछे, अम्बुधि विशाल, भूधर ज्यों ध्यान-मग्न, केवल जलती मशाल।

(मंच अँधेरे में डूब जाता है।)

(मंच पर प्रकाश।)

नेपथ्य से गाने की आवाज़ - आए सब शिविर, सानु पर पर्वत के, मन्थर, सुग्रीव, विभीषण, जाम्बवान आदिक वानर, सेनापति दल विशेष के, अंगद, हनुमान, नल-नील, गवाक्ष, प्रात के रण का समाधान करने के लिए, फेर वानर-दल आश्रम स्थल।

(मंच पर बहुत हल्की रोशनी।)

नैरेटर 1 : रात्रि के अंधकार में राम और उनके सेनापतियों की सभा विचार-विमर्श के लिए बैठी है।

(राम-लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण, जाम्बवान, नल-नील, गवाक्ष के साथ विचार विमर्श करते दिखाई देते हैं। हनुमान राम के चरण धोने के लिए जल लेकर आते हैं।)

विभीषण : रघुवीर, आप चिन्तित क्यों हैं इस तरह आज?

राम : मित्रवर विभीषण, तुमने देखा नहीं आज का विकट युद्ध?

विभीषण : देखा मैंने। ऐसा अप्रत्याशित युद्ध नहीं हमने पहले देखा था। रावण-प्रहार था दुर्निवार, था विकल सकल वानर-दल और भल्लूक-सैन्य, क्रम- क्रम से मूर्च्छित

हुए सभी सुग्रीवांगद-भीषण-गवाक्ष-गय-नल वारित-सौमित्र-भल्लपति। हम सबके सब थे क्षुब्ध त्रस्त।

राम : तब भी तुम मुझसे पूछ रहे, क्यों चिन्तित हूँ?

विभीषण : हाँ, राघवेन्द्र की चिन्ता यह कल्पनातीत।

राम : चिन्ता का यही विषय है मेरे बन्धु। कल्पनातीत तो था, है वही आज हो गया सत्य। आज तक मेरा लक्ष्य कभी नहीं चूका था, आज तक मेरे बाण लक्ष्यभ्रष्ट नहीं हुए थे, आज तक विफलता नहीं मिली थी मेरे लक्ष्य-वेध को, लेकिन आज देखा तुमने, मेरे लक्ष्य विफल रहे, रावण मेरे बाणों को काटता, मुस्कुराता हँसता रहा। उसकी हँसी अभी भी भेद रही है मेरे मन को। रावण के अट्टहास की आवाज़।

सुग्रीव : अब क्या होगा?

राम : यही तो सोचना है। कल का युद्ध कैसे होगा? कैसे हम जीतेंगे? बार-बार मन में आशंका यही होती है- रावण यदि जीत गया। जो मन कभी किसी शत्रु के सामने नहीं झुका, नहीं हारा, वह, जाने क्यों, रावण की जय से आशंकित है।

(रावण की क्रूर हँसी की आवाज़।)

जाम्बवान : यह क्या कह रहे हैं आप, हे रघुवीर? अपने को असमर्थ मान लेना उचित नहीं।

राम : मैं क्या करूँ? मेरे मन्त्रपूत दिव्य शर जब विफल हो जाते हैं, शत्रु पर आघात नहीं कर पाते, तब मैं क्या करूँ? मेरा वश नहीं चलता, लगता है, सचमुच ही मैं असमर्थ हूँ।

विभीषण : ऐसा मत कहो श्री रघुवीर! हार मान लोगे जब तुम्हीं, तब जनक नंदिनी का क्या होगा? रावण की निर्मम कारा से उन्हें कौन मुक्त करेगा?

राम : सच कहते हो बन्धु, सीता को मुझे मुक्त करना है, लेकिन मैं क्या करूँ?

(कुछ देर की स्तब्धता।)

विभीषण : क्या सोचने लगे बंधु?

राम : सोचूँगा क्या? जनकनन्दिनी की स्मृतियाँ आती हैं। काल की लहरों पर तैरता हुआ मेरा मन, जाने क्यों, अतीत की ओर चला जाता है।

(मंच अँधेरे में डूब जाता है। मंच पर हल्की रोशनी।)

नैरेटर 1 : अचानक राम को सीता की याद आ जाती है। आए भी क्यों न, यह सारा युद्ध जनकनन्दिनी को क्रूर रावण की कारा से मुक्त कराने के लिए ही तो लड़ा जा रहा है। उन्हें याद आता है वैदेही से वह प्रथम मिलन, जानकी की प्रथम छवि, उस पल का रोमांच।

(फ्लैश बैक। मंच पर प्रकाश। जनकपुर का उद्यान। राम और सीता का प्रवेश। नृत्य। नेपथ्य से गायन।)

प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन नयनों का,-नयनों से-प्रिय सम्भाषण,- पलकों का नवपलकों पर प्रथमोत्थान-पतन,- काँपते हुए किसलय, झरने पराग-समुदय,- गाते खग नव जीवन-परिचय, तरू मलय-वलय,- ज्योति-प्रताप स्वर्गीय, ज्ञात छवि प्रथम स्वीय,- जनकी-नयन-कमनीय-प्रथम कम्पन तुरीय।

(मंच पर अँधेरा। नेपथ्य से विभीषण की आवाज़ - बन्धुवर रघुवीर, भुजाएँ तुम्हारी क्यों एकाएक फड़क उठीं? हल्की हँसी के साथ राम की आवाज़ - धनुभंग की स्मृतियाँ सजग हो आई हैं।)

(पार्श्व से गायन, राम का नृत्य। सिहरा तन, क्षण भर भूला मन, लहरा समस्त, हर धनुर्भंग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त, फूटी स्मिति सीता ध्यानलीन राम के अधर, फिर विश्व विजय भावना हृदय में आयी भर, वे आये याद दिव्य शर अगणित मन्त्रपूत, फड़का पर नभ को उड़े सकल ज्यों देवदूत।)

(मंच पर अँधेरा। नेपथ्य से नैरेटर 2 की आवाज़ - जहाँ सीता की स्मृति राम के हृदय को विह्वल करती है, वहीं आज का अनिर्णीत युद्ध राम को विचलित कर रहा है। हमेशा धीर-गंभीर रहने वाले राम, हर स्थिति में संयम रखने वाले राम, आत्मविश्वास के प्रतिरूप श्री राम आज अस्थिर हैं, विचलित हैं, आशंकित हैं।)

(मंच पर रोशनी। राम अपने सेनापतियों के साथ नज़र आते हैं, साथ में विभीषण भी हैं।)

राम : मैं क्या करूँ बन्धुओं, मुझे सीता को कारा से मुक्त करना है! लेकिन, आज का अनिर्णीत युद्ध मुझे चिंतित कर देता है। आज मैंने रण में देखी वह भीम मूर्ति जिसने आच्छादित कर रखा था समग्र नभ को। मेरे सब ज्योतिर्मय अस्त्र बुझ-बुझ कर हुए क्षीण, था महानिलय, उस तन में क्षण में हुए लीन। सुन रहा अभी मैं रावण का वह अट्टहास। क्या करूँ आह?

(नेपथ्य से रावण का अट्टहास।)

विभीषण : हे सखा, नहीं चिंतित होने का यह क्षण है। मुख-मलिन तुम्हारा आज बहुत अवसाद ग्रस्त। भल्लूक और वानर-दल सब हैं इसे देख कर क्षुब्ध, विकल। रघुवीर, तीर सब वही तूण में हैं रक्षित, है वही वक्ष, रण-कुशल-हस्त, बल वही अमित, हैं वही सुमित्रानंदन मेघनादजित रण, हैं वही भल्लपति, वानरेन्द्र सुग्रीव प्रमन, ताराकुमार भी वही महाबल भवेत धीर, अप्रतिभट वही एक अर्बुद-सम महावीर, हैं वही दक्ष सेनानायक, है वही समर, फिर कैसे असमय हुआ उदय यह भाव-प्रहर?

राम : आज का युद्ध देख कर देख अपने खंडित हुए भार!

विभीषण : रघुकुल-गौरव, लघु हुए जा रहे तुम इस क्षण, तुम फेर रहे हो पीठ, हो रहा हो जब जय रण। कितना श्रम हुआ व्यर्थ, आया जब मिलन-समय, तुम खींच रहे हो हस्त जानकी से निर्दय।

राम : तुम ही बताओ बंधु, मैं क्या करूँ, कैसे पार पाऊँ दुष्ट रावण से?

विभीषण : रावण? रावण-लम्पट, खल, कल्मष-गताचार, जिसने हित कहते किया मुझे पाद-प्रहार। बन्धुवर, करेगा क्या वह, यह तुम नहीं सोचते? बैठा उपवन में देगा दुख सीता को फिर, कहता रण की जयकथा पारिषद-दल से घिर, सुनता वसन्त में उपवन में कल-कूजित पिक, मैं बना किन्तु लंकापति, धिक् राघव, धिक्, धिक्?

राम : है ज्ञात मुझे, वह दुष्ट करेगा क्या, लेकिन, लेकिन क्या करूँ भला? काश, तुम समझते, स्थिति क्या है! रावण अकेला नहीं, उस पर किसकी कृपा है!

विभीषण : तुम यह क्या कह रहे हो बंधु?

राम : जो ज्ञात हो रहा मुझे सत्य। यह नहीं रहा नर-वानर का, राक्षस का रण, हैं महाशक्ति उतरी पा रावण आमंत्रण। अन्याय जिधर, हैं उधर शक्ति।

सभी : (चौंककर एक साथ) क्या? क्या कहा प्रभु आपने?

राम : है यही सत्य। हैं साथ दे रही

महाशक्ति खल रावण का। बस इससे ही तो बार-बार मैं हुआ विकल। मैं समझ नहीं पाता, यह दैवी विधान, रावण अधमर्रत भी, अपना, मैं हुआ अपर, यह रहा शक्ति का खेल समर, शंकर, शंकर!

सुग्रीव : आश्चर्य!

विभीषण : यह सब हम क्या सुन रहे आज?

जाम्बवान : सच में यह तो बड़ी चिन्ताजनक बात!

अंगद : क्या युद्ध क्षेत्र में आज सत्य ही महाशक्ति आईं थीं?

नल : क्या आज उन्होंने रावण की रक्षा की है?

राम : बन्धुओं, यही आश्चर्य का विषय है सम्मुख। इस समर भूमि में मैंने स्वयं इन्हीं आँखों देखा उनका मुख। देखा है महाशक्ति रावण को लिए अंक, लांछन को ले जैसे शशांक नभ में अशंक, हत मन्त्र पूत शर सम्वृत करतीं वार-वार, निष्फल होते लक्ष्य पर क्षिप्र वार पर वार।

जाम्बवान : रघुवर, अब क्या होगा?

राम : है यही प्रश्न, लगता है, अब मैं जीत नहीं पाऊँगा यह दुर्घष समर! तुम ही कुछ कहो बन्धु जाम्बवान। संकट के इस क्षण में हम क्या करें? कैसे जीतें हम यह समर? कैसे बचे जनक-नन्दिनी के प्राण?

जाम्बवान : आज्ञा हो रघुवर, तो मैं कुछ कहूँ?

राम : कहो बन्धु।

जाम्बवान : विचलित होने का नहीं देखता मैं कारण। हे पुरुषसिंह, तुम भी यह शक्ति करो धारण, आराधन का आराधन से दो उत्तर, तुम वरो विजय संयत प्राणों से प्राणों पर।

राम : आराधन को उत्तर दूँ आराधन से? मैं महाशक्ति को फेर सकूँगा पूजन से?

जाम्बवान : क्यों नहीं? रावण अशुद्ध हो कर भी यदि कर सकता त्रस्त, तो निश्चय तुम हो सिद्ध, करोगे उसे ध्वस्त, शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन, छोड़ दो समर जब तक न सिद्ध हो, रघुनंदन!

राम : छोड़ दूँ समर? क्या कह रहे हो बंधुवर- तब तक क्या होगा? शत्रु का आक्रमण कौन सहेगा?

जाम्बवान : तब तक लक्ष्मण हैं महावाहिनी के नायक, मध्य मार्ग में अंगद, दक्षिण-श्वेत सहायक मैं, भल्ल-सैन्य, हैं वाम पार्श्व में हनुमान, नल, नील और छोटे कपिगण-उनके प्रधान, सुग्रीव, विभीषण, अन्य यूथपति यथासमय आएँगे रक्षा-हेतु जहाँ भी होगा भय।

समवेत : साधु! साधु!

राम : उत्तम विचार, उत्तम निश्चय यह, भल्लनाथ!

विभीषण : स्वीकार करें श्री जाम्बवान का परामर्श, जानकीनाथ!

राम : स्वीकार मुझे। आराधन का आराधन से दूँगा उत्तर। मैं अपनी भक्ति करूँगा अर्पित महाशक्ति के चरणों पर। मेरी समस्त श्रद्धा चरणों में है अर्पित। मात:, दशभुजा, विश्वज्योति, मैं हूँ आश्रित, हो विद्ध शक्ति से है खल महिषासुर मर्दित, जनरंजन-चरण-कमल-तल-धन्य.... सिंह गर्जित। यह, यह मेरा प्रतीक मात: समझा इंगित, मैं सिंह, इसी भाव से करूँगा अभिनन्दित।

समवेत : साधु! साधु!

राम : प्रारम्भ करूँगा कल प्रात: मैं अनुष्ठान। माता के चरणों पर रख दूँगा भक्ति-दान। प्रिय हनुमान।

हनुमान : आज्ञा हो प्रभु!

राम : चाहिए हमें एक सौ आठ, कपि, इन्दीवर, कम-से-कम, अधिक और हों, अधिक और सुन्दर। जाओ देवीदह, उष:काल होते सत्वर तोड़ो, लाओ वे कमल, लौट कर लड़ो समर।

हनुमान : आज्ञा शिरोधार्य!

(मंच पर अँधेरा। सुबह का दृश्य। नैरेटर 1 की आवाज़ के साथ नर्तक दल का प्रवेश। नृत्य।)

नैरेटर 1 : निशि हुई विगत, नभ के ललाट पर प्रथम किरण फूटी, रघुनन्दन के दृग महिमा-ज्योति-हिरण, है नहीं शरासन आज हस्त, तूणीर स्कन्ध, वह नहीं सोहता निविड़-जटा-दृढ़-मुकुट-बन्ध!

(मंच पर अँधेरा। प्रकाश वृत्त श्री राम पर केंद्रित। राम पूजा में मग्न दिखाई पड़ते हैं।)

नैरेटर 2 : पूजा के आसन पर बैठे हैं रघुनंदन, हैं ध्यानमग्न, कर रहे शक्ति का आराधन।

(पार्श्व से युद्ध की ध्वनि।)

नैरेटर 1 : सुन पड़ता है सिंहनाद, रण-कोलाहल अपार, उमड़ता नहीं मन, स्तब्ध सुधी हैं ध्यान-धार। पूजोपरान्त जपते दुर्गा-दशभुजा नाम, मन करते हुए मनन नामों के गुण-ग्राम बीता वह दिवस, हुआ मन स्थिर इष्ट के चरण गहन-से-गहनतर होने लगा समाराधन।

(समय बीतने की व्यंजना करनेवाला संगीत। नैरेटर 1 की आवाज़ के साथ नर्तक दल का प्रवेश। नृत्य। राम पर बहुत हल्का प्रकाश। प्रकाश नर्तक दल पर केंद्रित।)

नैरेटर 1 : क्रम- क्रम से हुए पार राघव के पंचदिवस, चक्र से चक्र मन चढ़ता गया ऊर्ध्व निरलस। कर जप पूजा कर एक चढ़ाते इन्दीवर, निज पुरश्चरण इस भाँति रहे हैं पूरा कर।

(प्रकाश वृत्त पुन: राम पर केंद्रित।)

राम : सर्व स्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते भयेभ्यस्त्राहि नो देवि, दुर्गे देवि नमोऽस्तुते।

(नैरेटर 2 की आवाज के साथ पुन: नर्तक दल का प्रवेश। नृत्य।)

नैरेटर 2 : चढ़ षष्ठ दिवस आज्ञा पर हुआ समाहित मन, प्रति जप से खिंच-खिंच होने लगा महाकर्षण। संचित त्रिकुटी पर ध्यान, द्विदल देवी-पद पर, जप के स्वर लगा काँपने थर-थर-थर अम्बर।

(मंच पर अँधेरा। धीरे-धीरे प्रकाश वृत्त देवी-शक्ति की देवी पर केंद्रित । प्रश्न के अनुरूप अभिनय।)

स्वर : (नेपथ्य से) महाशक्ति, महादेवि!

शक्ति : कौन? कौन हो तुम?

स्वर : आपका सेवक हूँ देवी। एक जिज्ञासा है मन में। अनुमति हो तो पूछूँ।

शक्ति : कहो।

स्वर : इस गहन रात्रि की बेला में आप कहाँ जा रही हैं?

शक्ति : राम की परीक्षा लेने।

स्वर : राम की परीक्षा?

शक्ति : मेरा आराधन कर रहा है वह। रावण वध के निमित्त कठिन अनुष्ठान किया है उसने। देखना है मुझे, उसकी श्रद्धा और भक्ति में कितने त्याग की क्षमता है।

स्वर : अभी, इस रात्रि-बेला में आप जाएँगी?

शक्ति : हाँ, अनुष्ठान समापन पर है, जाने का यह सबसे उचित समय है।

(मंच पर अँधेरा। प्रकाश वृत्त पहली बार

राम पर केंद्रित होता है और दूसरी बार नर्तक दल पर।)

राम : सर्व स्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते भयेभ्यस्त्राहि नो देवि, दुर्गे देवि नमोऽस्तुते।

(नैरेटर 1 की आवाज़ के साथ नर्तक दल का प्रवेश। नृत्य।)

नैरेटर 1 : दो दिन नि:स्पन्द एक आसन पर रहे राम, अर्पित करते इन्दीवर जपते हुए नाम। आठवाँ दिवस मन ध्यानयुक्त चढ़ता ऊपर कर गया अतिक्रम ब्रह्मा-हरि-शंकर का स्तर, हो गया विजित ब्रह्मांड पूर्ण, देवता स्तब्ध, हो गये दग्ध जीवन के तप के समारब्ध, रह गया एक इन्दीवर, मन देखता पार, प्राय: करने हुआ दुर्ग जो सहस्त्रार।

(हल्का प्रकाश। नर्तक दल का प्रस्थान।)

नैरेटर 2 : द्विपहर रात्रि, साकार हुई दुर्गा छिप कर, हँस उठा ले गई पूजा का प्रिय इन्दीवर।

(क्षण भर के लिए मंच पर अँधेरा। प्रकाश होने पर राम अपने पूजा स्थल पर बहुत चिंतित नज़र आते हैं। पास ही विभीषण खड़े हैं।)

विभीषण : क्या हुआ बन्धु? देवी की अराधना करते-करते अचानक इतने चिंतित क्यों?

राम : पूजा का अंतिम नीलकमल, जाने कौन ले गया!

विभीषण : कहाँ रखा था वह?

राम : सभी कमल यहीं थे, सभी चढ़ चुके, यही एक शेष था, मैंने इसे यहीं रखा था। जाने कौन ले गया, पूजा का अन्तिम नीलकमल।

विभीषण : यहाँ कोई आया तो नहीं था?

राम : नहीं। यही तो आश्चर्य है, लगता है, विधि ही प्रतिकूल है। लगता है, पूजा यह अधूरी रह जाएगी।

विभीषण : सच, यह तो बहुत आश्चर्य की बात है। अब क्या होगा? अब क्या होगा बंधु?

राम : मैं क्या कहूँ? धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध, धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध। जानकी, हाय उद्धार प्रिया का हो न सका।

विभीषण : हम क्या करें? कोई उपाय, कोई तो उपाय होगा?

राम : सचमुच ही क्या आज हुआ मैं निरुपाय? नहीं, नहीं, मैं देख रहा, यह है उपाय।

विभीषण : क्या है उपाय?

राम : कहती थी माता मुझे राजीव नयन। दो नील-कमल हैं शेष अभी, यह पुरश्चरण पूरा करता हूँ देकर मात एक नयन।

विभीषण : क्या कह रहे हो बन्धु? कर दोगे अपना कमल-नयन देवी के चरणों में अर्पित?

राम : दूसरा नहीं कोई उपाय। प्रिय बन्धु विभीषण, ले आओ तूणीर-कोश से ब्रह्म-बाण।

विभीषण : जैसी आज्ञा। (क्षणभर बाद) मैं ले आया। यह लो रघुवर।

राम : दक्षिण लोचन निकाल कर अर्पित कर दूँगा।

विभीषण : क्षण भर रुकना, मैं नहीं सकूँगा देख।

(विभीषण का प्रस्थान। तेज़ प्रकाश और संगीत। संगीत के बाद शांति।)

शक्ति : बस, बहुत हुआ, लोचन अर्पण का नहीं काम। साधना तुम्हारी सिद्ध, धन्य हो, धन्य राम!

राम : किसने मेरे कर पकड़ लिये?

शक्ति : मैंने।

राम : मैं देख रहा अपने सम्मुख दुर्गा, शस्वर वामपद असुर-स्कंध पर, रहा दक्षिण हरि पर, ज्योतिर्मय रूप, हस्त दश विविध अस्त्र-सज्जित, मन्द स्मित-मुख, लख हुई विश्व की श्री लज्जित। हैं दक्षिण में लक्ष्मी, सरस्वती वाम-भाग, दक्षिण गणेश, कार्तिक बाएँ रणरंग-राग। मात:, तुमने दे दिए मुझे पावन दर्शन, मैं हुआ धन्य, हो गया धन्य सारा जीवन। आशीष मुझे दो मात: मुझको मिले विजय। शंका मिट जाए, मन हो जाए नि:संशय।

शक्ति : साधना-वीर राजीव-नयन, तुम नहीं रहे आज तनिक दीन, होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन।

(मंच अँधेरे में डूब जाता है। अँधेरे से नैरेटर 1 और नैरेटर 2 की आवाज़ गूँजती है-होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन -कह महाशक्ति, राम के बदन में हुई लीन। मधुर संगीत के साथ नाटक का समापन।)

***

ग़ज़ल

नज़्म सुभाष की ग़ज़लें

फैसले, जज - वकील जाने हैं
कुछ गवाहों को भी कमाने हैं
हम तो उलझे हैं साँप सीढ़ी में
हरतरफ़ मौत के ठिकाने हैं
आदमी, आदमी को पहचाने
इसलिए ही शराबखाने हैं
फासले भी क़रीब आ जाएँ
हमको रिश्ते अगर निभाने हैं
ज़िन्दगी अश्क-अश्क पीनी है
बेकली, दर्द, ग़म, फ़साने हैं
वो रिआया भला कहेगी क्या
ठौर जिसके ग़रीबखाने हैं
'ओढ़ता धूप की रजाई मैं'
मुफ़्लिसी के ग़ज़ब बहाने हैं

***

मौसम का अनुमान लगाए बैठे हैं
जो सूखे में धान लगाए बैठे हैं
बारिश के आसार समझने की खातिर
जर्जर छप्पर कान लगाए बैठे हैं
टीस रहा है परती खेतों का मंज़र
'बीजगणित' में जान लगाए बैठे हैं
मँहगाई पर झिकझिक हाटों में उनसे
जो सस्ता सामान लगाए बैठे हैं
जलक्रीड़ा की ख़्वाहिश लेकिन डरती मीन
सारे बगुले ध्यान लगाए बैठे हैं
अच्छे दिन पर चर्चा है नामुकिन तो
दिन भर पाकिस्तान लगाए बैठे हैं
'नज़्म' भला अब उनसे मिलने क्या जाएँ
जो छूरे पर सान लगाए बैठे हैं

***

नज़्म सुभाष, 346/केसी -208 कनकसिटी
आलमनगर लखनऊ-226017
मोबाइल: 6394894504
ईमेल: nazmsubhash97@gmail.com

कविताएँ

प्रमोद त्रिवेदी की कविताएँ

दो चश्में

दो चश्में हो गए हैं अब लाज़मी
और यही अब-मेरी मुसीबत।

तुम्हें देखता हूँ तो पढ़ नहीं पाता तुम्हें
और बिना पढ़े बहुत कुछ छूट जाता है।
तुम्हारी हँसी कितनी दर्शनीय,
पता है
जानता हूँ, कितने पाठ निर्मित होते हैं इसके
पर अभी तो देखने चश्मा चढ़ा है आँखों पर।

एक चश्मा हटाओ और दूसरा चढ़ाओ
इस बीच कितना कुछ गुज़र जाता है।
और उसकी भरपाई संभव ही नहीं

आँखें सही थीं जब, सब आसान था।
कविता की आमद भी।
दो चश्मों ने बहुत-सी अवांछित मुसीबतें
खड़ी कर दीं।
अधूरा मैंने कुछ भी ग्रहण नहीं किया,
न कविता को- न उसके मर्म को।
गलत चश्मों का धुँधलापन कर देता है-
दो में विभाजित मुझे।
एक बार में मैं कुछ भी पूरा नहीं पा सकता
और अनर्थ में भटकता रहता हूँ!

कभी एक ही चश्मा काफी था पूरा पाने के
लिए
उम्र के खेल हैं ये सारे
उम्र इसी तरह अपने खेल खेलती है।
कभी चश्में की ज़रूरत नहीं थी
देखता हूँ-
दो चश्में भी कब तक साथ निभाते
***

किताबें

किताबों को कभी अकेली मत होने देना।
अकेली हो कर
ये अपनी भाषा भूल जाएँगी।
अपनी भाषा भूली तो
ये हो जाएँगी-कबाड़।
आतुर हैं ये,
तुम्हें अपना दोस्त बनाने को,
इनका भरोसा कभी न तोड़ना

पुस्तकें यदि सरस्वती हैं
तो तय करो
इनकी जगह कहाँ है।
कितनी हैं इनकी अहमियत
इनके साथ चलो।
खोलो खिड़कियाँ
कुछ ख़यालों-
हवा के ताज़े झोंके दाखिल होने दो।

भरोसा करो
इनकी संगत में तुम्हारा कद कुछ ऊँचा हो
जाएगा
किताबें काग़ज पर कलम का करिशमा भर
नहीं है
छैनी-हथोड़ी की कुशल चोटें भी हैं
ये तुम्हें तराशेंगी
और अपनी ही नज़रों में बेहतर नज़र
आओगे।
किताबों ने समय को आकार दिया
अब ये तुम्हें सँवारने को आतुर हैं।
***

चोर- सिपाही का खेल

चोर -सिपाही का खेल आज भी जारी है
हमारे बचपन में कोई एक चोर होता था
और सिपाही बहुतेरे।
अब चोर-सिपाही में फर्क करना कठिन
मुश्किल यह कि -
सिपाही ही शक कर रहा सिपाही पर !
सार खेल उलट गया।
चोर कह रहा- ''पकड़ो-पकड़ो''!

चोर कर रहा है सवाल सिपाही से
और उसके सवालों से सिपाही-
बेदम!!!
सिपाही -सोच रहा -बेहतर होगा,
अलग ढंग से खेला जाए
अब यह खेल
और चोर पकड़ने की ज़िम्मेदारी,
चोर को ही दे दी जाए।
***

प्रार्थना

चलो,
जल के लिए प्रार्थना करें।
करें, जल के जीवन के लिए।
हवा की सेहत के लिए प्रार्थना करें
और प्रार्थना को समर्पित हो जाएँ।
प्रेम के लिए ज़रूर प्रार्थना करें
यही इन दिनों सर्वाधिक संकट में
अपनी प्रिय धरती के लिए भी प्रार्थना करें
जो विकल है
अपनी नदियों के लिए
हवा के लिए,
कलरव के लिए
अण्डों में पल रहें पखेरुओं, के लिए
साँसों के लिए
प्रार्थना करें।
आओ!
सब की प्रार्थनाओं में
अपनी प्रार्थना को शामिल करें।
बेहतर भविष्य के लिए
हम खुद प्रार्थना हो जाएँ।
***

प्रमोद त्रिवेदी, मन्वन्तर, 205, सेठी नगर,
उज्जैन, मध्यप्रदेश
फ़ोन : 0734-2516832

शिफाली पांडेय की कविताएँ

इच्छाएँ

अपनी ही चमक से ऊबा सूरज अब रात में
निकलना चाहता है
चाँद को धूप सेंकने की ज़िद है
नदी करना चाहती है किनारे से निबाह
सड़कें ठहरने को बेताब हैं
कि इत्मीनान में बैठें
बन जाएँ मील का पत्थर
दोपहर लंबी शाम होना चाहती हैं
रात होना चाहती हैं गुनगुनी सुबह
सिंदूर में रंगी लड़की
आसमानी रंग होना चाहती है....
***

परिक्रमा

पर्वत पर चढ़ना कठिन नहीं होता
मुश्किल नहीं होता
धीरे-धीरे एक समतल पथ पर
सदियों का सफर तय कर लेना
कठिन है तो केवल परिक्रमा
सूर्य के चारों तरफ घूमती पृथ्वी
भी तो कभी ऊबती होगी
और खुद से पूछती होगी
कहाँ से कहाँ पहुँची
कोई पूछ ही ले
तो क्या बताऊँगी
कि ये परिक्रमा ना मेरी मर्ज़ी का पथ है
ना मेरी प्रार्थना
ना प्रेम की डोर कोई
पर इस परिक्रमा से ही ऊगने हैं दिन
डूबनी हैं रातें
कि सुस्ताने ठहर गई
तो साँसें थम जाएँगी...
***

विदा का गीत

उदासियों को लाँघकर आई है वो
उस मोड़ तक जहाँ अभी-अभी नींद ने
करवट बदली है
उस राह तक
जहाँ रुंधे गले से रेगिस्तान लिख रहा है
पानी की कहानी
उन पर्बतों की छाती से गुज़रकर आई है
जहाँ बीती बरसात
फूटा अंकुर
इस झुलसाती जेठ में मुरझा गया है
वो आई है सारे कीमती पत्थर लौटाने
इतने सालों में बूँद-बूँद जो उसकी
अँजूरी में जमा हुए थे
वो विदा का गीत गाने आई है
आई है शोक का उत्सव मनाने
कहीं पढ़ा था उसने
जीवन के नृत्य का चरमोत्कर्ष है मृत्यु
***

वो चाँद कोई और है

उन अलसाती दोपहरों में जब
दिन शाम से मिलने को बैचेन होता था
जब तपती छतों का घर
आम की छाँव में सोता था
हाँ उन्हीं छुट्टी वाले कैद के आज़ाद दिनों में
पुलिया के उस पार से फर्राटा भरती
एक आवाज़ आती
एक आवाज़ मोहल्ले की जाने कितनी
सोलह पार लड़कियों का दिल धड़काती
दीवाना बनातीं,
तय वक्त
और खिड़कियों पर झूल जाती लड़कियाँ
प्यार में मदहोश होतीं
मुस्कुराती लड़कियाँ
जानती थीं सबके हिस्से में
कहाँ आएगा वो
जानती थीं
कल कहीं फिर और उड़ जाएगा वो
जानती थी सब
मुकद्दर का लिखा कुछ और है
जो हथेली में बसा
वो चाँद कोई और है
***

प्रेम

सड़क से तुम गुज़र रहे थे
और मैं फिर भी खिड़की पर नहीं आई थी
बरसात से भीगी मिट्टी में
चाहते हुए भी नहीं लिक्खा जब तुम्हारा नाम
दिल की आहट को अनसुना कर
जब छोड़ दिया पलटकर देखना
कागज़ पर अधूरे ही छोड़
दिए थे वो सारे ख़याल जो पूरे हो जाते तो
तो मुकम्मिल हो जानी थी एक कहानी
यकीन करो,
बेरुख़ी के उन्हीं लम्हों में
उपजा था प्रेम कहीं.....
***

वो एक चेहरा

सड़कें कभी करती होंगी
उस राहगीर का भी ज़िक्र
जिसने अपनी आधी उम्र
तय वक्त से उस सड़क को नापते गुज़ारी
और फिर उस राह से तोड़ ली यारी....
सड़कों के किनारे
रोज़ सुबह मुस्कुराती दुकानें
पूछती होंगी क्या
कि कई दिनों से सुबह में क्यों दर्ज नहीं
वो एक चेहरा
दफ़्तर की सीढ़ियों को
क्या होता होगा मलाल
कि इन सीढ़ियों से गुज़रने वाले
एक जोड़ी पैर कहाँ गुम हो गए .....
आसमान के माथे पर भी
आती होंगी क्या सिलवटें...
कि उसे उम्मीद से तकने वाली
आँखों ने मुँह मोड़ लिया है....
उस बरगद को भी आती होगी
क्या कभी हिचकी,
जिस बरगद पर बाँधकर निकली थी वो
अपनी आख़िरी ख्वाहिश
तसव्वुर हैं सारे....
बस, उस रोज़ के लिए....
जब सिसकी बन कर आएँगे
दरिया में बहाए जाएँगें....
***

ईमेल: shefalispandey@gmail.com

रेखा भाटिया की कविताएँ

मुखौटा

क्यों न भगवान् एक मुखौटा मुझे पहनाया,
दुनियादारी का वो नकली मुखौटा,
क्यों जुदा रखा मुझे स्वार्थी लोगों से,
क्यों तूने मुझे नि:स्वार्थ बनाया !

जब करते लोग चतुराई,
धोखा देकर भी मुस्कराते,
दुहाई देते यह है दुनियादारी,
मैं कुछ भी समझ न पाती !

खिलाफ जब मैं आवाज़ उठाती,
उलटे मुँह की खाती दुत्कारी जाती,
बदले में दबाव व्यवहारिकता का,
माफ़ी माँगों उनसे जो हैं स्वार्थी !

कैसी है यह व्यवहारिकता दुनियादारी की,
ऊपर हज़ार नासियतें तुम भी बदलो,
सीखो कूटनीति जिस पर टिकी है दुनिया,
स्वार्थी सफल हैं जाँबाज़ इस जहान के !

सुनती यही मैं क्या हूँ सच की बस पीपली,
अच्छाई -बुराई की लड़ाई में वक्त गवाँती,
हर बार, बार-बार यही ताना-उलाहना,
मशाल जला सच की लड़ने खड़े हो जाती !

सुनता कौन है मेरी स्वार्थियों की फ़ौज में,
डर लगता है भगवान् किस पर विश्वास करूँ,
कुछ रिश्ते-नाते दोस्ती प्यार अपनेपन के,
अचानक ही बदल पराए कैसे हो जाते !

मैं तोड़ना चाहूँ फिर भी तोड़ ना पाऊँ,
मज़बूर किया जाता मोहबंधन के बोझ तले,
बनावटी मूल्यों के समाज में फरेबी मानक,
हृदय चीखता चिल्लाता मैं भी सही हूँ।

सुनो भगवान् क्यों न एक मुखौटा मुझे पहनाया,
दुनियादारी का वो नकली मुखौटा,
दर्द मेरा भी कुछ कम हो जाता,
निडर कपटी शेर बन झूठमूठ मुस्कराती !

अभिव्यक्ति की आज़ादी क्या गुनाह है मेरा,
मैं क्या शिकायत करूँ समझती भी हूँ,
दुनिया बदल रही है मायानगरी में,
सौदेबाजी तुमसे भी करते हैं !

***

पूछा करो अपना हाल

पूछना चाहते हो हालचाल,
मनाकर नारी दिवस एक दिन,
शर्मिंदा हो, किया अपमान,
शर्मिंदा तुम नहीं मैं हूँ !

मैं नारी सुनती सदियों से,
बहुधा वही बेबसी का बहाना,
रीति -रिवाज, समाज सब खोखले,
देवी मूर्ति में, समाज में कहाँ !

पुरुष मन सदा बौराया,
पुरुषार्थ पर अहम् का साया,
आग्रह, अनुग्रह से अनजान,
सहस्त्र होते तुम्हारे संस्कारों में !

पिघल जाती मैं उस तपन में,
वाष्प, धुंध, वर्षा की बूँद बन,
रंग-संग तुम्हारे बहती जाती,
निराकार निच्छल निशब्द !

सदियों से यही करती आई,
सती, सीता, द्रौपदी, मीरा,
संस्कारों को सहेजते समझते,
आत्मा मरने लगी अब मेरी !

छत, दीवारें, गली, चौबारे,
हृदय के सारे चौराहे,
सब हुए हैं अब लहूलुहान,
किन्तु कब तक चुप बैठूँगी !

अश्रु भीतर दबाव बनाते,
शून्य में खामोश मुस्कान,
स्वरध्वनि श्वासनली घुटती,
अदम्य दु:साहस देखो तुम्हारा !

महज माँस का छिछड़ा,
क्या यही मायने हैं स्त्री के,
नव जीवन सृजन करती जो,
प्राण मुझमें भी हैं बसते !

पढ़-लिख घर बाहर सँभालूँ,
सुनीता बन अंतरिक्ष जीत लूँ,
पिछड़ा समाज कितना है बदला,
निर्भया कांड पर रोक कहाँ !

तुम सपूत निष्ठावान् कहलाते,
राम-कृष्ण बन सदियों पूजे जाते,
अर्द्धनारीश्वर का आधा मैं,
अपहरण, हरण मेरा ही क्यों !

आज मस्तिष्क ने मुझे चौंकाया,
चेताया चलो दृढ़ आगे बढ़ो,
सम्पूर्ण स्त्रीत्व बोध जगाओ,
पूर्णता देवी शक्ति से अभिभूत !

शर्मिंदा तुम नहीं पुरुष, मैं हूँ नारी,
क्यों न पूछा अब तक अपना हाल,
देवी शक्ति मूर्ति से निकल बाहर,
तीन सौ पैंसठ नारी दिवस मना।

***

मोबाइल: 704-975-4898
ईमेल: rekhabhatia@hotmail.com

लेखकों से अनुरोध

सभी सम्माननीय लेखकों से संपादक मंडल का विनम्र अनुरोध है कि पत्रिका में प्रकाशन हेतु केवल अपनी मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। वह रचनाएँ जो सोशल मीडिया के किसी मंच जैसे फ़ेसबुक, व्हाट्सएप आदि पर प्रकाशित हो चुकी हैं, उन्हें पत्रिका में प्रकाशन हेतु नहीं भेजें। इस प्रकार की रचनाओं को हम प्रकाशित नहीं करेंगे।

-सादर संपादक मंडल

सुमित चौधरी की कविताएँ

एक सैनिक की प्रेम परिभाषा

हे ! साथी
चलो अपनी-अपनी बंदूकों के ट्रिगर से
अँगुली हटाकर
क्षण भर सोचें
अपने बीते हुए दिनों के बारे में
भले ही हमारा भूगोल अलग-अलग है

सुनों मेरे साथी
तुम भी तनिक चैन की साँस लो
माथा पोंछो
और अपने घर की ओर ध्यान दो
महसूसों अपनी माँ की गोद में रख दिया है सर
बीबी ने पल्लू से पोंछते हुए पसीना
पूछने लगी हो हाल ख़बर
बच्चे आकर लोट गए हों गोद में
बहन आँखें भिगो ली हो कई सालों बाद
बूढ़ा बाप समझ गया हो
आ गया है मेरे बुढ़ापे का लाठी
कुछ इसी तरह का मैं भी सोच रहा हूँ
आँखें नम सी हो गई हैं
यह सोचकर कि हम युद्ध क्यों करते हैं
जब प्रेम ही दुनिया का सच्चा साथी,
संबंधी है
तो हमनें क्यूँ दागी है
एक दूसरे पर गोलियाँ
क्यों बहाया है
एक-दूजे मुल्क़ का खून

हे ! साथी
चलो एक बात और सोचें
जब हम यह कह रहे हैं
कि दुनिया में प्रेम से ही
अमन कायम किया जा सकता है
तो इन हथियारों को क्यों नहीं छोड़ देते
खिलौना समझ कर
इन सरहदों को क्यों नहीं मिटा देते घरौंदा
समझ कर
हम क्यों नहीं सोचते
हमनें क्यों उठाई है बंदूक
पेट की ख़ातिर या प्रेम की ख़ातिर

इसलिए चलो साथी
अपने-अपने देश प्रेम की परिभाषा से
अपने-अपने मुल्क़ की रक्षा करें
जिससे हमारा मुल्क़
हमें गद्दार न घोषित कर दे
यही क्षण भर का समय
जो जी लिया है हमनें
सुन ली है एक-दूजे की बातें
जिसे हम प्रेम कहते हैं
जिसे हम छोड़ जाएँगे
पूरी दुनिया की ख़ातिर।

***

दो प्रेमी युगल

एक

दो प्रेमी युगल
इशारों इशारों में बात कर रहे हैं
और आपस में कह रहे हैं
सड़क के बीचों बीच
दिन हो या रात
हत्या अपराध मामूली सी चीज़ हो गई है
अलबत्ता इसकी कोई करता है भर्त्सना
जबकि प्रेमी युगलों को देख बिचक जाता है मुँह
क्रूर हो जाते हैं सभी हत्यारे
मलीन हो जाती है उनकी सभ्यता
जिसमें बहता है रक्त का दरिया

तुम जानती हो
मैं तुम्हारा नाम भी नहीं ले सकता
इस जहाँ में
ऐसा नहीं है कि मैं नहीं पुकार सकता तुमको
तुम्हारे नाम से
बशर्ते मैं चाहता हूँ कि तुम महफ़ूज़ रहो
जिससे हम मिल सकें हर समय
अनजान बनकर
तुम सोच रही होगी कि
मैं कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहा हूँ
तुम सोचो और सोचना भी चाहिए
क्योंकि जब हम नहीं बचेंगे इस दुर्दम दुनिया में
तो कौन रहेगा यहाँ
हत्या अपराध के जगह प्रेम भरने को
नन्हें पौधों को सहेजने को
इसलिए मैं सोचता हूँ
कि हम कहाँ मिले
सड़क किनारे या पार्क में
कहाँ बैठकर हम दो टूक बातें करें प्रेम से
कहाँ बैठकर हम देखें दुनिया को खूबसूरत बनते हुए
कहाँ बैठकर हम देखें हत्या अपराध को प्रेम में लौटते हुए
कहाँ बैठकर हम देखें या धस जाएँ धरती के भीतर
फिर भी मुर्दहिया घाट के लोग
हमें कुछ-कुछ बोलेंगे
मन ही मन बुझा हुआ रक्त घोलेंगे।

***

मेरा गाँव

मेरा गाँव
मुझे नहीं भूलता
जब भी जाता हूँ
अपने गाँव तो भींच लेता है
अपनी बाँहों में
मेरा गाँव अनजान सा नहीं लगता
नहीं लगता
शहर के बगल वाले मकान की तरह विरान
मेरे गाँव में
कुछ पेड़ अब भी हैं
जो हो गए हैं बूढ़े
लेकिन भूले नहीं हैं आदमियत
वे झूम जाते हैं मुझे देखकर
और बिखेर देते हैं पत्ते
मेरे पाँव तले।

***

सुमित चौधरी, कमरा नं. 236 झेलम हॉस्टल, शोधार्थी-जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110067
मोबाइल: 9654829861
ईमेल: sumitchaudhar4825@gmail.com

सुमित दहिया की कविताएँ

कविता-पहला कागज़

वो पहला कागज़ मुझे आज तक नहीं मिला
जिस पर मैंने सबसे पहले कुछ लिखा था
ना वो उम्र मिली, जिस उम्र में लिखा था
ना वो हाथ मिले, जिन हाथों से लिखा था
अभी तक वो भाव,
वो मनोदशा भी नहीं मिली
जिनमें वह लिखा गया होगा।
शायद वह कागज़ था ही नही
वह स्लेट या तख्ती हो सकती है
जिस पर मैंने
अपना पहला अक्षर लिखा होगा
अपने लड़खड़ाते हाथों से बनाई होगी
कोई चित्रात्मक भाषा
और बाद में हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था ने
अपनी समझदारी के डस्टर से,
उस निष्कपटता को हमेशा के लिए मिटा दिया होगा।
***

अनुभवों की आयु

जब तुम्हारे अनुभव युवा अवस्था में थे
तब तुम स्वयं को विश्वव्यापी समझते थे
तुम्हारे से श्रेष्ठ बुद्धिजीवी खोजना
कठिन था
तुम महामानवों की कतार के
अंतिम वारिस थे
तुम्हें सदैव यह भ्रम रहा कि तुम एक महान् चुनौती हो
फिर तुम्हारे अनुभव कुछ उम्रदराज हुए
और वास्तविक सत्य से तुम्हारा आमना-सामना हुआ
तब कहीं जाकर तुम्हें यह एहसास हुआ
कि तुम श्रेष्ठता की सभा के आख़िरी संभावित नाम हो
अभी तुम्हें कई जन्मों का फ़ासला और तय करना है
अब जबकि तुम्हारे अनुभव
अपने अन्तिम पड़ाव में है
अंधविश्वास टूटकर
श्रद्धा में रूपांतरित हो रहा है
अचानक वह विचार उभरा है जो जोश के नीचे दबा था
कि तुम अभी सर्वश्रेष्ठ की कल्पना से भी मीलों दूर हो।
***

फेसबुक

दुनिया में
दो सौ करोड़ से अधिक लोग जुड़े है
इस फेसबुक से,
यह केवल लोगों की संख्या है
फिर उनके द्वारा डाले जाते है
अनगिनत विचार
और सोचिए
इन विचारों का केंद्र कहाँ होता है
क्या हृदय में,मस्तिष्क में,नाभि में,
कहाँ है केंद्र, शायद सभी केंद्रों पर
एक विचार विराजमान है
या फिर प्रत्येक विचार का
अपना अलग केंद्र है
इन सभी केंद्रों पर स्थित अनेकों विचारों से
छनकर उभरता है वह विचार
जिसमें मिलावट करके बढ़ा देते है आगे
किसी धार लगे हुए हथियार की भाँति होती है, प्रॉसेसिंग
हमने एक विशालकाय, 'अंतरराष्ट्रीय डंपिंग ग्राउंड' तैयार किया है
जिसमें हमारे द्वारा बेहिसाब 'डिजिटल कचरा'
ऑनलाइन डेटा के माध्यम से प्रतिदिन डाला जाता है।
***

सुमित दहिया, हाउस न.7 सी, मिस्ट होम सोसाइटी, हाइलैंड मार्ग, एयरफोर्स स्टेशन के पास, जीरकपुर, मोहाली ,पंजाब - 140603, मोबाइल : 9896351814
ईमेल :
dahiyasumitdahiya1814@gmail.com

अमृत वाधवा की कविता

अमेरिका की शरद ऋतु

ग्रीष्म ऋतु को अलविदा कहता
अँगड़ाई लेता, करवट पलटता
शरद का मौसम एक त्योहार
इसके हर रंग में बस गए
जीवन के सब तार....

ठंडी-ठंडी हवा के झौंके
बहते, सरकते, कहकहे भरते
तपिश से तपते तन मन का करार
इनके हर स्पर्श से मिलता
जीवन को निखार....

इस राह से उस राह
जिस राह मैं गुज़र जाऊँ
हरे, पीले, लाल, केसरी रंगों की है बारात
ओस की ठंडी बूँदे
जैसे अमृत की बरसात.....

उड़ते हुए रंग बिरंगे पत्तों ने
मेरे कान में हलके से कुछ कहा
कह दी छोटी प्यारी सी बात
पतझड़ अंत नहीं,
है एक नई सुनहरी शुरूआत.....

कल नई कोंपले आएँगी
नई सुबह लाएँगी, नए रंग बिखराएँगी
नए वादे निभाएँगी, नया संसार बनाएँगी
यह है प्रकृति की सुंदर सौगात
***

Amrit Wadhwa, 402, Magnolia Birch Ct, Cary, NC- 27519, SA
मोबाइल: 919-414-5494
ईमेल: amrit.wadhwa@gmail.com

सुप्रीता झा की कविताएँ

रास्ता हूँ मैं...

रास्ता हूँ मैं सब देखता हूँ मैं,
सब देखता हूँ मैं!

मेरा कहीं घरबार नहीं,
ना कोई ठिकाना कहीं,
छोड़ता हूँ मंज़िल तक सबको,
अपना है बस काम यही !

हर तरफ़ मैं हूँ खड़ा,
सब देखता हूँ मैं,
सुख-दुःख में सबके शामिल हूँ मैं,
बारिश में, धूप में, रंग में, रूप में,
दिन में, रात में, तन्हाई में, साथ में,
ज़िन्दगी और मौत में,
प्यार हो, लड़ाई हो,
मैं सबका गवाह हूँ,
सहारा देता हूँ सबको,
फिर भी बेपनाह हूँ!

रास्ता हूँ मैं सब देखता हूँ मैं,
सब देखता हूँ मैं!

मेरे पहलू में होती हैं
बच्चों की अठखेलियाँ,
मुझसे ही होकर गुज़रती हैं,
नवविवाहितों की डोलियाँ,
मैं ही तो ले जाता हूँ
शवों को श्मशान तक,
मेरे बिना किसी का वजूद नहीं,
जो मैं नहीं तो राही नहीं, मंज़िल नहीं!
रास्ता हूँ मैं सब देखता हूँ मैं
सब देखता हूँ मैं!

यूँ अचरज से ना देख मुझे,
मत हँस मुझ पर,
बेजान नहीं मैं,
गर होती न जान तो कैसे कर पाता,
निर्वहन सबका आदि से अंत तक!

रास्ता हूँ मैं सब देखता हूँ मैं
सब देखता हूँ मैं!
***

वक्त का हिसाब दो...

वे कहते हैं मुझसे डरो
मैं जो कहूँ वो ही करो

प्रश्न मत पूछो कभी
हर बात को स्वीकार लो

मेरे बिना जी पाओगी?
बस ठोकरें ही खाओगी

तुम जन्म से नापाक हो
सब के लिए अभिशाप हो

अदब से यूँ चला करो
हिसाब से झुका करो

नारी हो तुम हया रखो
सबके लिए दया रखो

दुनियाँ बड़ी ख़राब है
नज़रें नीची रखा करो

पुरुषों से क्या मुक़ाबला
औकात में रहा करो

कहाँ थी इतनी देर तक
वक्त का हिसाब दो

मैं काम से लौटूँ तो तुम
घर में मुझे दिखा करो

बहस नहीं किया करो
बात को समझा करो

ताले रखो ज़ुबान पर
तहज़ीब से रहा करो

कुछ और तो करती नहीं
इतना तो तुम किया करो

सबके लिए जीती रहो
सबके लिए मरती रहो

सुनती रहो सहती रहो
करती रहो करती रहो॥
***

नैनों के दायरे

ये दो नैनों के दायरे
कहने को परिमित होते हैं,
पर देखा जाए तो इनमें
संसार ये सारा बसता है,

प्रिये तुम बसते हो इनमें
अरमान ये सारा बसता है
साँसों की डोरी बसती है
और प्राण हमारा बसता है

ये दो नैनों के दायरे
कहने को परिमित होते हैं
पर देखा जाए तो इनमें
संसार ये सारा बसता है,

नफरत की कोई बिसात कहाँ,
पल भर जो बस जाए इनमें
बस प्यार हमारा बसता है
और प्यार तुम्हारा बसता है।

ये दो नैनों के दायरे
कहने को परिमित होते हैं
पर देखा जाए तो इनमें
संसार ये सारा बसता है॥
***

सुप्रीता झा, 9/11 ए, सीजीएचएस
डिस्पेंसरी के पास, किशनगढ़, वसंत कुंज,
नई दिल्ली 110070
मोबाइल: 8619276075
ईमेल: preetyatri@gmail.com

गर्भनाल

शुभ्रा ओझा

Shubhra Ojha,1414Nottingham Ln,
Appt. H 206, Mundelein,IL-60060
मोबाइल: 847-393-5126
ईमेल: pummyraj.ojha@gmail.com

हैलो मम्मी, सब ठीक है ना ? इतनी सुबह कैसे कॉल किया!''

''हाँ, नित्या बेटा, सब ठीक हैं, मैं कपड़ों की पैकिंग कर रही थी तो सोचा तुमसे पूछ लूँ कि साड़ी के साथ कुछ सूट भी रख लूँ क्या ?''

नित्या ने हँसते हुए कहा ''अरे मेरी प्यारी माँ, आप सूट के साथ ही जीन्स और टी-शर्ट भी रख लो, वह तो अमेरिका है वहाँ सब चलता है।''

''तुम क्या बोल रही हो बेटा, अब इस उमर में जीन्स पहनना मुझे शोभा नहीं देता। बेटा और बहू मेरे बारे में क्या सोचेंगे।''

''अरे मम्मी, भईया और भाभी बहुत ही अच्छे है वो कुछ नहीं सोचेंगे, अगर तुम यहाँ से जीन्स नहीं ले गई ना, तो पक्का भाभी वहीं पर तुम्हारे लिए जीन्स ले लेंगी तो मेरी बात मानों और आज ही शॉपिंग के लिए निकल जाओ। कम से कम एक जीन्स और कुछ कुर्तियाँ तो अपने लिए ले ही सकती हो।''

''अच्छा चलो अब तुम इतना कह रही हो तो आज तुम्हारे पापा के साथ शॉपिंग के लिए चली जाऊँगी। अब फ़ोन रखती हूँ। दोपहर में तुम्हारी सरला चाची भी आने वाली है तो अभी मुझे किचेन के सारे काम खत्म करने है जिससे मैं छुटकी के साथ आराम से गप्पे मार सकूँ।''

यह कहते हुए मैंने फ़ोन रख दिया। अब थोड़ा अपने बारे में बता दूँ, मैं रोहिणी, एक राजकीय स्कूल में साइंस की टीचर हूँ। बरसों से बस एक रूटीन सुबह योगा, कुछ घर के

काम फिर स्कूल जाना और घर वापस आकर पास में बस्ती के बच्चों को पढ़ाना। बस, यही करते हुए ज़िन्दगी के इस मोड़ पर आ गई हूँ, कि अब बस चार-पाँच सालों में रिटायर हो जाऊँगी। मेरे दो बच्चे बड़ी बिटिया नित्या और छोटा बेटा आदर्श। नित्या अहमदाबाद में साइंटिस्ट है और आदर्श आईआईटी करके अमेरिका में इंजीनियर हैं। बेटे के साथ ही बहू भी आईटी फील्ड में ही हैं, पाँच साल की एक नटखट सी पोती भी हैं जिसका नाम पीहू हैं। बहुत सालों से बेटा और बहू मुझे अपने पास अमेरिका बुला रहे लेकिन मेरे घर और स्कूल ने मुझे इतनी भी इजाज़त ना दी, कि मैं अपने जीवन के कुछ महीने सुकून से बेटे के पास गुज़ार सकूँ। खैर, इस बार जैसे ही स्कूल में गर्मी की छुट्टियाँ शुरू हुई मैंने ठान लिया कि इस बार मैं बेटे के पास ज़रूर जाऊँगी, तो जाने का टिकट हुआ और तैयारियाँ शुरू। यह पता चलते ही मेरी देवरानी सरला, जिसे मैं प्यार से छुटकी कहती हूँ, उसे मुझसे मिलने आना था। वैसे छुटकी दिल की तो साफ़ हैं लेकिन कहीं ना कहीं उसके मन में मेरे बच्चों और उसके बच्चों के बीच कॉम्पिटिशन होता रहता है, शायद इसलिए ही जब भी वो मुझसे मिलती उसके पास कोई ना कोई कहानी ज़रूर होती मुझे सुनने को, जिस कहानी में कोई ना कोई विलेन बेटा और बहू विदेश में रहते हैं।

किचेन में अपना काम करते हुए मैं सोच रही थी कि आज जब छुटकी मुझसे मिलने आएगी तो उसके पास कौन सी नई कहानी होगी। देखते-देखते लंच का टाइम ओवर हुआ और छुटकी का आगमन भी, घर में घुसते ही उसने सवालों की बौछार शुरू कर दी।

''क्या भाभी, आपने पहले बताया नहीं कि आप अमेरिका जा रही, मुझे कल ही पता चला कि आप अगले हफ़्ते ही जा रही।''

अब मैं उससे अपने दिल की बात क्या बताती कि जब से आदर्श अमेरिका गया है तब से लेकर आज तक उसने जब भी बात किया है तो मुझे कहीं ना कहीं यह महसूस हुआ है कि मेरा बेटा ठीक है, भले ही मुझसे बहुत दूर है लेकिन उसकी बातों की खनक बताती थी कि वह बहुत मज़े में है लेकिन पिछले कुछ महीनों से अपने लाडले से बात करके मुझे लग रहा था कि वो कुछ परेशान है। कितनी तरह से मैंने बातों को घुमा फिरा कर अपने बेटे की परेशानी जानने की कोशिश करती रही लेकिन असफल रही। मैं यह भूल गई थी कि मेरा बेटा बहुत बड़ा हो गया है इतना कि अपनी माँ तक अपनी परेशानी नहीं पहुँचने देगा।

मैंने अपने आप को सँभालते हुए कहा-

''अरे छुटकी कुछ डिसाइड नहीं था कि कब जाना है इसलिए नहीं बता पाई।''

''वैसे भाभी एक बात पूछूँ, इतने सालों से आदर्श अमेरिका में है इससे पहले तो उसने आपको और भईया को कभी नहीं बुलाया अपने पास फिर अचानक से क्यों बुला रहा ?'' छुटकी ने मटकते हुए मुझसे पूछा

''वो क्या है ना, आदर्श हर बार हम लोगों को बुलाता था लेकिन हम लोग ही नहीं जा पाते थे।''

मैंने छुटकी से कहा तो उसने अपनी आँखें घुमाते हुए कहा-

''जा तो रही हो भाभी, लेकिन मैं तुम्हें बता दूँ, वहाँ अमेरिका में रहने वाले बच्चें सिर्फ काम कराने के लिए अपने बूढ़े माँ-बाप को अपने पास बुलाते है, क्योंकि वहाँ नौकर जो नहीं मिलते।''

मैंने चाय का कप छुटकी को पकड़ाते हुए कहा-

''अगर अपने बच्चों के घर जाकर उनका काम भी करना पड़े तो कोई बात नहीं उनका घर का काम भी तो अपने घर का ही हुआ।''

छुटकी को ऐसे उत्तर की उम्मीद ना थी उसने मुँह बनाते हुए कहा -''मेरा काम था आपको बताना तो बता दिया आगे आपकी मर्ज़ी। मैंने भी मुस्कुराते हुए उससे कहा- ''चलो अब अमेरिका से वापस आकर तुमसे बात करूँगी, अभी मुझे कुछ शॉपिंग करने जाना है।''

छुटकी ने चाय का कप टेबल पर रखा और बेमन से वापस चली गई।

शाम को आदर्श के पापा के साथ मैं शॉपिंग के लिए गई। वहाँ अपने लिए कुछ कुर्तियाँ, बहू के लिए साड़ियाँ, जीन्स, कुछ टॉप और पीहू के लिए फ्रॉक ले लिया। घर आकर सभी सामानों को पैक करते समय बेटे के लिए पहले से ही अपने हाथों से बनाया मफलर भी रख लिया। जब से जाने का दिन पता चला था उस दिन का इंतज़ार कर रही थी कि कैसे वो दिन आए और मैं उड़ कर अपने बेटे के पास पहुँच जाऊँ। एक माँ के लिए बच्चों से दूर रहना मुश्किल नहीं होता, मुश्किल तो तब होता है जब बच्चें माँ के साथ रहते हुए भी माँ से बहुत दूर हो जाए, और इस मामले में मैं खुद को भाग्यशाली मानती हूँ कि मेरे दोनों बच्चें मुझसे दूर होते हुए भी अपने प्यार की वजह से हमेशा मेरे दिल के पास ही रहते थे। बेटा और मेरी बेटी दोनों ही मेरा ख़याल रखते है।

ख़ैर वो दिन भी आ गया जब मुझे मेरे बेटे के पास जाने के लिए उड़ान भरनी थी। मैं ढेर सारा प्यार अपने सूटकेस में समेटे हुए पहली बार इंटरनेशनल फ़्लाइट में सवार हो गई। मेरे बगल में बैठते हुए मेरे पतिदेव मुझसे बोले-''जब आदर्श बिजनेस क्लास का टिकट हमारे लिए भेज रहा था तो तुमने मना क्यों कर दिया अब मेरे बजट में तो यह इकोनोमिक क्लास की ही टिकट आएगी।''

''मुझे यहाँ किसी भी प्रकार की कोई दिक्कत नहीं है। वैसे भी जब हमारे पास टिकट लेने के पैसे थे तो बेटे को क्यों परेशान करना। बच्चों के कुछ पैसे माँ की वजह से सेव हो जाएँ तो इससे अच्छी बात क्या हो सकती है!''

यह कहते हुए मैंने अपना गला ट्रैवल पिलो पर टिका दिया।

पतिदेव को फिर भी चैन ना था वो तो ऐसे बातों में लगे थे जैसे पूरे जीवन की बातें बस इसी यात्रा के दौरान पूरी कर लेंगे। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए वो मुझसे बोले ''तुम तो अभी से आराम के मूड में आ गई अभी तो फ़्लाइट टेक ऑफ भी नहीं हुई, अरे भाई मुझे बहुत डर लगता है जब फ्लाइट टेक ऑफ होती है।''

मैं हरदम आपके साथ हूँ, यह कहते हुए मैंने अपना हाथ उनके हाथों पर रख दिया। मैंने देखा वो थोड़े नॉर्मल लग रहे थे, उनका डर थोड़ी देर के लिए कहीं गायब हो गया था और इसी बीच हमारा जहाज़ बादलों में उड़ान भर रहा था। वो मेरे बालों को सहलाते हुए बोले -''अब तुम थोड़ी देर सो

जाओ पिछले कुछ हफ्तों से तुमने ठीक से आराम भी नहीं किया। मैं बिना कुछ कहे ही आँखें बन्द करके सो गई। कई घंटो के सफ़र के बाद हम दोनों शिकागो एयरपोर्ट पर पहुँच चुके थे।

एयरपोर्ट पर आदर्श और पीहू हमें रिसीव करने के लिए आए हुए थे। इतने लंबे सफर के बाद बच्चों को देखकर लगा जैसे हमारी सारी थकान ही मिट गई, हँसते मुस्कुराते हम घर को पहुँचे जहाँ बहू ने घर को बहुत ही कलात्मक, सुंदर तरीके से सजा के रखा हुआ था। सबसे पहले बहू ने झुककर हमारे पैर छुए उसके बाद हमें हमारा कमरा दिखाया जो सलीके से सजाया हुआ था। एक सुंदर सा बेड रूम के बीचों-बीच में रखा हुआ था, साथ में एक छोटा सा स्टडी टेबल और उस पर कुछ किताबें रूम के कार्नर पर रखी हुई थी। हर चीज़ ढंग से हमारे लिए रखी गई थी जैसे ही हम लोग नहा कर लंच के लिए डाइनिंग टेबल पर बैठे वहाँ पर भी हम दोनों की पसंद की सभी खाने की चीज़ें थीं। अंत में गाजर का हलवा खिलाकर बहू ने हमारा दिल जीत लिया। हम लोगों के आने से आदर्श के चेहरे पर एक नई चमक थी। पीहू को तो मानों पंख ही लग गए थे, वह खुशी के मारे पूरे घर में ''दादा-दादी आ गए'' कहकर घूमें जा रही थी।

भारत से लाए हुए गिफ्ट मैंने सभी को दे दिया। सब अपना गिफ्ट पाकर बहुत खुश हुए।

हम लोगों को शिकागो आए हुए अब कई दिन हो चुके थे आदर्श ने हमें शिकागो सिटी दिखाया। ऑफ़िस से कुछ दिन की छुट्टी लेकर बेटे और बहू ने हमें नायग्रा फाल, न्यूयॉर्क और आसपास की कई जगहें दिखाई। मैंने देखा अमेरिका के भागदौड़ की ज़िन्दगी में बेटा और बहू मिलजुल कर बहुत सारे काम कर रहे थे। मैं जब कभी किचन में बहू का हाथ बँटाने के लिए चली जाती, तो बेटा आदर्श आकर मेरा हाथ पकड़ कर मुझे पीहू के साथ रूम में बैठा देता और मुझसे कहता ''आप आराम से पीहू के साथ मज़े करो, काम करने के लिए हम दोनों हैं ना, वैसे भी हम दोनों को आपकी सेवा करने का मौका नहीं मिलता। कुछ दिनों के लिए सही कम से कम हमें भी थोड़ा पुण्य कमा लेने दीजिए।'' मैं कुछ बोल नहीं पाती और पीहू को अपने गोद में बैठाकर उसकी पसंदीदा कहानियाँ सुनाने लगती।

एक दिन जब मैं पीहू को कहानी सुना रही थी तो उसने कहानी की किताब को बंद कर दिया और मुझसे बोली ''दादी आप सभी को इतना प्यार करती हो फिर भी हमसे इतनी दूर रहती हो, आख़िर क्यों ?''

मैंने मुस्कुराते हुए अपनी लाडली को गोद में बिठा लिया और प्यार से समझाने लगी ''देखो, जब चिड़िया के बच्चे छोटे होते है तो चिड़िया माँ अपने बच्चों को बहुत सँभाल कर घोंसले में रखती है, उन्हें चुन-चुन कर दाना खिलाती है, उड़ना सिखाती है। जब बच्चे उड़ना सीख जाते है तो उन्हें अकेले अपने जीवन की उड़ान भरने देती है। ठीक वैसे ही मैंने भी बच्चों को पढ़ाया, लिखाया और अच्छे संस्कार दिए जिससे वो दुनिया के किसी भी कोने में रह कर अपनी ज़िन्दगी को बेहतर तरीके से जी सके इसका मतलब यह कतई नहीं है कि मैं अपने बच्चो से दूर रहकर उन्हें प्यार नहीं करती।'' मैंने देखा पीहू मेरी बात को समझने की कोशिश कर रही थी।

मैंने पीहू के हाथों को अपने हाथ में लेते हुए कहा ''मेरी बच्ची, आज दादी प्रॉमिस कर रही कि समय निकाल कर हमेशा अपने बच्चों से मिलने आया करेगी।''यह सुनते ही पीहू ने मुझे गले से लगा लिया।

कुछ ऐसे ही प्यारे पलों के साथ समय देखते ही देखते पंख लगाकर उड़ गया और हमारे जाने का टाइम आ गया। विश्वास ही नहीं हो रहा था की एक महीने का समय इतनी जल्दी कैसे बीत गया! भारत वापस जाने के लिए आदर्श ने मेरी सारी पैकिंग खुद अपने हाथों से करने लगा और मुझे मेरे बेड पर बैठा दिया। पैकिंग करने के बाद वो मेरे पैरों के पास आकर बैठ गया। उसके सिर पर अपना हाथ फेरते हुए मैंने उससे कहा- ''कुछ महीनों से मैं यह महसूस कर रही हूँ कि तुम किसी बात को लेकर परेशान हो लेकिन किसी से कोई बात शेयर नहीं कर रहे, क्या मुझे भी नहीं बताओगे?''

आदर्श ने मेरे दोनों पैरों को कसकर पकड़ लिया और मुझसे बोला ''माँ, मुझे माफ़ कर देना मैं तुमसे कितना दूर चला आया हूँ, तुम्हारी सेवा भी ढंग से नहीं कर पाता। एक दिन पीहू मुझसे कहने लगी ''पापा जब आप दादी से इतना प्यार करते है तो उनके साथ क्यों नहीं रहते।'' बस, यही बात मुझे परेशान किए हुए है। मैं क्या करूँ माँ मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा ?''

मैंने आदर्श को अपने पैरों के पास से उठाकर अपने पास बैठाया फिर प्यार से उसको समझाते हुए कहा- ''देखो बेटा, जब तक एक छोटा सा बेबी माँ के गर्भ में होता है तब तक उस बेबी का सम्पूर्ण आहार गर्भनाल के द्वारा ही उसे उसकी माँ के गर्भ में मिलता है, लेकिन जैसे ही वह बेबी, माँ के गर्भ से निकल कर इस दुनिया में आता है, सबसे पहले डॉक्टर गर्भनाल को काटकर बेबी को माँ से अलग करता है, क्योंकि बेबी को अब इस दुनिया में आकर एक नई शुरूआत करनी है। अगर डॉक्टर ऐसा ना करे तो माँ और बच्चे दोनों को जान का खतरा हो सकता है इसी तरह एक माँ भी अपने बच्चे को बाहर की दुनियाँ में अपना अस्तित्व बनाने के लिए प्रेरित करती है और अंत में अदृश्य बंधन रूपी गर्भनाल को काट कर अपने से दूर आसमान में उड़ने के लिए छोड़ देती है।''

मैंने देखा आदर्श भी पीहू की तरह मेरी बातों को बहुत ध्यान से सुन रहा है, तब मैंने मुस्कुराते हुए आगे कहा-''देखो, जब मैं शादी करके तुम्हारे पापा के घर में आई उस समय पूरा परिवार साथ रहता था। तुम्हारे पापा ने मेरे पढ़ाई को देखते हुए मुझे नौकरी करने को कहा लेकिन संयुक्त परिवार में कई लोगों यह पसंद नहीं आया और उन्होंने इसका विरोध किया लेकिन तुम्हारे पापा ने मेरा साथ देते हुए मुझे उस गर्भनाल रूपी बंधन से आज़ाद किया ताकि मैं अपनी उड़ान भर सकूँ। मैंने भी तुम्हें और तुम्हारी दीदी को अपने सपने पूरे करने की आज़ादी दी, और मैं चाहती हूँ कि तुम भी पीहू को इतनी आज़ादी देना कि वो अपने सपनों को अपने दम पर पूरा कर सके।''

आदर्श का चेहरा बता रहा था कि उसे मेरी बातों से बहुत आराम मिला था। मैंने बेटे के सिर को सहलाते हुए कहा-''अगर तुम चाहो तो आज मेरे गोद में सो सकते हो''

मैंने देखा आदर्श ने मेरे पैरों पर अपना सिर रखकर अपनी आँखें मूँद ली।

***

अनूठे जज़्बात

दर्शना जैन

शोषित महिलाओं के संरक्षण के लिए, उनके उत्थान के लिए, अपने पैसों से उनका इलाज करवाना, उन्हें उपयोगी कौशल सिखाकर व रोज़गार देकर समाज में मुख्यधारा से जोड़ने हेतु श्रीधर जी ने एक सामाजिक संस्था का गठन किया। शासन की ओर से नेक कार्य करने पर उनकी संस्था को पुरस्कार दिया गया। एक न्यूज़ चैनल वालों का उनके पास फ़ोन आया और उन्होंने कहा कि सर, हम आपका इंटरव्यू लेना चाहते हैं। अपने काम के विषय में श्रीधर जी लोगों को बताते ज़रूर रहते थे पर न्यूज़ चैनल जैसे वृहद मंच, जिसे कई लोग देखते व सुनते हैं, पर इंटरव्यू देने में उन्हें संकोच हो रहा था तो उन्होंने कहा कि मैं कल तक आपको सोचकर बताता हूँ। उनकी पत्नी शकुंतला जी ने पूछा कि किसका फ़ोन था? श्रीधर जी ने बात बताते हुए अपना संकोच भी पत्नी के समक्ष व्यक्त किया। शकुंतला जी ने कहा, ''इसमें संकोच कैसा! आप जो काम कर रहे हैं वह ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को पता चले यही तो हम चाहते हैं ना!'' श्रीधर जी बोले, ''हाँ, यह तो है पर कभी ऐसे इंटरव्यू दिया नहीं इसलिए थोड़ा संकोच में था।'' शकुंतला जी बोलीं, ''आप अभी न्यूज़ चैनल वालों को फ़ोन लगाकर हाँ कहिए, मैं भी आपके साथ चलूँगी।'' श्रीधर जी ने फ़ोन किया, अपनी स्वीकृति दी और पत्नी से बोले, ''तुम ना कहती तो भी मैं तुम्हें साथ ले जाता।''

इंटरव्यू वाले दिन श्रीधर जी व शकुंतला जी को लेने चैनल वालों ने कार भेजी, वे पहुँचे, उनका स्वागत किया गया। साक्षात्कार लेने वाली महिला का नाम कामिनी था, साक्षात्कार में सबसे पहले तो कामिनी ने श्रीधर जी को सम्मानित होने हेतु सबकी ओर से बधाई प्रेषित की, फिर पहला प्रश्न किया, ''श्रीधर जी, हम आपसे यह जानना चाहेंगे कि एक पुरुष होकर महिलाओं के लिए यह नेक कार्य करने की प्रेरणा कहाँ से या किससे मिली?'' श्रीधर जी कुछ पल रुके, शायद जवाब सोचने के लिए, फिर बोले, ''एक फिल्म को बनाते तो निर्माता व निर्देशक हैं, और सराहा भी उन्हें ही जाता है लेकिन मेरा मानना है कि एक अच्छा पटकथा लेखक ही फिल्म को सफल बना सकता है, वह यदि कहानी अच्छी न लिखे तो फिल्म में रस नहीं आएगा। ऐसे ही आप जो मेरी संस्था और उसके काम देख रहे हैं उसकी पटकथा लिखी है मेरी पत्नी ने, सही मायने में वही सम्मान की असल हकदार है।''

दर्शना जैन, द्वारा श्री प्रवीण जैन, नमिनाथ जैन मंदिर के सामने, रामकृष्णगंज, खंडवा, मप्र - 450001
मोबाइल: 9827502066

कामिनी ने अब शकुंतला जी को ससम्मान आमंत्रित किया और कहा, ''मैडम, सर ने आपको पटकथा लेखक का दर्जा दिया है, कुछ बताइए कि कैसे लिखी आपने यह पटकथा?'' शकुंतला जी ने कहा, ''यह तो इनका बड़प्पन है जो ऐसा कह रहे हैं। जीवन तो इन्होंने दिया है, मुझे, आपकी इजाज़त हो तो आज मैं इनका वह रूप सभी को बताना चाहती हूँ जिसे शायद ही कोई जानता हो।'' कामिनी बोली कि ज़रूर बताइए, हम सब उत्सुक हैं जानने के लिए। शकुंतला जी बताने लगी, ''मैं अठारह वर्ष की थी जब कुछ दरिंदों ने मेरे साथ दुष्कर्म किया। मेरा शरीर, मेरा मन टूट चुका था, विश्वास हिल गया था। ऊपर से लोगों की अनर्गल बातें व ताने कानों में सीसा डाला करते। परिवार वाले हिकारत या दया की नज़र से देखते, गुस्सा तो बहुत आता था पर अपने गुस्से का क्या करूँ समझ नहीं आता। श्रीधर जी मेरे मोहल्ले में ही रहते थे, इन्होंने मुझसे बात करने का प्रयास किया पर जो हादसा मेरे साथ हुआ था उससे मर्दों से डर लगने लगा था, इन्होंने मेरे डर को समझा, कभी ज़बरदस्ती पास आने की चेष्टा नहीं की, ये अन्य लोगों के जरिये परोक्ष रूप से मेरी सहायता किया करते थे। जब मुझे उनकी अनजानी मदद का मालूम चला तो मैं इन्हें धन्यवाद देने पहुँची। इन्होंने कहा कि आपकी माँ से आपके साथ हुई दुर्घटना और आपके गुस्से दोनों की जानकारी मिली। आपके साथ मिलकर मैं आपके उस क्रोध को सही दिशा देना चाहता हूँ लेकिन ऐसे हम दोनों साथ काम करेंगे तो समाज हमारे रिश्ते को ग़लत नाम देगा इसलिए मैं इस रिश्ते के नामकरण हेतु आपसे विवाह करना चाहता हूँ। मैं उनके प्रस्ताव से अवाक् थी, जिस लड़की की तरफ लोग नज़र उठाकर देखना भी मानों गुनाह समझते हों, उसे अपना जीवन साथी बनाने के निर्णय पर मैंने सोचा कि कहीं इनका भी कोई ग़लत इरादा तो नहीं, तब इन्होंने मुझे यकीन दिलाते हुए कहा कि यकीन मानिए शकुंतला जी, मैं वैसा नहीं हूँ जैसा आप मान रही हैं, हर इंसान बुरा नहीं होता। इनके शब्दों पर मुझे विश्वास हुआ और हम वैवाहिक संबंध में बँध गए।''

शकुंतला जी ने इतना कहा और भीगी पलकों से पति को देखा। श्रीधर जी ने पत्नी का हाथ थामा। कामिनी स्तब्ध सी थी। वह श्रीधर जी से बोली ''सर, आपने सचमुच एक मिसाल पेश की है।''

श्रीधर जी ने कामिनी से कहा, ''मिसाल जैसा कुछ नहीं है, मैंने वही किया जो मेरे दिल ने करवाया। बचपन से ही महिलाओं की इज़्ज़त करने के संस्कारों के बीच पला-बढ़ा था। उनके साथ हो रहे अत्याचार को देख मेरे संस्कार दहल उठते। इस विकृति से पार पाने के लिए कुछ करने को मन करता लेकिन कुछ करना मेरे अकेले के बस का नहीं था, एक कुशल साथी की ज़रूरत थी। शकुन से मिला तो लगा कि इनके साथ मिलकर मैं अपनी चाहत को सही अंजाम दे पाऊँगा।''

कामिनी ने थोड़ा व्यक्तिगत सवाल पूछा, ''सर, कुछ तो खास देखा होगा आपने शकुंतला जी में जो आपने इन्हें ही चुना?'' शकुंतला जी भी इस सवाल का जवाब जानने को बेसब्र थी क्योंकि वे विवाह के तीस सालों में चाहकर भी यह बात पति से पूछ नहीं पाई थीं। श्रीधर जी ने बताया, ''एक तो जो खुद पीड़ा का भुक्तभोगी हो वह अन्य किसी का दर्द और भावनाएँ अच्छे से समझ लेता है और दूसरे पीड़ा ने जो क्रोध की अग्नि शकुन में उत्पन्न की थी वह क्रोधाग्नि समाज की इस बुराई को जलाने के लिए ज़रूरी थी। तब शकुन की भावनाओं से मेरा दिल मिला और हम एक हो गए। फिर विवाह पश्चात् हमने हमारी संस्था की नींव रखी और उसमें पीड़ित महिलाओं को आश्रय देना प्रारंभ किया। संस्था की और उसमें आश्रय पा रही महिलाओं की शकुंतला बच्चे की तरह सँभाल करती है, नाम मेरा होता है पर काम इनका रहता है। कामिनी जी, शकुन हमेशा से मेरी प्रेरणा रही है, मैं तो साक्षात्कार में आने से भी थोड़ा घबरा रहा था, शकुन यदि मुझे प्रेरित नहीं करती तो मैं यहाँ शायद ही आ पाता।''

कामिनी ने बहुत से भावुक इंटरव्यू लिए थे, हर बार वह अपनी भावनाओं पर संयम रखती थी पर इस बार भावनाएँ उसकी आँखों से बह निकलीं। वह इतना ही कह पाई, ''गज़ब का जज़्बा और जज़्बात हैं आप दोनों के।''

***

दोहे

यूथिका चौहान के दोहे

धर्म जाति भाषा नहीं, अपनी इक पहचान।
इन्साँ खुद को मानते, मुल्क है हिंदुस्तान॥

***

मारे हैं जो प्रेम के, उनकी ये तक़दीर।
दिल को लगते पंख हैं, होठों पर ज़ंजीर॥

***

सेवा अपनों की करो, किन्तु रखो अलगाव।
बारिश से उगती फ़सल, बाढ़ से लगते घाव॥

***

नियम न माने जो कोई, काल वो मायाजाल।
बरस लगे पल तो कभी क्षण में सिमटे साल॥

***

प्रश्न रचयिता रचना का, करे सभी को मौन।
मूर्तिकार मूरत इनमें, किसको रचता कौन !

***

मन की वाणी की सुनो, बड़ी अनोखी बात
पूछो तो लागे सरल, बूझै समझ न आत।

***

भट्टी की तपती लपट का कुछ पल का ज़ोर
मिट्टी का कोमल घड़ा सदा रहे कठोर

***

पिंजरे में तोता दिखा, कौवा मन मुस्काए
रूप रंग जो पाए सो, खुला गगन खो जाए

***

प्रेम प्रीत में है दिखत, चुम्बक सा परभाव,
विषम खिंचा आवै सदा, दूर रहे समभाव

***

मंदिर मस्जिद ध्वस्त हुए, आया जब तूफ़ान
जान बचाने आए गए, वर्दी में भगवान्

***

Youthika Chauhan 1501 Mason Farm Road, Apt.#214,Chapel Hill, NC-27514
मोबाइल: 919-638-4174
ईमेल: youthika.chauhan@gmail.com

समाचार-सार

शांति गया स्मृति सम्मान समारोह कई हस्तियाँ सम्मानित

शहीद भवन भोपाल के सभागार में द्वितीय 'शांति-गया' स्मृति सम्मान समारोह का आयोजन, गयाप्रसाद खरे, स्मृति साहित्य कला एवम खेल संवर्द्धन मंच द्वारा किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता लखनऊ से पधारे अट्टहास पत्रिका के सम्पादक श्री अनूप श्रीवास्तव ने की जबकि समारोह की मुख्य अतिथि के रूप में सुप्रसिद्ध लेखिका मैत्रेयी पुष्पा उपस्थित थीं। विशिष्ट अतिथियों में वरिष्ठ व्यंग्यकार डॉ. हरि जोशी, श्री रमेश सैनी एवम हॉकी ओलिम्पियन सैयद जलालुद्दीन मंचासीन रहे। कॉर्यक्रम का सफल संचालन अन्तर्राष्ट्रीय कमेंट्रेटर दामोदर आर्य ने किया।

कार्यक्रम के प्रथम सत्र में काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसका संचालन कुमार सुरेश ने किया। गोष्ठी में सर्वश्री जहीर कुरैशी, श्रवण कुमार उर्मलिया, पंकज सुबीर, दिनेश प्रभात, ममता बाजपेयी, बृज श्रीवास्तव, कान्ति शुक्ला 'उर्मि' श्री अरुण अर्णव खरे ने भी रचना पाठ किया। कार्यक्रम के द्वितीय सत्र में दिनेश नायर के निर्देशन में रज़िया सज्जाद ज़हीर की कहानी 'यस सर' का नाट्य मंचन किया गया।

कार्यक्रम के तृतीय सत्र में श्री अरुण अर्णव खरे के उपन्यास ''कोचिंग एट कोटा'' का लोकार्पण किया गया। वरिष्ठ कहानीकार गोपाल नारायण आवटे के कहानी संग्रह पाकिस्तान ज़िंदाबाद तथा अरुण अर्णव खरे के अतिथि संपादन में प्रकाशित अट्टहास के अक्टूबर अंक का भी मंचस्थ अतिथियों द्वारा लोकार्पण किया गया।

अंतिम सत्र में मंचस्थ अतिथियों द्वारा साहित्य, कला एवं खेल जगत् से जुड़ी 24 हस्तियों को शाल, श्रीफल, सम्मानपत्र व सम्मान-राशि से सम्मानित किया गया। शांति-गया स्मृति शिखर सम्मान से चर्चित साहित्यकार पंकज सुबीर को सम्मानित किया गया। उन्हें शाल, श्रीफल व सम्मान पत्र के साथ रु 5100/- की राशि भेंट की गई। इसी श्रेणी में 2100/- रुपये सम्मान निधि के साथ दूसरा सम्मान जोधपुर की डॉ. जेबा रशीद को प्रदान किया गया। इसके साथ ही पहली बार प्रवासी साहित्यकारों के लिए संस्थित सम्मान अमेरिका की कहानीकार सुधा ओम ढींगरा को कहानी संग्रह ''सच कुछ और था'' के लिए दिया गया।

चार श्रेणियों में दिए जाने वाले साहित्यिक सम्मानों में रु 2100/- का उपन्यास विधा का सम्मान झांसी के बृजमोहन को ''मदारी पासी'' पर, कहानी विधा में शिमला की मृदुला श्रीवास्तव को ''जलपाश'' पर, व्यंग्य विधा में भोपाल के अनुज खरे को ''बातें बेमतलब'' पर तथा कविता में कनाडा के धर्मपाल महेन्द्र जैन को ''इस समय तक'' पर प्रदान किए गए। साहित्येत्तर विधा के लिए दिया जाने वाला सम्मान स्वास्थ्य विषयक अनेक बेस्टसेलर पुस्तकों के लेखक अबरार मुल्तानी को प्रदान किया गया। खेलों के लिए हाकी ओलिम्पियन सुजीत कुमार (जयपुर) तथा खेल समीक्षा के लिए हरेंद्र नागेश साहू (रायपुर) को एवं नाट्य कला के लिए रंगकर्मी दिनेश नायर (भोपाल) एवं बाल कलाकार व्योम आहूजा (लखनऊ) को सम्मानित किया गया।

सम्मानित होने वाली अन्य हस्तियों में दिल्ली की वंदना यादव (उपन्यास ''कितने मोर्चे''), सूरत की रश्मि तारिका (कहानी संग्रह ''कॉफ़ी कैफे''), लखनऊ की वीना सिंह (व्यंग्य-संग्रह ''बेवजह यूँ ही'') तथा गाजियाबाद के डॉ. ब्रह्मजीत गौतम (कविता संग्रह ''एक बहर पर एक गजल'') शामिल थे। प्रत्येक विधा में दो-दो प्रशस्ति पत्र - उपन्यास के लिए दयाराम वर्मा (भोपाल) एवं बल्देव त्रिपाठी (लखनऊ), कहानी के लिए गोविंद सेन (धार) व डॉ. लीला दीवान (जोधपुर), व्यंग्य के लिए वीरेंद्र सरल (रायपुर) व सुदर्शन सोनी (भोपाल) तथा कविता के लिए अशोक कुमार धमैनिया (भोपाल) व राजकुमार जैन राजन (चित्तौड़गढ़) को प्रदान किए गए। ज्ञातव्य हो कि इस अखिल भारतीय सम्मान के विचारार्थ देश भर से इस वर्ष लगभग डेढ़ सौ पुस्तकें प्राप्त हुई हैं जिनमें से किसी एक पुस्तक को सम्मान हेतु चुनना मुश्किल एवं दुरूह कार्य था।

कॉर्यक्रम के अंत में श्री गोकुल सोनी ने आभार व्यक्त किया। आयोजन में शहर के एवम बाहर से पधारे विभिन्न साहित्यकारों, मीडियाकर्मियों एवम गणमान्य नागरिकों ने बड़ी संख्या में भाग लिया।

***

डॉ. जवाहर कर्नावट द्वारा हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी

देश की प्रख्यात संस्था इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली में डॉ. जवाहर कर्नावट द्वारा 23 देशों की 115 वर्षों में प्रकाशित हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी का शुभारंभ केन्द्रीय गृह राज्य मन्त्री श्री नित्यानंद राय ने किया। उन्होंने सम्पूर्ण प्रदर्शनी का अवलोकन कर अपना प्रशंसात्मक अभिमत भी अंकित किया। दिनांक 13 से 16 सितम्बर 2019 तक आयोजित इस प्रदर्शनी का अवलोकन सेन्सर बोर्ड के अध्यक्ष एवं विज्ञापन गुरु, लेखक, गीतकार श्री प्रसून जोशी, मीडिया कर्मी एवम भाषाविद श्री राहुल देव, कला केंद्र के सदस्य सचिव श्री सच्चिदानंद जोशी, के.के.बिडला फ़ॉउण्डेशन के निदेशक डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण, श्री सुधीश पचौरी,ड़ॉ विमलेशकान्ति वर्मा आदि अनेक महानुभावों एवं विद्यार्थियों ने कर इस संकलन को अनूठा बताया।

***

'ज्ञान चतुर्वेदी व्यंग्य सम्मान' व्यंग्यकार कमलेश पाण्डेय को

व्यंग्य लेखक समिति के स्व. सुशील सिद्धार्थ द्वारा स्थापित वर्ष 2019 का ज्ञान चतुर्वेदी सम्मान, नई दिल्ली के वरिष्ठ व्यंग्यकार श्री कमलेश पाण्डेय को, मुख्य अतिथि ज्ञान चतुर्वेदी, प्रमोद त्रिवेदी, ईश्वर शर्मा, डॉ. पिलकेंद्र अरोरा, मुकेश जोशी और डॉ. हरीशकुमार सिंह द्वारा, सम्मान राशि ग्यारह हज़ार रुपये, शाल श्रीफल और सम्मान पत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया। सम्मानित व्यंग्यकार कमलेश पाण्डेय ने कहा कि यह सम्मान पाकर अभिभूत हूँ और ज्ञान जी की परंपरा को आगे बढ़ाने का प्रयास करूँगा हालाँकि ऐसा करना कठिन और चुनौतीपूर्ण है। स्वागत भाषण शांतिलाल जैन ने दिया। समारोह में भोपाल के व्यंग्यकार विजी श्रीवास्तव के व्यंग्य संकलन 'इत्ती सी बात' और स्व. सुशील सिद्धार्थ के व्यंग्य संकलन 'आखेट' का विमोचन अतिथियों द्वारा किया गया। आयोजक संस्था व्यंग्य लेखक समिति की श्रीमती आशा सिद्धार्थ का आडियो संदेश भी इस अवसर पर सुनाया गया। आरंभ में अतिथियों द्वारा दीप आलोकन कर आयोजन का शुभारम्भ हुआ।

उदघाटन एवं सम्मान सत्र के बाद प्रख्यात व्यंग्यकार डॉ. शिव शर्मा की स्मृति को समर्पित व्यंग्य विमर्श के तीन सत्र आयोजित किए गए जिनमें 'व्यंग्य उपन्यास : दशा और दिशा' सत्र में विषय प्रवर्तन करते हुए राहुल देव ने कहा कि साहित्य की विधाओं में उपन्यास लेखन सबसे कठिन विधा है और उपन्यास लेखन के लिए लेखक को अपने प्रतिमान तोड़ने पड़ते हैं। डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी ने कहा कि उपन्यास धीमी आँच पर पकने वाली चीज़ है, उपन्यास लेखन रातों रात का काम नहीं है और उपन्यास के लिए उतना धैर्य होना चाहिए। उपन्यास लेखन आपको बड़ा कद दे देगा यह सोचना भी ग़लत है क्योंकि परसाई अपनी व्यंग्य रचनाओं से आज भी विख्यात हैं। सत्र की अध्यक्षता प्रमोद त्रिवेदी ने की। सञ्चालन डॉ. पिलकेंद्र अरोरा ने किया।

युवा व्यंग्य लेखन सत्र में समकालीन युवा व्यंग्य, कितना पारंपरिक कितना नवीन विषय पर युवा व्यंग्यकार सौरभ जैन ने कहा कि समकालीन व्यंग्य वन लाइनर हो गया है और एक पंक्ति में भी व्यंग्य किया जा सकता है वहीं व्यंग्यकार जगदीश ज्वलंत ने कहा कि आपका स्वयं का लेखन जब आपको स्वयं प्रभावित नहीं करता तो निश्चित ही पाठकों को भी नहीं करेगा इसलिए लेखक स्वयं अपनी रचना का आलोचक बने और निष्पक्ष समालोचना करे। विषय प्रवर्तन करते हुए मुंबई के व्यंग्यकार शशांक दुबे ने कहा कि चुनौती यह है कि क्या ये युवा कुछ नया लिख रहे हैं, विषय में नवीनता है, प्रस्तुति में ताज़गी है और क्या नएपन की तलाश में परंपराओं को नकार तो नहीं रहे। अध्यक्ष कैलाश मंडलेकर ने कहा कि आज पढ़ने-लिखने का संकट सबसे बड़ा संकट हो गया है और दृश्य माध्यम के बढ़ते प्रभाव से वैचारिकता का अभाव होने से चिंतन मनन कम हो गया है। युवा व्यंग्यकार के पास सम्पूर्ण व्यंग्य दृष्टि आवश्यक है। संचालन ईश्वर शर्मा ने किया।

व्यंग्य पाठ सत्र में देश भर से पधारे व्यंग्यकारों ने व्यंग्य पाठ किया जिसमें प्रख्यात व्यंग्यकार प्रभाशंकर उपाध्याय, सुनील जैन राही, विजी श्रीवास्तव, अनुज खरे, कैलाश मंडलेकर, अर्चना चतुर्वेदी, डॉ. नीरज शर्मा, इन्द्रजीत कौर, जगदीश ज्वलंत, सौरभ जैन, सुदर्शन सोनी, मृदुल कश्यप, अक्षय नेमा, कमलेश पाण्डेय, सुधीरकुमार चौधरी, मुकेश जोशी, पिलकेंद्र अरोरा, शांतिलाल जैन, शशांक दुबे, राजेंद्र देवधरे दर्पण, आदि ने व्यंग्य पाठ किया। स्वागत मुकेश जोशी, शांतिलाल जैन, शशांक दुबे, संजय जोशी सजग, डॉ. हरीशकुमार सिंह आदि द्वारा किया गया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. पिलकेंद्र अरोरा एवं ईश्वर शर्मा ने किया।

***

खंडवा में पुस्तक चर्चा आयोजित

हमने गांधी जी के विचारों को जीवन में नहीं उतारा, उनकी मूर्ति बना ली और हर राष्ट्रीय त्यौहार पर माला पहना कर हम गांधीवादी हो गए। पुस्तक ''जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था'' पर आयोजित वार्ता एवं संवाद कार्यक्रम में रचनाकार पंकज सुबीर ने यह वक्तव्य दिया। इसी उपन्यास पर डॉ. प्रताप राव कदम ने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि यह उपन्यास विपरीत वक्त में लिखा गया एक ज़रूरी उपन्यास है, जिसे पढ़ा ही जाना चाहिए। श्री अशोक गीते ने कहा धर्म का अर्थ धारण करना होता है और कोई भी धर्म सद्गुण धारण करने की ही शिक्षा देता है। डॉ. रश्मि दुधे ने इतिहास के पात्रों के माध्यम से आज को व्यक्त करने वाले इस उपन्यास पर अपनी अनुशंसा दी।

युवा रचनाकार शहरयार अमजद खान के शोधग्रंथ ''कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न-कारण और निवारण'' पर अपने विचार व्यक्त करते हुए शैलेन्द्र शरण ने कहा कि विधि में कई धाराएँ और उपधाराएँ होती है किंतु श्री शहरयार ने इस विषय को रोचक और सरस ढंग से प्रस्तुत किया है। रघुवीर शर्मा ने इसे न सिर्फ कार्यालयों के लिए अपितु महिलाओं की सुरक्षा के लिए कार्य कर रहे सभी के लिए आवश्यक पुस्तक बताया। स्वागत डॉ. रश्मि दुधे, अरुण सातले, श्याम सुंदर तिवारी, कैलाश मण्डलेकर, गोविंद गुंजन, श्रीमती मंगला चौरे, वैभव कोठारी द्वारा किया गया। स्वागत भाषण श्याम सुंदर तिवारी द्वारा, आभार श्री अरुण सातले द्वारा तथा संचालन श्री गोविन्द शर्मा ने किया।

***

-शैलेन्द्र शरण

विभिन्न विधाओं में शमशेर सम्मान प्रदान किए गए

शमशेर बहादुर सिंह की स्मृति नें स्थापित शमशेर सम्मान का आयोजन दि निमाड़ एजुकेशन सोसाइटी परिसर - केशव सभागार में सम्पन्न हुआ। इसमें वर्ष 2017 का सम्मान क्रमश: ख्यात आलोचक अजय तिवारी नई दिल्ली को सृजनात्मक गद्य के लिए और कवि स्वप्निल श्रीवास्तव अयोध्या, को कविता के लिए प्रदान किया गया। वर्ष 2018 के लिए कवि व लेखक श्री सुधीर सक्सेना नई दिल्ली को सृजनात्मक गद्य के लिए समर्पित किया गया। कवि श्री अशोक शाह भोपाल, यहाँ नहीं पहुँच सके, उन्हें यह सम्मान कविता के लिए घोषित किया गया है। कार्यक्रम अध्यक्ष मराठी कवि नारायण कुलकर्णी कवठेकर ने हिन्दी और मराठी साहित्य के संबंधों को रेखांकित करते हुए शमशेर जी की अनेक कविताओं की पंक्तियों का उल्लेख किया। श्री सुधीर सक्सेना तथा श्री स्वप्निल श्रीवास्तव ने भी संक्षिप्त में अपने विचार रखे। इस कार्यक्रम में अध्यक्ष एवं अतिथियों द्वारा सम्मान चिह्न, प्रशस्ति पत्र तथा निर्धारित राशि के चेक समर्पित किए गए। कार्यक्रम का संचालन डॉ. प्रतापराव कदम ने किया। स्वागत वक्तव्य प्रज्ञान गुप्ता ने दिया। आभार नीरज पाराशर ने माना।

शमशेर सम्मान कार्यक्रम के मुख्य अतिथि वरिष्ठ कवि नरेश सक्सेना ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि भारत हो या पाकिस्तान दोनों ने अपनी भाषा छोड़ अंग्रेज़ी को अपना लिया, हमारे आरम्भ से ही बच्चे अंग्रेज़ी में पढ़ते हैं जबकि जापान, चीन, रूस जैसे देश विज्ञान, चिकित्सा और अभियांत्रिकी तक की पढ़ाई अपनी भाषा में करते हैं इसीलिए ये देश आगे हैं।

कार्यक्रम के आरंभ नें विशेष अतिथि वरिष्ठ संपादक अजय बोकिल ने कहा कि मीडिया की भूमिका समाज और राजनीति को सही दिशा देती है। कश्मीर को लेकर लोगों के संशय दूर होना चाहिए। उन्होंने कश्मीर में विक्रय के लिए ज़मीन को लेकर भ्रम को एक सच्चे किस्से के द्वारा सामने रखा। ख्यात आलोचक अजय तिवारी ने कहा मॉब लिंचिंग हो या अन्य कोई मामला सहानुभूति मृतक से होना चाहिए न कि मारने वाले के प्रति नरम दृष्टिकोण।

इस अवसर पर हुए कविता पाठ में आमंत्रित अतिथियों के अलावा शैलेन्द्र शरण, अरुण सातले, ज्योति देशमुख तथा बहादुर पटेल तथा डॉ. प्रतापराव कदम ने कविता पाठ किया।

***

-शैलेन्द्र शरण

शैलेन्द्र शरण को महाराष्ट्र से राष्ट्रभाषा भूषण सम्मान

राष्ट्रभाषा सेवी संस्था अकोला (महाराष्ट्र) द्वारा वर्ष 2019 का ''राष्ट्रभाषा भूषण सम्मान'' प्रतिष्ठित साहित्यकार शैलेन्द्र शरण को अकोला में आयोजित एक गरिमापूर्ण कार्यक्रम में प्रदान किया गया। मुक्तछंद और ग़ज़ल के क्षेत्र में उनके उल्लेखनीय कार्य और साहित्य सेवा को देखते हुए उन्हें यह सम्मान, मराठी के लब्धप्रतिष्ठित वरिष्ठ साहित्यकार श्री नारायण कुलकर्णी कवठेकर, डॉ. राम प्रकाश, डॉ. सुरेश केशवानी, कमल वर्मा द्वारा शॉल, श्रीफल, प्रशस्ति पत्र, सम्मानचिह्न तथा नगद राशि प्रदान कर किया गया। राष्ट्र भाषा सेवी समाज संस्था विगत चालीस वर्षों से हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास, प्रचार प्रसार के लिए कार्यरत है।

***

हाउस ऑफ लॉर्ड्स में गूँजी भारतीय कविताएँ

12 नवंबर को ब्रिटिश संसद के हाउस ऑफ लॉर्ड्स में टेम्स नदी की अद्भुत छटा के बीच, संस्कृति सेंटर फॉर कल्चरल एक्सीलेंस द्वारा स्वदेशी भाषाओं के लिए संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय वर्ष मनाया गया। इस अवसर पर ब्रिटेन में रहने वाले भारतीय प्रवासी सदस्यों द्वारा 20 भाषाओं में लिखी गई कविताओं को ''फैस्टून ऑफ एक्सप्रेशंस'' शीर्षक के अंतर्गत संकलित, प्रकाशित और जारी किया गया, और 18 लेखकों ने इस समारोह में उनका उत्साहपूर्वक पाठ किया। बैरोनेस वर्मा द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में जिन भावनाओं के साथ कविता पाठ हुआ, उनमें एक बहुत ही खास आकर्षण था। कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण डोगरी (टेकरी), मैथिली, सिंधी (ख़ुदावदी) भाषाओं की मूल लिपियों को उस पुस्तक में शामिल किया जाना था, जो आज दुर्लभ हैं और उनकी लिपि को सामने लाने के लिए एक विशेष प्रयास किया गया था। इस अवसर पर शिखा वार्ष्णेय द्वारा हिन्दी में एक कविता का पाठ किया गया।

असमिया और बंगाली में डॉ. भूपेन हजारिका और विश्वकवि रवींद्रनाथ टैगोर के गीतों को क्रमश: संदीप सेन और साची सेन द्वारा प्रस्तुत किया गया। दिल्ली विश्वविद्यालय से विशेष रूप से पधारे डॉ. अजीत कुमार ने मैथिली भाषा पर बात की।

उद्‌घाटन भाषण बैरोनेस वर्मा द्वारा दिया गया जिसमें उन्होंने रागसुधा विन्जामुरी द्वारा भारतीय विरासत और सांस्कृतिक छवि को बाहर के दर्शकों के सामने प्रस्तुत करने के लिए संस्कृति केंद्र के काम की सराहना की। धन्यवाद सुशील रापटवार द्वारा दिया गया।

***

क्षितिज अखिल भारतीय लघुकथा सम्मेलन

'क्षितिज' संस्था, इंदौर द्वारा द्वितीय 'अखिल भारतीय लघुकथा सम्मेलन 2019' का आयोजन दिनांक 24 नवम्बर 2019, रविवार को श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर में किया गया। यह कार्यक्रम चार विभिन्न सत्रों में आयोजित हुआ। प्रथम उद्घाटन, लोकार्पण एवम सम्मान सत्र रहा। इस सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ साहित्यकार, कला मर्मज्ञ श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय ने की।

इस सत्र में सत्र अध्यक्ष श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय को कला साहित्य सृजन सम्मान 2019, श्री सुकेश साहनी को क्षितिज लघुकथा शिखर सम्मान 2019, श्री श्याम सुंदर अग्रवाल को क्षितिज लघुकथा सेतु शिखर सम्मान 2019, श्री माधव नागदा को क्षितिज लघुकथा समालोचना सम्मान 2019, श्री कुणाल शर्मा को क्षितिज लघुकथा नवलेखन सम्मान 2019 एवं श्री हीरालाल नागर को लघुकथा शिखर सम्मान 2019 से सम्मानित किया गया। विशेष योगदान हेतु, सर्वश्री उमेश नीमा, चरण सिंह अमी, नई दुनिया के अनिल त्रिवेदी, पत्रिका अखबार की संपादक रुखसाना, दैनिक भास्कर के श्री रविंद्र व्यास, श्री प्रदीप नवीन आदि को सम्मानित किया गया। कला सहयोग के लिए वरिष्ठ कलाकार श्री संदीप राशिनकर को भी सम्मानित किया गया।

इस सत्र में पुस्तकों का विमोचन भी किया गया। क्षितिज पत्रिका के सार्थक लघुकथा अंक का विमोचन सर्वप्रथम हुआ। पुस्तक सार्थक लघुकथाएँ, इंदौर के 10 लघुकथाकारों के लघुकथा संकलन शिखर पर बैठ कर, श्री सुकेश साहनी के लघुकथा संग्रह सायबर मैन, श्री भागीरथ परिहार की पुस्तक कथा शिल्पी, सुकेश साहनी की सृजन चेतना, ज्योति जैन के लघुकथा संग्रह जलतरंग का अंग्रेज़ी अनुवाद, डॉ. अश्विनी कुमार दुबे के ग़ज़ल संग्रह कुछ अशहार हमारे भी, श्री चरण सिंह अमी की पुस्तक हिन्दी सिनेमा के अग्रज, श्री बृजेश कानूनगो की दो पुस्तकों रात नौ बजे का इंद्रधनुष व अनुगमन का विमोचन इस कार्यक्रम के लोकार्पण सत्र में हुआ। अतिथियों का स्वागत पुरुषोत्तम दुबे, अरविंद ओझा, सतीश राठी, अश्विनी कुमार दुबे, योगेन्द्र नाथ शुक्ल, आशा गंगा शिरढोनकर एवम प्रदीप नवीन ने किया। सुकेश साहनी ने अपने भाषण में लघुकथा के विचार पक्ष एवम विभिन्न विषयों पर रची जा रही लघुकथाओं के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि, लघुकथा विषय पर अपने विचार लेखक को व्यक्त करते हुए विषय के साथ न्याय करना प्राथमिकता में होना चाहिए। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय ने अपने वक्तव्य में कहा कि, साहित्य का यात्री सृजन से एकाकर हो जाता है।

कार्यक्रम का द्वितीय सत्र लघुकथा पाठ का था जिसमें 35 से अधिक लघुकथाकारों ने अपनी प्रतिनिधि रचनाओं का पाठ किया। इस सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ लघुकथाकार श्री भागीरथ परिहार ने की।

तृतीय सत्र नारी अस्मिता व लघुकथा लेखन पर मूल रूप से केंद्रित था। श्री सूर्यकांत नागर ने स्त्री पुरुष की संवेदना में भेद बताते हुए स्त्री विमर्श की आवश्यकता पर बल दिया। श्री बलराम अग्रवाल ने कहा – साहस के साथ स्त्री अस्मिता व अधिकार की बात करने के लिए लेखन से बेहतर कोई माध्यम नहीं है, वेदों से लेकर अब तक स्त्री के विमर्श में गिरावट आई है और अब धीरे-धीरे स्थितियाँ बदली है। श्री हीरालाल नागर ने अपने वक्तव्य में स्त्री विमर्श में लघुकथा की उपयोगिता व उसकी यात्रा पर प्रकाश डाला। डॉ. पुरुषोत्तम दुबे ने लघुकथा के कालखंड व शिल्प पर चर्चा की। ज्योति जैन ने स्त्री अस्मिता पर कुछ लघुकथाओं के माध्यम से अपनी बात प्रभावी ढंग से प्रस्तुत की। उन्होंने कहा कि स्त्री और पुरुष की तुलना नहीं की जा सकती।

***

धर्मपाल महेंद्र जैन को सम्मानित किया गया

कनाडा से पधारे भारतवंशी साहित्यकार धर्मपाल महेंद्र जैन का उज्जैन कवि श्री अशोक भाटी के निवास पर आयोजित कार्यक्रम में स्थानीय साहित्यकारों की उपस्थिति में साहित्य मंथन और हम हिन्दुस्तानी संस्था द्वारा शाल, श्रीफल से सारस्वत सम्मान किया गया।

कथाकार पंकज सुबीर ने आयोजन की अध्यक्षता की। पंकज सुबीर ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि एक विधा के साहित्यकारों ने दूसरी विधा के साहित्यकारों के बीच बैठना बंद कर दिया है और विधाओं के बीच आवाजाही पूर्ण रूप से बन्द हो गई है। लेकिन आज की इस व्यंग्य- कविता गोष्ठी में सभी विधाओं का संगम हैं और सारे लोग एक ही जगह बैठे हैं। हम किसी भी विधा के हों, हमारा साहित्य की अन्य विधाओं से जुड़ना ज़रूरी है और सचेत और सावधानी से साहित्य सृजन सबका लक्ष्य होना चाहिए। विशिष्ट अतिथि प्रख्यात मालवी कवि श्री शिव चौरसिया ने कहा कि उज्जैन के लिए आज का दिन आनंद का दिन है क्योंकि सभी विधाओं के कलमकार यहाँ उपस्थित हैं। असल में शब्दों का प्रकाश पर्व आज यहाँ दिखाई दे रहा है। मुख्य अतिथि साहित्यकार श्री धर्मपाल महेंद्र जैन ने कहा कि कविता का मूल स्वर विद्रोह है और रचनाकार की रचना में यह परिलक्षित होना चाहिए। कहानीकार मनीष वैद्य, आलोचक गंगा शरण, प्रकाशक शहरयार अमजद ख़ान विशिष्ट अतिथि थे। संचालन अशोक भाटी और आभार डॉ. हरीशकुमार सिंह ने व्यक्त किया।

***

एस आर हरनोट को कथाक्रम सम्मान

हिन्दी कथा साहित्य पर केन्द्रित अखिल भारतीय आयोजन कथाक्रम शृंखला का सताइसवाँ आयोजन 'कथाक्रम 2019' दिनांक 10 नवम्बर 2019 को लखनऊ में सम्पन्न हुआ। संयोजक कथाक्रम, शैलेन्द्र सागर ने सभी आमंत्रित रचनाकारों, स्थानीय लेखकों, साहित्य प्रमियों, मीडिया बंधुओं का स्वागत करते हुए अपने पिता श्री आनंद सागर की जन्म तिथि होने के कारण उन्हें स्मरण करते हुए उनकी रचनाशीलता पर प्रकाश डाला। इस वर्ष के आनंद सागर स्मृति कथाक्रम सम्मान से समादृत चर्चित लेखक एस आर हरनोट के कृतित्व पर जानी मानी आलोचक रोहिणी अग्रवाल के वक्तव्य का चर्चित लेखिका रजनी गुप्त ने पाठ किया। कथाक्रम सहयोगी मीनू अवस्थी ने सम्मान पत्र का वाचन किया। सम्मानित लेखक हरनोट ने सम्मान के प्रति आभार व्यक्त करते हुए अपने लेखकीय संघर्षों को व्यक्त किया। सत्र की मुख्य अतिथि वरिष्ठ कथाकार मैत्रेयी पुष्पा ने कहा कि हरनोट की रचनाओं में ज़मीनी जुड़ाव, आम आदमी के सरोकार और यायावरी है, इसलिए महत्त्वपूर्ण है। अध्यक्षता कर रहे वरिष्ठ लेखक रवीन्द्र वर्मा ने कहा कि हरनोट का रचना संसार रेणु के निकट है और उनकी कहानियों में प्रतिरोध है।

सम्मान सत्र के बाद 'नए भारत का नया राष्ट्रवाद : रचनात्मक हस्तक्षेप व अपेक्षाएँ' विषय पर संगोष्ठी आरम्भ हुई जिसका संचालन युवा आलोचक डॉ. रविकांत ने किया। इस सत्र के अध्यक्ष मंडल में वरिष्ठ आलोचक वीरेन्द्र यादव, प्रो. चंद्रकला त्रिपाठी थे। विषय प्रवर्तन करते हुए वीरेन्द्र यादव ने कहा कि आज धर्म निरपेक्ष परम्परा की हत्या हुई है तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का उदय हुआ है। लेखकों के सामने गंभीर चुनाती है। हमारी प्रतिरोध की परंपरा है और हमें अपनी सार्वजनिक भूमिका को समझना होगा। चर्चित कवयित्री कात्यायनी ने कहा कि आज नए राष्ट्रवाद में स्त्री नहीं है। यह पुरुषवादी सवर्ण राष्ट्रवाद है।

संगोष्ठी के दूसरे सत्र का संचालन बुंदेलखंड विवि के प्राध्यापक डॉ. मुन्ना तिवारी ने किया और अध्यक्ष मंडल में वरिष्ठ आलोचकगण राजकुमार, बजरंग बिहारी तिवारी, प्रो. काली चरन स्नेही, वरिष्ठ कथाकार अखिलेश व युवा लेखिका डॉ. शशिकला राय थीं। डॉ. राज कुमार का कहना था कि किसी अंश मात्र से किसी को राष्ट्रवादी घोषित करना उचित नहीं हैं। समाज की विविधता, बहुलता खत्म करके राष्ट्रवाद बना। उपनिवेशवाद के विरोध में पैदा राष्ट्रवाद बहुसंख्यकों का समूह है जिसमें अल्पसंख्यकों की चिन्ता नहीं होती। युवा आलोचक अनिल त्रिपाठी के अनुसार गंभीर बुनियादी सवालों से ध्यान हटाने के लिए पूँजीवाद राष्ट्रवाद पैदा कर रहा है। लखनऊ विवि के प्रोफ़ेसर डॉ. कालीचरन स्नेही ने कहा कि हमें संविधान को बचाना है तभी दलितों और स्त्रियों की स्थिति सुधरेगी। डॉ. शशिकला राय ने कहा कि हिंदुत्व राष्ट्रवाद से टकरा रहा है। जो गैर हिंदू हैं वे गैर भारतीय हैं। दलित मुद्दों के चिंतक बजरंग बिहारी तिवारी ने कहा कि मनुष्य के कुछ नैसर्गिक अधिकार होते हैं। आज राज्य, धर्म, अर्थसत्ता का गठजोड़ बन गया है। चर्चित कथाकार अखिलेश ने कहा कि राष्ट्रीय आंदोलन के द्वंद्व से राष्ट्रवाद बना। नए राष्ट्रवाद में सत्ता से सहमति असहमति के आधार पर राष्ट्रभक्त और राष्ट्रद्रोही सिद्ध किया जा रहा है।

इस संगोष्ठी में लखनऊ के अनेक लेखकों की भागीदारी रही जिनमें प्रमुख नरेश सक्सेना, विजय राय, देवेन्द्र, नवीन जोशी, प्रो. रूपरेखा वर्मा, सूर्य मोहन कुलश्रेष्ठ, सुभाष चंद कुशवाहा, सुभाष राय, शीला रोहेकर, किरण सिंह, दयानंद पांडे, प्रताप दीक्षित, महेन्द्र भीष्म आदि प्रमुख हैं।

लेखक, कवि वीरेन्द्र सारंग के धन्यवाद ज्ञापन के साथ संगोष्ठी समाप्त हुई।

***

डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल की दो पुस्तकों का लोकार्पण

ऑस्ट्रेलिया के खूबसूरत शहर पर्थ की अग्रणी साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'संस्कृति' तथा हिन्दी समाज ऑफ पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित एक सुरुचिपूर्ण एवम आत्मीय आयोजन में भारत से आए सुपरिचित लेखक डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल की दो सद्य प्रकाशित पुस्तकों 'समय की पंचायत' और 'जो देश हम बना रहे हैं' का लोकार्पण किया गया. पर्थ के मैनिंग सीनियर सिटीजन सेण्टर में आयोजित इस लोकार्पण समारोह में इस नगर के लगभग सभी सुपरिचित व नवोदित हिन्दी रचनाकार व अनेक साहित्यानुरागी उपस्थित थे। समारोह के प्रारम्भ में 'संस्कृति' के वरिष्ठ सदस्य और हिन्दी समाज ऑफ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया के पूर्व अध्यक्ष प्रो. प्रेम स्वरूप माथुर ने अतिथि लेखक डॉ दुर्गाप्रसाद अग्रवाल का संक्षिप्त परिचय दिया और उसके बाद स्वयं लेखक डॉ. अग्रवाल ने अपनी लोकार्पित होने वाली दोनों किताबों की विषय वस्तु की संक्षिप्त जानकारी दी। पुस्तकों का लोकार्पण हिन्दी समाज के अध्यक्ष अनुराग सक्सेना, हिन्दी समाज की प्रतिनिधि सुश्री रीता कौशल, हिन्दी समाज की ट्रस्टी सुश्री राज्यश्री मालवीय और प्रो. प्रेम स्वरूप माथुर ने किया। इस लोकार्पण के तुरंत बाद अतिथि डॉ दुर्गाप्रसाद अग्रवाल ने 'आज का समाज और साहित्य' विषय पर एक रोचक व्याख्यान दिया। श्री अग्रवाल ने हिन्दी साहित्य की नवीनतम प्रवृत्तियों और महत्त्वपूर्ण कृतियों की दिलचस्प अन्दाज़ में चर्चा की। सुश्री रीता कौशल ने इस व्याख्यान सत्र का संचालन किया।

***

मुंबई में राष्ट्रीय व्यंग्योत्सव का आयोजन

बैंक ऑफ़ बड़ौदा एवं ''श्रुति संवाद साहित्य कला अकादमी'' द्वारा बैंक ऑफ़ बड़ौदा के कार्पोरेट सेंटर में राष्ट्रीय ''व्यंग्योत्सव'' का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रख्यात व्यंग्यकार डॉ. सूर्य बाला ने की। विशिष्ट अतिथि ''व्यंग्ययात्रा'' नई दिल्ली के संपादक डॉ. प्रेम जनमेजय प्रारम्भ में हिन्दी में व्यंग्य साहित्य की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डाला। बैंक ऑफ़ बड़ौदा के महाप्रबंधक डॉ. जवाहर कर्नावट ने अतिथियों का स्वागत किया। श्रुति संवाद साहित्य कला अकादमी का परिचय संस्था के अध्यक्ष श्री अरविन्द राही ने दिया। इस अवसर पर व्यंग्यकार स्व. यज्ञ शर्मा के कृतित्व पर प्रेम जनमेजय द्वारा संपादित पुस्तक ''व्यंग्ययात्रा'' एवं बैंक ऑफ़ बड़ौदा की हिन्दी पत्रिका ''अक्षय्यम'' का भी लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर टीवी कलाकार राजीव निगम ने छोटे-छोटे व्यंग्य के टुकड़ों से हास्य के विविध रंग बिखेरे। व्यंग्यकार पिलकेंद्र अरोरा (उज्जैन), शांतिलाल जैन (भोपाल), सुभाष काबरा, शशांक दुबे ने बेहतरीन व्यंग्य रचना पाठ किया।

इस अवसर पर बैंक ऑफ़ बड़ौदा के महाप्रबंधक डॉ. जवाहर कर्नावट की हिन्दी सेवा के लिए विभिन्न संस्थानों द्वारा सम्मानित किया गया। इस आयोजन में बैंक ऑफ़ बड़ौदा के शीर्ष कार्यपालक, स्टाफ सदस्य तथा मुंबई की साहित्य एवं कला जगत की महत्त्वपूर्ण हस्तियाँ मौजूद थी। कार्यक्रम का संचालन श्री अनंत श्रीमाली एवं श्री संजय सिंह ने किया।

***

'सृजन संवाद' की 87वीं मासिक गोष्ठी

'सृजन संवाद' की 87वीं मासिक गोष्ठी में जाने-माने कहानीकार पंकज मित्र ने अपनी कहानी 'अच्छा आदमी' का पाठ किया। गोष्ठी में नगर के कई साहित्यकार व साहित्य प्रेमियों ने भाग लिया। गोष्ठी में मौजूद लोगों ने कहानी पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए इसे आज के समय में एक ज़रूरी कहानी बताया। डॉ. सुधीर सुमन ने प्रोफ़ेसर का अव्यवहारिक होना भी इस समस्या का एक कारण कहा। ख़यालों की दुनिया में रहने से ऐसे खतरे बढ़ जाते हैं। दीपिका ने कहा, पीढ़ियों की सोच का अंतराल भी एक मुद्दा कहानी उठाती है। डॉ. क्षमा त्रिपाठी को उषा प्रियंवदा की कहानी याद आई और उन्हें प्रोफ़ेसर परिवार में उपेक्षित लगे। अंकित को कहानी से लगा कि यह बाज़ारवाद की सेंध से परिवार टूटने को दिखाती है। वहीं डीएनएस आनंद को कहानी में बाज़ारवाद, बेचैनी और प्रतिरोध की झलक नज़र आई। प्रदीप को कहानी व्यंग्यात्मक लगी। शैलेंद्र अस्थाना ने इसे आज की त्रासदी कहा तो अखिलेश्वर पाण्डेय को यह सचेत होने का संदेश देने वाली लगी। डॉ. विजय शर्मा को कहानी सुनते हुए 'तिरिछ' की याद आई, शातिर लोग स्वस्थ व्यक्ति को पागल घोषित ही नहीं करते हैं उन्हें पागल बना भी देते हैं। उन्होंने कहा, यह बुद्धिजीवी वर्ग पर व्यंग्य करती कहानी है। गोष्ठी में डॉ. विजय शर्मा, शैलेंद्र अस्थाना, डॉ. मीनू रावत, प्रदीप शर्मा, अभिषेक गौतम, अंकित, दीपिका कुमारी, डॉ. चंद्रावती और डॉ. क्षमा त्रिपाठी, डीएनएस आनंद, डॉ. सुधीर सुमन एवं अन्य साहित्यप्रेमी उपस्थित थे।

***

'स्वर्ण रेखा बहती रही' का विमोचन

पिछले दिनों लीक से हटकर एक अनुकरणीय विमोचन समारोह राँची, झारखण्ड में संपन्न हुआ। 'स्वर्णरेखा बहती रही' काव्य पुस्तक (कवि- कामेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव निरंकुश) के विमोचन के अवसर पर झारखण्ड के प्रसिद्ध लोक कलाकार, मुकुंद नायक ने स्वर्ण रेखा बहती रही कविता का नागपुरी में अनुवाद कर अपने ग्रुप 'कुंजवन' के नर्तकों-नर्तकियों के साथ झूमर नृत्य की प्रस्तुति देकर शानदार समाँ बाँध दिया।

नागपुरी ड्रेस में बच्चियों द्वारा सजी हुई टोकरी में किताबों को आम्र पल्लव और पवित्र सखुआ (शाल) के पत्तों पर रखकर अतिथियों को विमोचन के लिए देना पर्यावरण के लिहाज से बिलकुल अनूठा और नया प्रयोग था। पन्नी रहित पुस्तक का विमोचन!

आयोजक 'झारखंड साहित्य-संस्कृति मंच' के संरक्षक उच्च न्यायालय के पूर्व जस्टिस, साहित्यकार श्री विक्रमादित्य प्रसाद, राँची विश्वविद्यालय के पूर्व विभागाध्यक्ष वयोवृद्ध श्री दुर्गाशरण शर्मा, बेंगलुरू से पधारे दार्शनिक-चिंतक, साहित्यकार श्री राशदादा राश, आरा से पधारे पूर्व जज रामेश्वर नाथ मिश्र बिहान, पूर्व उत्पाद आयुक्त तथा साहित्यकार, आलोचक निरंजन प्रसाद, जनजातीय विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष, साहित्यकार श्री गिरिधारी राम गोंझू, मुकुंद नायक, वी. पी. केशरी की शिक्षाविद पुत्री सविता केशरी, प्रशांत जी, तथा अन्य कई महत्त्वपूर्ण साहित्यकारों ने मंच के अध्यक्ष कामेश्वर निरंकुश जी की इस पुस्तक का विमोचन किया।

***

कुछ पढ़ते क्यों नहीं ? मुझे पढ़ा ?

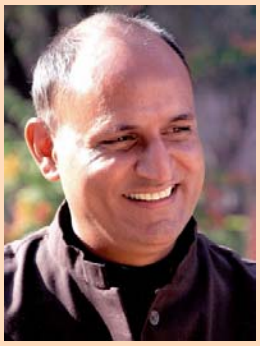

अपठित रह जाने का भय इन दिनों हर लेखक का सबसे बड़ा भय बन चुका है। अगर कबीर के समय में यह भय होता, तो शायद कबीर तो एक के बाद दूसरी कोई रचना कर भी नहीं पाते। कबीर, जो श्रुति में तो रहे, लेकिन पठित बहुत-बहुत बाद में हुए। इन दिनों हर लेखक हमेशा एक ही भय और तनाव से ग्रस्त नज़र आता है -मुझे कोई पढ़ भी रहा है या नहीं ? यदि पाठक पढ़ ले, तो तनाव यह है कि समीक्षक नहीं पढ़ रहा; समीक्षक पढ़ ले, तो तनाव यह है कि आलोचक नहीं पढ़ रहा और आलोचक भी पढ़ ले, तो तनाव यह कि संपादक नहीं पढ़ रहा। मतलब यह कि जब एक भय से पार होता है, तो दूसरा भय सामने आ जाता है। यह एक प्रकार की असुरक्षा है। साहित्यकार कभी भी इस असुरक्षा के भय से ग्रस्त नहीं रहा। यह असुरक्षा तो ग्लैमर की दुनिया की असुरक्षा होती थी, जहाँ नई पीढ़ी के आते ही पुराने होते जा रहे कलाकारों को असुरक्षा का भय सताने लगता था। साहित्यकार ने तो जो लिख दिया, वह हमेशा-हमेशा के लिए हो जाता है। यदि उसने अच्छा लिखा है, तो बरसों-बरस बाद भी उसे पढ़ा जाता रहेगा। आख़िर को आज हम कबीर और ग़ालिब को पढ़ ही तो रहे हैं। यदि आप असुरक्षित महसूस कर रहे हैं, तो इसका मतलब यह है कि आप स्वयं ही अपने लिखे हुए से संतुष्ट नहीं हैं। आपको स्वयं को ही यह लग रहा है कि जो कुछ आपने लिखा है वह पढ़े जाने के योग्य नहीं है। और इसीलिए आप अपने लिखे के पढ़े जाने का प्रयास करना प्रारंभ कर देते हैं। कई बार तो बात यहाँ तक आ जाती है कि यदि कोई दूसरा आपके लिखे को पढ़ नहीं रहा, उस पर प्रतिक्रिया नहीं दे रहा, तो आप भी उसको नहीं पढ़ते हैं। मैं पिछले वर्ष से वीडियो के माध्यम से किताबों की समीक्षा कर रहा हूँ। वैसे भी पढ़ने का शौकीन हूँ, तो यह काम मेरे लिए कुछ आसान है। मैं हमेशा दो तरह से पढ़ता हूँ। एक अपने ऑफ़िस में और एक घर पर। ऑफ़िस में एक नई किताब का अध्ययन चलता है और घर पर किसी पुरानी क्लासिक का। अभी-अभी अपनी सबसे प्रिय लेखिका इस्मत चुग़ताई कि किताब 'काग़ज़ी है पैरहन' पूरी की। पिछले दस-पन्द्रह दिनों से इसका पाठ चल रहा था। समानांतर रूप से ऑफ़िस में गीताश्री का कहानी संग्रह 'लिट्टी-चोखा' और रजनी गुप्त का उपन्यास 'नए समय का कोरस' पढ़ता रहा। यह जो पढ़ना होता है, इसके लिए समय चुराना होता है। हाँ तो बात मैं यह कर रहा था कि मैं वीडियो समीक्षा करता हूँ। अब जिन लेखकों की किताबों की मैं समीक्षा करता हूँ, उनमें से अधिकांश मेरी किताबें नहीं पढ़ते होंगे। या शायद पढ़ते भी हों। लेकिन इससे इस बात पर क्या फ़र्क़ पड़ता है कि मैंने उनकी किताब पढ़ी और मुझे पसंद आई। उन्होंने भी मेरी किताब पढ़ ली हो और शायद पसंद ही नहीं आई हो। मैं हमेशा एक सिद्धांत का पालन करता हूँ कि कपड़े की दुकान पर टँगी हुई किसी शर्ट के कलर और डिज़ाइन को देख कर भले ही आप हिकारत से नाक-भौं सिकोड़ रहे हैं मगर कोई ऐसा भी है, जो इसे देखते ही खिल उठेगा। बात 'पसंद अपनी-अपनी' की होती है। इसलिए यह सोचना भी ग़लत है कि मैंने उनके लिखे को पसंद किया तो ज़रूरी है कि वो भी मेरे लिखे को पसंद करे। यह बात ऐसी ही हो गई जैसे कि अगर मैं ग़ालिब, कबीर और रेणु को बहुत पसंद करता हूँ, तो अब इनका भी दायित्व है कि वे भी मुझे पसंद करें। हमें यह समझना होगा कि मैं इनको पसंद करता हूँ, तो ये भी किसी और को पसंद करते होंगे, और भी किसी और को करता होगा, यह दुनिया इसी प्रकार से बनी है। पसंद एक ऐसा शब्द है जिसके साथ आप 'परस्पर' का उपयोग नहीं कर सकते। परस्पर का उपयोग ही अपने आप को दूसरे पर थोपना है। जो कुछ थोपा जाएगा वह और कुछ भी हो सकता है लेकिन कम से कम साहित्य तो हो ही नहीं सकता....।

सादर आपका ही,

पंकज सुबीर

पंकज सुबीर
पी. सी. लैब, शॉप नंबर 3-4-5-6,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के
सामने, सीहोर, मप्र, 466001
मोबाइल : 9977855399
ईमेल : subeerin@gmail.com

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2020
शिवना प्रकाशन की नई पुस्तकें

विचार और समय
सुधा ओम ढींगरा
निबंध

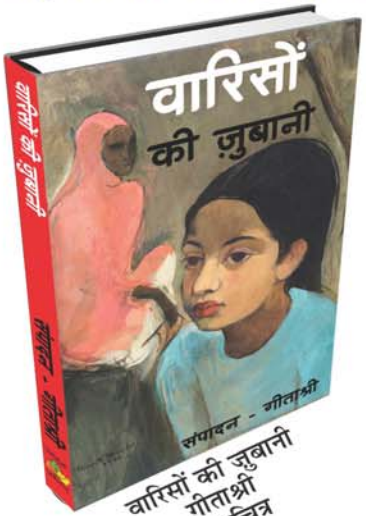

वारिसों की ज़ुबानी
गीताश्री
रेखाचित्र

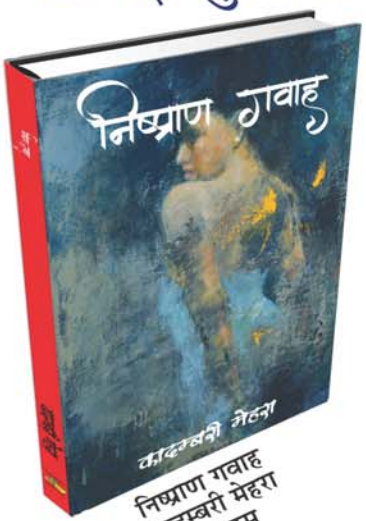

निष्प्राण गवाह
कादम्बरी मेहरा
उपन्यास

निन्यानवे का फेर
ज्योति जैन
लघुकथा

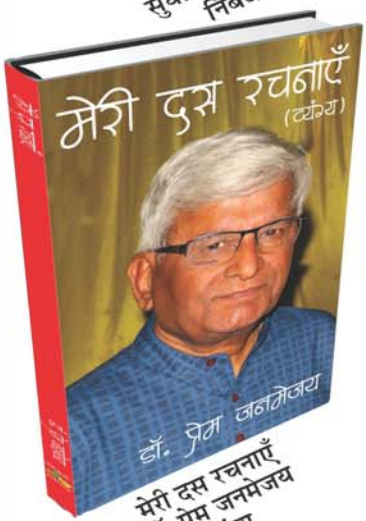

मेरी दस रचनाएँ
डॉ. प्रेम जनमेजय
व्यंग्य

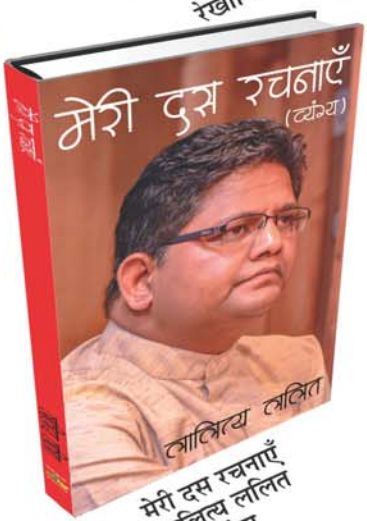

मेरी दस रचनाएँ
लालित्य ललित
व्यंग्य

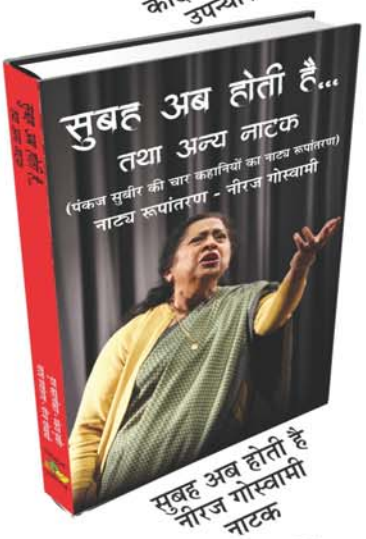

सुबह अब होती है
नीरज गोस्वामी
नाटक

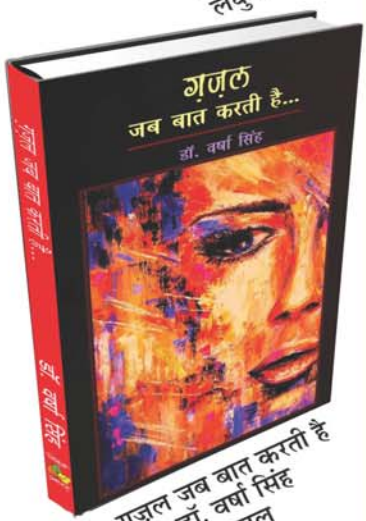

ग़ज़ल जब बात करती है
डॉ. वर्षा सिंह
ग़ज़ल

ख़ुद से गुजरते हुए
संगीता कुजरा टाक
कविता

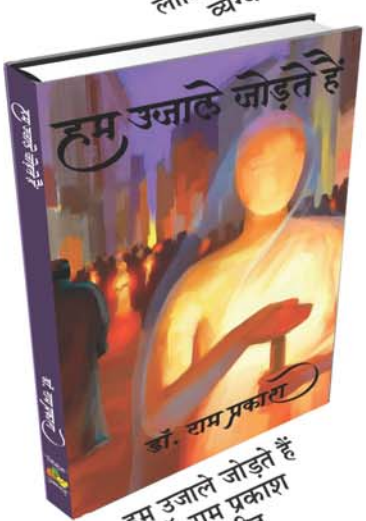

हम उजाले जोड़ते हैं
डॉ. राम प्रकाश
नवगीत

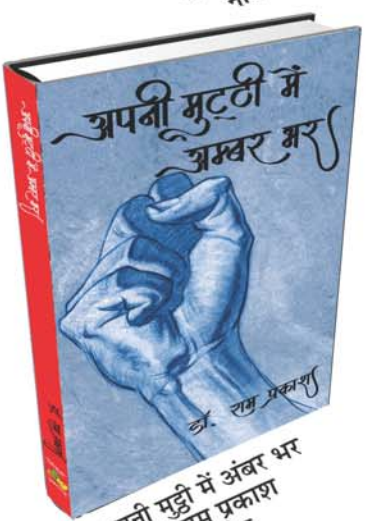

अपनी मुट्ठी में अंबर भर
डॉ. राम प्रकाश
नवगीत

उन्हें गीत दो
डॉ. राम प्रकाश
नवगीत

शिवना प्रकाशन

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने
सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan

शिवना प्रकाशन की पुस्तकें सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर

amazon http://www.amazon.in
flipkart http://www.flipkart.com
Paytm https://www.paytm.com
ebay http://www.ebay.in

दिल्ली में पुस्तकें प्राप्त करें : हिन्दी बुक सेंटर, 4/5 आसफ अली रोड
फोन : 011-23286757 http://www.hindibook.com

Vibhom Swar ● Quarterly ● January-March 2020 ● RNI No. MPHIN/2016/70609 ● ISSN2455-9814

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन अमेरिका द्वारा मध्यप्रदेश के सीहोर ज़िले में सीहोर तथा आष्टा में चलाए जा रहे आर्थिक रूप से कमज़ोर परिवार की बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण योजना के तहत स्थापित प्रशिक्षण केन्द्रों पर आयोजित कुछ कार्यक्रम

सीहोर में चलाए जा रहे निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त कर रही बालिकाओं को मार्गदर्शन प्रदान किया दिल्ली से पधारीं ख्यात कथाकार, उपन्यासकार, पत्रकार तथा संपादक गीताश्री जी ने। गीताश्री जी को फ़ाउण्डेशन की ओर से स्मृति चिह्न भी प्रदान किया गया।

सीहोर में चलाए जा रहे निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त कर रही बालिकाओं को मार्गदर्शन प्रदान किया कैनेडा से पधारे ख्यात व्यंग्यकार, कवि धर्मपाल महेंद्र जैन जी ने। इस अवसर पर श्री जैन को फ़ाउण्डेशन की ओर से सम्मानित भी किया गया।

सीहोर में चलाए जा रहे निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त कर रही बालिकाओं को सीहोर ज़िला पुलिस तथा दैनिक भास्कर समाचार पत्र की ओर से सायबर क्राइम से बचने संबंधी पुस्तिका अति. पुलिस अधीक्षक श्री समीर यादव ने प्रदान की।

अतिरिक्त एसपी समीर यादव ने बालिकाओं को जरा सी सावधानी की दी जानकारी

भास्कर संवाददाता | सीहोर

बुधवार को बस स्टैंड स्थित पीसी लैब पर एक कार्यशाला कार्यशाला में एडिशनल एसपी समीर यादव और साहित्यकार पंकज सुबीर ने बालिकाओं को कम्प्यूटर, इंटरनेट तथा मोबाइल के माध्यम से हो रहे अपराधों के बारे में बताया। श्री यादव ने कहा कि इन दिनों हमारे बारे में सारी जानकारी हमारे स्मार्ट फ़ोन में उपलब्ध रहती है, जिसे यहां से कोई भी प्राप्त कर सकता से सीहोर पुलिस ने दैनिक भास्कर के साथ मिलकर इस पुस्तिका का प्रकाशन किया है, जिसमें सायबर अपराधों के बारे में विस्तार से जानकारी दी गई है। साथ ही उनसे बचने के लिए आवश्यक जरा सी सावधानी के बारे में बताया गया है। इसलिए इसका नाम भी यही है। पंकज सुबीर ने बालिकाओं को

सीहोर में चलाए जा रहे निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त कर रही बालिकाओं को सायबर क्राइम तथा उससे बचने की जानकारी अनुविभागीय पुलिस अधिकारी सुश्री मंजु चौहान ने प्रदान की।

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-695918, Mobile 09584425995, 07828313926, 09806162184

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स,ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।